उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

जुलाई-सितम्बर, 2016

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
इफको टोकियो जनरल इंश्योरेंस कंपनी **बनाम** अजय ठाकुर और अन्य	107
कुन्दन सिंह और अन्य **बनाम** धेरु और अन्य	94
गोरधन सिंह और एक अन्य **बनाम** कन्हैयालाल	10
गोरधन सिंह और एक अन्य **बनाम** रतनलाल (देखिए – पृष्ठ संख्या 10)	
बजाज आलियांज जनरल इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड **बनाम** धन्नाराम और अन्य	27
बजाज आलियांज जनरल इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड **बनाम** शम्भूसिंह और अन्य (देखिए – पृष्ठ संख्या 27)	
बसोली (श्रीमती) (मृत) **मार्फत** इसके विधिक प्रतिनिधिगण श्री विजय कुमार और अन्य **बनाम** भगतू राम और अन्य	78
यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड **बनाम** श्रीमती कृष्णादेवी और अन्य	41
श्री राकेश कश्यप पुत्र श्री हरि दास और अन्य **बनाम** हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य	112
श्री राम जनरल इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड **बनाम** योगेश ठाकोर और अन्य	48
सत पाल और अन्य **बनाम** श्री लक्षी राम और एक अन्य	59
सुमित मनचंदा **बनाम** अपीली किराया अधिकरण, कोटा और अन्य	1
स्वर्णा देवी (श्रीमती) **बनाम** रुको देवी (श्रीमती) और अन्य	126

पृष्ठ संख्या

हिमाचल सड़क परिवहन निगम **बनाम** निशा देवी (श्रीमती) 120

संसद् के अधिनियम

रानी लक्ष्मी बाई केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय अधिनियम, 2014 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ 22 – 54

जुलाई-सितम्बर, 2016 (संयुक्तांक)

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

प्रधान संपादक
डा. मिथिलेश चंद्र पांडेय

संपादक
कमला कांत

महत्वपूर्ण निर्णय

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 11 [सपठित कंटूनमेंट निधि सेवक नियम, 1937 – नियम 5ख(1) और 5ख(2)] – पूर्व न्याय – जहां किसी रिट याचिका का निपटान उन्हीं आधारों पर पहले किया जा चुका हो, वहां याची द्वारा उन्हीं तथ्यों और परिस्थितियों पर रिट याचिका उच्च न्यायालय के समक्ष फाइल नहीं की जा सकती क्योंकि दूसरी रिट याचिका पूर्व न्याय की अवधारणा द्वारा वर्जित है ।

श्री राकेश कश्यप पुत्र श्री हरि दास और अन्य बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य** 112

संसद् के अधिनियम

रानी लक्ष्मी बाई केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय अधिनियम, 2014 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ (22) – (54)

पृष्ठ संख्या 1 – 140 **(2016) 2 सि. नि. प.**

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका – जुलाई-सितम्बर, 2016 (संयुक्तांक) (पृष्ठ संख्या 1 – 140)

संपादक-मंडल

डा. जी. नारायण राजू,
सचिव, विधायी विभाग

डा. एन. आर. बट्टू, संयुक्त सचिव एवं विधायी परामर्शी, विधायी विभाग

डा. बी. एन. मणि,
सेवानिवृत्त अपर विधि सलाहकार,
विधि मंत्रालय

डा. सुरेन्द्र कुमार शर्मा, प्रिन्सिपल, विधि विभाग, डी आई आर डी, गुरु गोविंद सिंह इन्द्रप्रस्थ विश्वविद्यालय

डा. ऋषिपाल सिंह,
सेवानिवृत्त संयुक्त सचिव एवं विधायी परामर्शी, राजभाषा खंड

श्री कृष्ण गोपाल अग्रवाल,
सेवानिवृत्त संपादक, वि.सा.प्र.

श्री अनुराग दीप,
एसोसिएट प्रोफेसर,
भारतीय विधि संस्थान भवन

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय,
प्रधान संपादक

श्री विनोद कुमार आर्य,
संपादक

श्री कमला कान्त,
संपादक

सहायक संपादक : सर्वश्री अविनाश शुक्ला, असलम खान और पुण्डरीक शर्मा

उप-संपादक : सर्वश्री महीपाल सिंह और जसवन्त सिंह

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 36

वार्षिक : ₹ 135

© 2016 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रकाशन और विक्रय प्रबंधक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय (विधायी विभाग), भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 17552/69

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं – उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिकाओं में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः चयनित सिविल और दांडिक निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । इन पत्रिकाओं को और अधिक आकर्षक बनाने के लिए इनमें जनवरी, 2010 के अंक से महत्वपूर्ण केन्द्रीय अधिनियमों का प्राधिकृत हिन्दी पाठ पाठकों की सुविधा के लिए शृंखलाबद्ध रूप से प्रकाशित किया जा रहा है । तीनों निर्णय पत्रिकाओं की वार्षिक कीमत केवल ₹ 495/- है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 225/- है, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 135/- है और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 135/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें ।

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रय के लिए उपलब्ध विधि पाठ्य पुस्तकों की सूची

	पुस्तक का नाम	लेखक	पृष्ठ सं.	कीमत (₹)
1.	भारत का विधिक इतिहास	श्री सुरेन्द्र मधुकर	410	30.00
2.	माल विक्रय और परक्राम्य लिखत विधि	डा. एन. पी. परांजपे	371	40.00
3.	वाणिज्य विधि	डा. आर. एल. भट्ट	630	108.00
4.	अपकृत्य विधि के सिद्धान्त (तृतीय संस्करण)	श्री शर्मन लाल अग्रवाल	357	40.00
5.	अंतर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय (द्वितीय संस्करण)	डा. एस. सी. खरे	273	115.00
6.	मानव अधिकार	डा. शिवदत्त शर्मा	340	120.00
7.	दण्ड प्रक्रिया संहिता	न्या. महावीर सिंह	840	200.00

पुस्तकों की सूची जिन पर छूट देने की स्वीकृति प्राप्त की गई है ।

	पुस्तक का नाम	लेखक	पृष्ठ सं.	मूल दर (₹)	संशोधित दर (₹)
1.	संविदा विधि (द्वितीय संस्करण)	डा. रामगोपाल चतुर्वेदी	552	275.00	137.00
2.	श्रम विधि (तृतीय संस्करण)	श्री गोपी कृष्ण अरोड़ा	658	452.00	226.00
3.	चिकित्सा न्यायशास्त्र और विष विज्ञान (तृतीय संस्करण)	डा. सी. के. पारिख अनुवादक डा. एन. के. पटौरिया	969	293.00	146.00
4.	आधुनिक पारिवारिक विधि	श्री राम शरण माथुर	767	429.00	214.00
5.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय)	संकलन संपादन – ब्रह्मदेव चौबे	209	225.00	112.00
6.	हिन्दू विधि (द्वितीय संस्करण)	डा. रवीन्द्र नाथ	617	425.00	212.00
7.	भारतीय दंड संहिता	डा. रवीन्द्र नाथ	696	741.00	370.00
8.	भारतीय भागीदारी अधिनियम (द्वितीय संस्करण)	श्री माधव प्रसाद वशिष्ठ	272	165.00	82.00
9.	प्रशासनिक विधि (तृतीय संस्करण)	डा. कैलाश चन्द्र जोशी	635	200.00	100.00
10.	विधिक उपचार (द्वितीय संस्करण)	डा. एस. के. कपूर	414	311.00	155.00
11.	विधि शास्त्र	डा. शिवदत्त शर्मा	501	580.00	377.00

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59)

– धारा 163क और 173 – दुर्घटना – प्रतिकर के लिए दावा – बीमा कंपनी द्वारा अपने दायित्व से इनकार करना – जहां बीमा कंपनी, बीमाकृत के किसी दोष के कारण घटित दुर्घटना में प्रतिकर संदाय करने के अपने दायित्व से इनकार करती है तथापि, यदि उसे प्रतिकर संदाय करने के लिए दायी ठहराया जाता है और उसके द्वारा प्रतिकर संदत्त कर दिया जाता है तो वह बीमा पालिसी की शर्तों और निबंधनों के भंग के आधार पर बीमाकृत से ऐसी प्रतिकर धनराशि वसूल सकती है ।

बजाज आलियांज जनरल इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड बनाम **धन्नाराम और अन्य** 27

– धारा 163क और 173 – दुर्घटना – प्रतिकर के लिए दावा – पक्षकारों की प्रास्थिति – आय अर्जित करने के साधन – आश्रितों की संख्या – मानक गुणांक – यदि न्यायालय द्वारा प्रतिकर अधिनिर्णीत करते समय दावेदार की प्रास्थिति उसके आय अर्जित करने के साधन, आश्रितों की संख्या के साथ ही मानक गुणांक लागू करते हुए, प्रतिकर अधिनिर्णीत किया जाता है तो ऐसा प्रतिकर विधिमान्य और युक्तियुक्त होगा और इसमें हस्तक्षेप करना अपेक्षित नहीं होगा ।

श्री राम जनरल इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड बनाम **योगेश ठाकोर और अन्य** 48

– धारा 173 – दुर्घटना – प्रतिकर के लिए दावा – बीमा कंपनी द्वारा अपने दायित्व से इनकार करना – जहां बीमा कंपनी, बीमाकृत के किसी दोष के कारण घटित दुर्घटना में प्रतिकर संदाय करने के अपने दायित्व से इनकार करती है तथापि, यदि उसे प्रतिकर संदाय करने के

पृष्ठ संख्या

लिए दायी ठहराया जाता है और उसके द्वारा प्रतिकर संदत्त कर दिया जाता है तो वह बीमा पालिसी की शर्तों और निबंधनों के भंग के आधार पर बीमाकृत से ऐसी प्रतिकर धनराशि वसूल सकती है ।

यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड बनाम **श्रीमती कृष्णादेवी और अन्य** 41

– धारा 173 – प्रतिकर – दावेदारों द्वारा बीमाकर्ता/अपीलार्थी-इफको टोकिया जनरल इंश्योरेंस कंपनी से प्रतिकर की ईप्सा किया जाना – यदि बीमाकर्ता/अपीलार्थी कंपनी ने यह साबित नहीं किया है कि दुर्घटना के समय पर यान बीमाकृत नहीं था और ड्राइवर का ड्राइविंग लाइसेंस विधिमान्य नहीं था तो बीमाकर्ता/अपीलार्थी-कंपनी दावेदारों के पक्ष में प्रतिकर की रकम उन्मुक्त किए जाने के लिए दायी है ।

इफको टोकियो जनरल इंश्योरेंस कंपनी बनाम **अजय ठाकुर और अन्य** 107

– धारा 173 – अपील – दो वाहनों के टक्कर से कारित दुर्घटना – दोनों वाहनों के चालकों की अंशदायी उपेक्षा साबित होना – चालकों के पास वाहन चालन के समय वैध चालन अनुज्ञप्ति होना – बीमा कम्पनी का दायित्व अभिनिर्धारित होना – प्रतिकर की रकम कम होने के आधार पर चुनौती देना – चुनौती खारिज होना – यदि यह साबित हो जाता है कि दुर्घटना, दो वाहनों के टक्कर से कारित हुई थी और उसमें दोनों वाहनों के चालक की उपेक्षा थी, तो अंशदायी उपेक्षा के आधार पर दोनों चालकों को दोषी मानते हुए निर्धारित युक्तियुक्त प्रतिकर को इस आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती है कि प्रतिकर अल्प या कम है यदि प्रतिकर निर्धारित करने के सभी मानकों को कठोरतः पालन किया गया है ।

हिमाचल सड़क परिवहन निगम बनाम **निशा देवी (श्रीमती)** 120

पृष्ठ संख्या

राजस्थान किराया नियंत्रण अधिनियम, 2008

– धारा 15(8) – वाणिज्यिक उपयोग के लिए किराए पर दिए गए परिसर से बेदखली के लिए छह मास की कानूनी अवधि विहित की गई है – उच्च न्यायालय को अपनी असाधारण शक्ति का प्रयोग करते हुए बेदखली की समय सीमा बढ़ाने के लिए यह सुनिश्चित करना चाहिए कि किराएदार द्वारा मकान-मालिक के परिसर को उपयोग व अधिभोग में लेने के लिए उसे प्रचलित क्षेत्र के किराए के अनुसार पर्याप्त प्रतिकर के रूप में रकम का संदाय किया गया है ।

सुमित मनचंदा बनाम **अपीली किराया अधिकरण, कोटा और अन्य** 1

संविधान, 1950

– अनुच्छेद 226 [सपठित राजस्थान किराया नियंत्रण अधिनियम, 2008 की धारा 15(8)] – बेदखली का आदेश – वाणिज्यिक उपयोग के लिए किराए पर दिए गए परिसर को खाली कराने के लिए छह मास की कानूनी अवधि – यदि कोई किराएदार असाधारण कठिनाइयों का सामना कर रहा है तभी उच्च न्यायालय असाधारण शक्तियों का प्रयोग करते हुए बेदखली समय को बढ़ा सकती है जहां मामले में किराएदार द्वारा असाधारण कठिनाइयों का अभिवचन नहीं किया गया है वहां पर कानूनी अवधि को बढ़ाया नहीं जा सकता क्योंकि इससे मकान-मालिक को परेशानी का सामना करना पड़ेगा ।

सुमित मनचंदा बनाम **अपीली किराया अधिकरण, कोटा और अन्य** 1

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5)

– धारा 11 [सपठित कंटूनमेंट निधि सेवक नियम, 1937 – नियम 5ख(1) और 5ख(2)] – पूर्व न्याय – जहां

पृष्ठ संख्या

किसी रिट याचिका का निपटान उन्हीं आधारों पर पहले किया जा चुका हो, वहां याची द्वारा उन्हीं तथ्यों और परिस्थितियों पर रिट याचिका उच्च न्यायालय के समक्ष फाइल नहीं की जा सकती क्योंकि दूसरी रिट याचिका पूर्व न्याय की अवधारणा द्वारा वर्जित है ।

श्री राकेश कश्यप पुत्र श्री हरि दास और अन्य बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य** 112

– धारा 100 – द्वितीय अपील में विधि और तथ्य के विवाद्यक प्रश्न – दोनों प्रकार के प्रश्नों पर विचार करना – विधि के प्रश्न पर विचार करने की अधिकारिता को चुनौती देना – चुनौती मंजूर होना – यदि द्वितीय अपील में विवाद्यक प्रश्न दोनों तथ्य और विधि विषयक प्रश्न हैं तो विधि के प्रश्नों पर तभी विचार किया जा सकता है जब कि वह सारवान् प्रकृति के प्रश्न हों अन्यथा नहीं ।

बसोली (श्रीमती) (मृत) मार्फत **इसके विधिक प्रतिनिधिगण श्री विजय कुमार और अन्य** बनाम **भगतू राम और अन्य** 78

– धारा 100 [सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम, 1882 की धारा 53क तथा विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 17 और 19 एवं परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 54] – द्वितीय अपील – सम्पत्ति का विक्रय करार – परिसीमा अवधि के भीतर विक्रय करार का विनिर्दिष्ट पालन नहीं कराना – सम्पत्ति तीसरे पक्षकार को विक्रय करना – तीसरा पक्षकार सद्भाविक क्रेता होना – पश्चात्वर्ती विक्रय करार वैध और विधिमान्य होना – यदि कोई सम्पत्ति विक्रय करार द्वारा क्रेता को विक्रय की जाती है किन्तु वह परिसीमा अवधि के भीतर अपने भाग का विनिर्दिष्ट पालन नहीं करता है तो विक्रेता उसे अभिखंडित कर सकता है और उस सम्पत्ति को किसी तीसरे पक्षकार

पृष्ठ संख्या

को विक्रय कर सकता है यदि तीसरा पक्षकार सद्भाविक क्रेता है तो यह विक्रय करार वैध और विधिमान्य होगा ।

सत पाल और अन्य बनाम **श्री लक्षी राम और एक अन्य** 59

– धारा 100 और आदेश 39 [सपठित सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम, 1882 की धारा 5 और विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 12] – अपील – संपत्ति विक्रय का करार – पक्षकारों द्वारा करार के अनुसरण में सम्पत्तियों का कब्जा नहीं सौंपा जाना – विनिर्दिष्ट अनुपालन – प्रतिषेधात्मक व्यादेश के लिए वाद – यदि किसी सम्पत्ति के बारे में पक्षकारों के बीच आपसी करार द्वारा विक्रय विलेख अभिलिखित किया जाता है तो उक्त विक्रय करार के अनुसरण में ही उक्त सम्पत्ति का कब्जा विनिर्दिष्टतः अनुज्ञेय होता है – यदि कोई पक्षकार इसका पालन नहीं करता है तो पीड़ित पक्षकार उक्त करार के अनुपालन में उक्त संपत्ति का कब्जा प्राप्त करने का हकदार होता है ।

गोरधन सिंह और एक अन्य बनाम **कन्हैयालाल** 10

– धारा 100 और आदेश 39 – द्वितीय अपील – वाद भूमि पर कब्जे सहित हक साबित होना – वाद भूमि में हस्तक्षेप करने से अवरुद्ध करने के लिए व्यादेश की डिक्री पारित होना – डिक्री की विधिमान्यता को चुनौती देना – यदि अभिलेखों पर के मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्यों द्वारा वाद भूमि पर कब्जे सहित हक साबित कर दिया जाता है तो विरोधी पक्षकार को उस भूमि में हस्तक्षेप करने से अवरुद्ध करते हुए पारित स्थायी व्यादेश की डिक्री विधिमान्य और युक्तिसंगत होगी और ऐसी डिक्री की विधिमान्यता के बारे में चुनौती अमान्य होगी ।

कुन्दन सिंह और अन्य बनाम **धेरु और अन्य** 94

पृष्ठ संख्या

– धारा 151 तथा आदेश 6 का नियम 17 और आदेश 22 का नियम 3 और 4 – मृत वादी के विधिक प्रतिनिधियों द्वारा अभिवचनों का संशोधन – विचारण न्यायालय द्वारा संशोधन को मंजूर करना और प्रथम अपील न्यायालय द्वारा अभिपुष्टि किया जाना – द्वितीय अपील – कोई व्यक्ति जिसे मृत पक्षकार के विधिक प्रतिनिधि के रूप में पक्षकार बनाया जाता है वह केवल ऐसे आक्षेप कर सकता है जो स्वयं मृत पक्षकार कर सकता था और चूंकि मृत वादी के विधिक प्रतिनिधियों (प्रत्यर्थियों) द्वारा ईप्सित वादपत्र में संशोधन ऐसा नहीं था जिसकी स्वयं मृत वादी मांग नहीं कर सकता था, इसलिए दोनों निचले न्यायालयों द्वारा अनुज्ञात संशोधन को गलत या अवैध नहीं कहा जा सकता है ।

स्वर्णा देवी (श्रीमती) बनाम **रुको देवी (श्रीमती) और अन्य** 126

सुमित मनचंदा

बनाम

अपीली किराया अधिकरण, कोटा और अन्य

तारीख 13 अप्रैल, 2015

मुख्य न्यायमूर्ति सुनील अम्बवानी और न्यायमूर्ति प्रकाश गुप्ता

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 [सपठित राजस्थान किराया नियंत्रण अधिनियम, 2008 की धारा 15(8)] – बेदखली का आदेश – वाणिज्यिक उपयोग के लिए किराए पर दिए गए परिसर को खाली कराने के लिए छह मास की कानूनी अवधि – यदि कोई किराएदार असाधारण कठिनाइयों का सामना कर रहा है तभी उच्च न्यायालय असाधारण शक्तियों का प्रयोग करते हुए बेदखली समय को बढ़ा सकती है जहां मामले में किराएदार द्वारा असाधारण कठिनाइयों का अभिवचन नहीं किया गया है वहां पर कानूनी अवधि को बढ़ाया नहीं जा सकता क्योंकि इससे मकान-मालिक को परेशानी का सामना करना पड़ेगा ।

राजस्थान किराया नियंत्रण अधिनियम, 2008 – धारा 15(8) – वाणिज्यिक उपयोग के लिए किराए पर दिए गए परिसर से बेदखली के लिए छह मास की कानूनी अवधि विहित की गई है – उच्च न्यायालय को अपनी असाधारण शक्ति का प्रयोग करते हुए बेदखली की समय सीमा बढ़ाने के लिए यह सुनिश्चित करना चाहिए कि किराएदार द्वारा मकान-मालिक के परिसर को उपयोग व अधिभोग में लेने के लिए उसे प्रचलित क्षेत्र के किराए के अनुसार पर्याप्त प्रतिकर के रूप में रकम का संदाय किया गया है ।

वर्तमान मामले में, उसी परिसर में दुकान सं. 4 और 5 प्रत्यर्थी मकान-मालिक के स्वामित्व में थी जिन्हें उसके द्वारा वर्ष 2003 में बेदखली याचिका फाइल करने से पूर्व बेच दी गई थी और यह निष्कर्ष निकाला गया था कि ये दोनों दुकानें उसके कुटुंब के सदस्यों से संबंधित हैं जिन्हें उनके द्वारा बेचा गया था । यह बात गलत है क्योंकि ये दोनों दुकानें

मकान-मालिक के स्वामित्व में थी । यह भी अभिवाक् किया गया कि मकान-मालिक का उसी परिसर में 9 × 30 वर्ग फुट खुली जगह भी स्वामित्व में थी जिस पर वह दुकान का निर्माण कर सकता था, किराया अपीली अधिकरण ने यह निष्कर्ष अभिलिखित करके विधि में गलती की है कि यह 9 फुट चौड़ी जगह जहां पर 2-1/2 फुट चौड़ी सीढ़ी है और बाकी भाग आकाश के नीचे खुला हुआ है । मकान-मालिक द्वारा सन्निर्माण करने के लिए और उसे अपने अधिभोग में लेने के लिए खुली जगह का इस्तेमाल किया जा सकता है । अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा यह दलील दी गई है कि किराया अपीली अधिकरण के समक्ष कार्रवाइयां लंबित रहने के दौरान मकान-मालिक ने 9 × 30 वर्ग फुट खुली जगह बेच दी थी । विक्रय विलेख में उसने यह स्वीकार किया है कि दुकान सं. 4 और 5 उसके द्वारा भी बेची गई थी । अतिरिक्त साक्ष्य के लिए आवेदन को अस्वीकार करने के पश्चात् सुसंगत साक्ष्य की उपेक्षा करते हुए अभिवचनों के आधार पर भी निष्कर्ष अभिलिखित किए गए थे और बेदखली के लिए याचिका मंजूर की गई थी । उससे व्यथित होकर विशेष अपील फाइल की गई । न्यायालय द्वारा विशेष अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – कानूनों में वाणिज्यिक उपयोग के लिए दिए गए परिसर को खाली करने के लिए छह मास के समय का उपबंध किया गया है जिसके दौरान बेदखली डिक्री का निष्पादन नहीं किया जाता है, समय का विस्तार करने की शक्तियां संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय द्वारा साधारणतया प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि इससे कानूनी अवधि का विस्तार ही नहीं है परन्तु मकान-मालिक की परेशानियों का कारण भी हो जाती हैं । चूंकि न्यायालय द्वारा मंजूर किया गया समय व्यवहारिक रूप से किराएदारों के सभी मामलों में होता है और कुछ याची समय चाहने के लिए ही याचिका फाइल करते हैं । यह आवश्यक है कि इस संबंध में कुछ दिशा निर्देश का उपबंध किया जाए – (i) भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन असाधारण शक्तियां परिसरों को खाली कराने के लिए कानूनी अवधि के बाहर मंजूर की जाती हैं चाहे ऐसे परिसर आवासीय या वाणिज्यिक हों । ऐसा किसी मामले में प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए । मामले के मकान-मालिक के प्रतिनिधित्व के अभाव में ऐसा समय मंजूर नहीं किया जा सकता, यदि कोई केवियट मकान-मालिक द्वारा फाइल नहीं की गई है तब भी उसकी अनुपस्थिति में समय मंजूर नहीं किया जा सकता । (ii) असाधारण शक्तियों का प्रयोग करते हुए कानूनों

द्वारा नियत की गई कानूनी अवधि से परे समय का विस्तार, उच्च न्यायालय को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि समय मंजूरी का अभिवाक् किसी असाधारण कठिनाई को दूर करने के लिए आवश्यक है जो परिसरों को खाली कराने से संबंधित है । उच्च न्यायालय को ऐसे निष्कर्षों को अभिलिखित करना चाहिए और अपने समाधान के लिए अभिलेख पर आवश्यक तथ्यों को दिया जाना चाहिए । (iii) किराएदार द्वारा कानूनी समय के परे किसी समय की ईप्सा करना कार्यवाहियों में उसके द्वारा किए गए स्थगन के बारे में अभिवचनों में आवश्यक रूप से दिया जाना चाहिए जो मामले किराया अधिकरण/किराया अपीली अधिकरण और उच्च न्यायालय में लंबित था और मकान-मालिक द्वारा किए गए स्थगनों की संख्या में इस बात का उल्लेख होना चाहिए । न्यायालय की ओर से किराएदार द्वारा कार्रवाइयों को करने में बिताई गई कुल अवधि को गणना में लिया जाना चाहिए और मकान-मालिक द्वारा कार्यवाहियों में विलंब करने में किए गए प्रयासों की संख्या भी लेनी चाहिए । सामान्य पद्धति और अनुभव के आधार पर किराएदार बेदखली की डिक्री से बचने के लिए अत्यधिक समय लेकर कार्रवाइयों में घृणा उत्पन्न होने तक विलंब करता है । बेदखली का आदेश किराएदारी की संविदा को कानूनी रूप से समाप्त करता है और इस प्रकार परिसरों को खाली कराने के लिए समय चाहना यदि पूर्वोक्त तीन शर्तों से इस बात का समाधान होता है तो न्यायालय को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि मकान-मालिक को परिसरों का अधिभोग किए जाने के लिए पर्याप्त रकम का प्रतिफल दिया जाना चाहिए जिसके लिए न्यायालय परिसरों को अधिभोग में लेने के लिए किराएदार को अनुज्ञात करता है । परिसर को अधिभोग में लेने के लिए प्रतिकरों का प्रचलित किराए के निबंधनों में उपाय किए जाने चाहिए जिस पर ऐसे परिसर उस क्षेत्र में लिए जाते हैं । (पैरा 15 और 16)

पूर्वोक्त विद्यमान शर्तों में से कोई शर्त विद्यमान है और इस मामले में किसी असाधारण कठिनाई के संबंध में, कोई अभिवचन किया गया है जो किराएदार के प्रतिकूल होगी तथा निचले न्यायालयों द्वारा उन पर विचार नहीं किया गया था । कार्रवाइयां किराया अधिकरण, किराया अपीली अधिकरण और विद्वान् एकल न्यायाधीश के समक्ष बारह वर्षों की अवधि से लंबित है । किराएदार ने इस बारे में कोई अभिवाक् नहीं किया है कि उसने कार्यवाहियों को विलम्ब करने के लिए कितने स्थगन लिए है । (पैरा 17)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2010] (2010) 13 एस. सी. सी. 1 = ए. आई.
आर. 2011 एस. सी. (सी. आई. वी.) 1206 :
संदुर मैगनीज एंड आयरन ओर्स लिमिटेड
बनाम **कर्नाटक राज्य** । 14

रिट (सिविल) अधिकारिता : 2013 के एस. बी. सिविल रिट याचिका सं. 472 से उद्भूत 2015 की डी. बी. सिविल विशेष अपील (रिट) सं. 266.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री एन. के. मालू, ज्येष्ठ काउंसेल साथ में वी. के. तमोलिया

प्रत्यर्थी की ओर से –

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायमूर्ति सुनील अम्बवानी ने दिया ।

मु. न्या. अम्बवानी – हमने अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल को सुना ।

2. यह 2015 की डी. बी. सिविल विशेष अपील (रिट) सं. 266 विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा तारीख 15 जनवरी, 2015 को पारित किए गए निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है जिस पर उन्होंने किराया अपीली अधिकरण कोटा द्वारा पारित किए गए आदेश को कायम रखा था । मकान-मालिक की सद्भाविक आवश्यकताओं के आधार पर विवादित दुकान से बेदखली के लिए फाइल की गई याचिका मंजूर की गई थी ।

3. किराया अपीली अधिकरण द्वारा यह निष्कर्ष अभिलिखित किया गया था कि सद्भावी जरूरतों से अलग जिस बात को साबित किया गया है, किराएदार ने भूमि के स्वामित्व से भी इनकार किया था जो बेदखली आदेश पारित करने के लिए पर्याप्त एकमात्र आधार था ।

4. यह निवेदन किया गया कि उसी परिसर में दुकान सं. 4 और 5 प्रत्यर्थी मकान-मालिक के स्वामित्व में थी जिन्हें उसके द्वारा वर्ष 2003 में बेदखली याचिका फाइल करने से पूर्व बेच दी गई थी और यह निष्कर्ष निकाला गया था कि ये दोनों दुकानें उसके कुटुंब के सदस्यों से संबंधित हैं

जिन्हें उनके द्वारा बेचा गया था । यह बात गलत है क्योंकि ये दोनों दुकानें मकान-मालिक के स्वामित्व में थी । यह भी अभिवाक् किया गया कि मकान-मालिक का उसी परिसर में 9 × 30 वर्ग फुट खुली जगह भी स्वामित्व में थी जिस पर वह दुकान का निर्माण कर सकता था, किराया अपीली अधिकरण ने यह निष्कर्ष अभिलिखित करके विधि में गलती की है कि यह 9 फुट चौड़ी जगह जहां पर 2-1/2 फुट चौड़ी सीढ़ी है और बाकी भाग आकाश के नीचे खुला हुआ है । मकान-मालिक द्वारा सन्निर्माण करने के लिए और उसे अपने अधिभोग में लेने के लिए खुली जगह का इस्तेमाल किया जा सकता है ।

5. अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा यह दलील दी गई है कि किराया अपीली अधिकरण के समक्ष कार्रवाइयां लंबित रहने के दौरान मकान-मालिक ने 9 × 30 वर्ग फुट खुली जगह बेच दी थी । विक्रय विलेख में उसने यह स्वीकार किया है कि दुकान सं. 4 और 5 उसके द्वारा भी बेची गई थी । अतिरिक्त साक्ष्य के लिए आवेदन को अस्वीकार करने के पश्चात् सुसंगत साक्ष्य की उपेक्षा करते हुए अभिवचनों के आधार पर भी निष्कर्ष अभिलिखित किए गए थे और बेदखली के लिए याचिका मंजूर की गई थी ।

6. हम यह नहीं पाते हैं कि दुकान सं. 4 और 5 की उपलब्धता के बारे में मकान-मालिक के तर्क, जो उसके द्वारा वर्ष 2003 में बेदखली याचिका को फाइल करने से पूर्व बेच दी गई थी और अपने स्वामित्व के बारे में 9 × 30 वर्ग फुट के विक्रय विलेख में इसका वर्णन किया गया है और जिस बात को विद्वान् एकल न्यायाधीश के समक्ष रखा गया था । निर्णय में इन दो दुकानों और खुली जगह का उल्लेख मामले के इन तथ्यों का उल्लेख करता है और इस बारे में कोई भी दलील जिसे विद्वान् एकल न्यायाधीश के समक्ष नहीं उठाया गया है ।

7. विद्वान् एकल न्यायाधीश ने इस आधार पर अपीलार्थी के विरुद्ध निष्कर्षों की पुष्टि की है कि किराया अपीली अधिकरण तथ्यों का अंतिम न्यायालय है जिसने सभी प्रश्नों पर विचार किया था और अपीलार्थी के विरुद्ध निष्कर्ष दिए थे ।

8. अंत में अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने दुकान को खाली कराने के लिए युक्तियुक्त समय देने का अनुरोध किया था । उसने यह निवेदन किया कि निष्पादक न्यायालय संभवतः बेदखली के

लिए वारंट जारी करता है और इस प्रकार यह न्यायालय दुकान को खाली करने के लिए कुछ समय के लिए मंजूरी दे सकता है जिसमें अपीलार्थी अपना कारोबार चला रहा है ।

9. राजस्थान किराया नियंत्रण अधिनियम, 2001 (जिसे संक्षेप में "2001 का अधिनियम" कहा गया है) की धारा 15 (7) और (8) में छह मास के समय का उपबंध किया गया है जिस दौरान बेदखली डिक्री का बेदखली के आदेशों के पश्चात् निष्पादित नहीं की जाएगी जो गैर-आवासीय वास सुविधा के बारे में पारित किया गया है । किराया अपीली अधिकरण द्वारा तारीख 29 अक्तूबर, 2012 को आदेश पारित किया गया था जिसमें अपीलार्थी को दुकान खाली करने के लिए छह मास का समय दिया गया था और जिस दौरान बेदखली डिक्री को निष्पादित नहीं किया गया था ।

10. विद्वान् एकल न्यायाधीश ने तारीख 15 जनवरी, 2015 को मामले का विनिश्चय किया और यह विशेष अपील लगभग 3 मास की अवधि के पश्चात् फाइल की गई है और अपने किराएदार-अपीलार्थी ने अपने काउंसेल के माध्यम से अपने विरुद्ध अभिलिखित निष्कर्षों को सफलतापूर्वक चुनौती न दे सकने के पश्चात् परिसर खाली न करने के लिए युक्तियुक्त समय की ईप्सा की है ।

11. इस मामले में हमने यह निष्कर्ष निकाला है कि वर्ष 2003 में फाइल की गई बेदखल याचिका लगभग 12 वर्ष से लंबित थी और जिस समय के दौरान किराएदार-अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले काउंसेल को स्थगन प्राप्त हो गए थे । किराया अपीली अधिकरण ने परिसर को खाली करवाने के लिए छह मास की कानूनी अवधि मंजूर की थी जबकि तीन मास से अधिक का समय मंजूर नहीं किया गया क्योंकि विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा जो निर्णय दिया गया था उसमें लंबा समय दिया गया था, मकान-मालिक को उसके कारोबार को अंतरित करने के लिए भी उसे अनुकल्प व्यवस्थाएं दी जानी चाहिए थीं ।

12. यह निवेदन किया गया कि उच्च न्यायालय साधारणतया परिसर खाली न कराने के लिए किराएदार की रिट याचिका खारिज करते हुए परिसर खाली करने के लिए अधिकांशतः प्रत्येक मामले में समय प्रदान करता है । ऐसा अनुतोष साम्या पर आधारित है, उच्च न्यायालय द्वारा एक पद्धति के रूप में उसको लागू किया गया है और इस प्रकार अपीलार्थी के विवादित दुकान को खाली कराने के लिए युक्तियुक्त समय के अनुतोष देने

से इनकार नहीं करना चाहिए ।

13. अधिनियम, 2001 की धारा 15 (7), (8) में छह मास का उपबंध किया गया है जिस दौरान बेदखली आदेशों को पारित करने के पश्चात् डिक्री का निष्पादन नहीं किया जाएगा । अधिनियम, 2001 की धारा 15(7), (8) के उपबंध को नीचे इस प्रकार दिया जा रहा है :–

> "15. किराएदार की बेदखली के लिए प्रक्रिया –
>
> (1).....
>
> (7) जहां किराया अधिकरण मकान-मालिक के पक्ष में याचिका का विनिश्चय करता है और यह कि किराएदार से कब्जे की वसूली के लिए प्रमाणपत्र जारी करेगी ।
>
> (8) उपधारा (7) के अधीन जारी किए गए प्रमाणपत्र का विनिश्चय की तारीख से तीन मास की अवधि तक उसका निष्पादन नहीं किया जाएगा ।
>
> बशर्ते कि वाणिज्यिक उपयोग के लिए किराए पर दिए गए परिसर के मामले में जारी किया गया ऐसे प्रमाणपत्र का विनिश्चय की तारीख से छह मास की अवधि तक निष्पादन नहीं किया जाएगा ।"

14. हम ऐसा आदेश करने में कोई न्यायसंगत बात नहीं पाते हैं कि अपीलार्थी को इन कारणों से परिसर खाली कराने के लिए कोई आगे समय दिया जाए कि समय की इजाजत देने की पद्धति न्यायालय को बाध्य नहीं करती है, इस बारे में सुस्थापित सिद्धांत को ध्यान में रखा जाना चाहिए कि साम्या को तब अपवर्जित किया गया है जब मामला संविधि या कानून द्वारा शासित है । **संदुर मैगनीज एंड आयरन ओर्स लिमिटेड** बनाम **कर्नाटक राज्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि राज्य सरकार द्वारा कानूनी शक्तियों के प्रयोग के मामले में यह प्रकट है कि विवेक का प्रयोग कानूनी उपबंधों के अनुसरण में कठोरता के साथ किया जाना चाहिए और यदि कोई विचलन है तो उसे कायम नहीं रखा जा सकता है । पैरा 83 में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि जब ऐसे क्षेत्र को कानूनी उपबंधों द्वारा अव्यष्टिक किया गया है तब साम्या के विचारों को गणना में नहीं लिया जा सकता है क्योंकि कानूनी उपबंधों के

---

[1] (2010) 13 एस. सी. सी. 1 = ए. आई. आर. 2011 एस. सी. (सी. आई. वी.) 1206.

विरुद्ध सिफारिशें कानून का अतिक्रमण किया जाना होगा ।

15. वर्तमान मामले में जब कानूनों में वाणिज्यिक उपयोग के लिए दिए गए परिसर को खाली करने के लिए छह मास के समय का उपबंध किया गया है जिसके दौरान बेदखली डिक्री का निष्पादन नहीं किया जाता है, समय का विस्तार करने की शक्तियां संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय द्वारा साधारणतया प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि इससे कानूनी अवधि का विस्तार ही नहीं है परन्तु मकान-मालिक की परेशानियों का कारण भी हो जाती हैं । चूंकि न्यायालय द्वारा मंजूर किया गया समय व्यवहारिक रूप से किराएदारों के सभी मामलों में होता है और कुछ याची समय चाहने के लिए ही याचिका फाइल करते हैं । यह आवश्यक है कि इस संबंध में कुछ दिशा निर्देश का उपबंध किया जाए :–

(i) संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन असाधारण शक्तियां परिसरों को खाली कराने के लिए कानूनी अवधि के बाहर मंजूर की जाती हैं चाहे ऐसे परिसर आवासीय या वाणिज्यिक हों । ऐसा किसी मामले में प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए । मामले के मकान-मालिक के प्रतिनिधित्व के अभाव में ऐसा समय मंजूर नहीं किया जा सकता, यदि कोई केवियट मकान-मालिक द्वारा फाइल नहीं की गई है तब भी उसकी अनुपस्थिति में समय मंजूर नहीं किया जा सकता ।

(ii) असाधारण शक्तियों का प्रयोग करते हुए कानूनों द्वारा नियत की गई कानूनी अवधि से परे समय का विस्तार, उच्च न्यायालय को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि समय मंजूरी का अभिवाक् किसी असाधारण कठिनाई को दूर करने के लिए आवश्यक है जो परिसरों को खाली कराने से संबंधित है । उच्च न्यायालय को ऐसे निष्कर्षों को अभिलिखित करना चाहिए और अपने समाधान के लिए अभिलेख पर आवश्यक तथ्यों को दिया जाना चाहिए ।

(iii) किराएदार द्वारा कानूनी समय के परे किसी समय की ईप्सा करना कार्यवाहियों में उसके द्वारा किए गए स्थगन के बारे में अभिवचनों में आवश्यक रूप से दिया जाना चाहिए जो मामले किराया अधिकरण/किराया अपीली अधिकरण और उच्च न्यायालय में लंबित था और मकान-मालिक द्वारा किए गए स्थगनों की संख्या में इस बात का उल्लेख होना चाहिए । न्यायालय की ओर से किराएदार द्वारा कार्रवाइयों को करने में बिताई गई कुल अवधि को गणना में लिया

जाना चाहिए और मकान-मालिक द्वारा कार्यवाहियों में विलंब करने में किए गए प्रयासों की संख्या भी लेनी चाहिए ।

16. सामान्य पद्धति और अनुभव के आधार पर किराएदार बेदखली की डिक्री से बचने के लिए अत्यधिक समय लेकर कार्रवाइयों में घृणा उत्पन्न होने तक विलंब करता है । बेदखली का आदेश किराएदारी की संविदा को कानूनी रूप से समाप्त करता है और इस प्रकार परिसरों को खाली कराने के लिए समय चाहना यदि पूर्वोक्त तीन शर्तों से इस बात का समाधान होता है तो न्यायालय को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि मकान-मालिक को परिसरों का अधिभोग किए जाने के लिए पर्याप्त रकम का प्रतिफल दिया जाना चाहिए जिसके लिए न्यायालय परिसरों को अधिभोग में लेने के लिए किराएदार को अनुज्ञात करता है । परिसर को अधिभोग में लेने के लिए प्रतिकरों का प्रचलित किराए के निबंधनों में उपाय किए जाने चाहिए जिस पर ऐसे परिसर उस क्षेत्र में लिए जाते हैं ।

17. हम यह नहीं पाते हैं कि वर्तमान मामले में पूर्वोक्त विद्यमान शर्तों में से कोई शर्त विद्यमान है और इस मामले में किसी असाधारण कठिनाई के संबंध में, कोई अभिवचन किया गया है जो किराएदार के प्रतिकूल होगी तथा निचले न्यायालयों द्वारा उन पर विचार नहीं किया गया था । कार्रवाइयां किराया अधिकरण, किराया अपीली अधिकरण और विद्वान् एकल न्यायाधीश के समक्ष बारह वर्षों की अवधि से लंबित है । किराएदार ने इस बारे में कोई अभिवाक् नहीं किया है कि उसने कार्यवाहियों को विलम्ब करने के लिए कितने स्थगन लिए हैं ।

18. इन परिस्थितियों में, हम इस बात के लिए विवश नहीं हैं कि परिसरों की बेदखली करने के लिए प्रत्यर्थी मकान-मालिक के कानूनी अवधि के परे समय मंजूर करें और इस संबंध में प्रत्यर्थी मकान-मालिक को नोटिस जारी करें । हमारा यह भी मत है कि चूंकि साम्या को प्रकट करती है, इस मामले में कोई ऐसी परिस्थितियां नहीं हैं और न इस प्रभाव का कोई अभिवचन किया गया है कि परिसर खाली कराने के लिए कानूनी अवधि के परे कोई आगे का समय मंजूर किया जाए ।

19. विशेष अपील खारिज की जाती है ।

विशेष अपील खारिज की गई ।

आर्य

गोरधन सिंह और एक अन्य

बनाम

कन्हैयालाल

तथा

गोरधन सिंह और एक अन्य

बनाम

रतनलाल

तारीख 10 मार्च, 2016

न्यायमूर्ति विनीत कोठारी

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 100 और आदेश 39 [सपठित सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम, 1882 की धारा 5 और विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 12] – अपील – संपत्ति विक्रय का करार – पक्षकारों द्वारा करार के अनुसरण में सम्पत्तियों का कब्जा नहीं सौंपा जाना – विनिर्दिष्ट अनुपालन – प्रतिषेधात्मक व्यादेश के लिए वाद – यदि किसी सम्पत्ति के बारे में पक्षकारों के बीच आपसी करार द्वारा विक्रय विलेख अभिलिखित किया जाता है तो उक्त विक्रय करार के अनुसरण में ही उक्त सम्पत्ति का कब्जा विनिर्दिष्टतः अनुज्ञेय होता है – यदि कोई पक्षकार इसका पालन नहीं करता है तो पीड़ित पक्षकार उक्त करार के अनुपालन में उक्त संपत्ति का कब्जा प्राप्त करने का हकदार होता है ।

वर्तमान पुनरीक्षण आवेदनों से उद्भूत हुए संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं । भूखंड के दो भागों को प्रतिवादियों अर्थात् गोरधन सिंह और वीर सिंह ने वादियों, क्रमशः कन्हैयालाल और रतन लाल को तारीख 25 अक्तूबर, 1988 को दो पृथक् रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेखों द्वारा विक्रय किया था । प्रश्नगत आवासीय भूखंड का आकार 58 × 19 सरदारपुरा, बाड़मेर में स्थित था । वर्तमान वाद वर्ष 1988 में भूखंड विक्रय के पश्चात् उस प्रकथन के साथ तारीख 16 दिसम्बर, 2002 को विचारण न्यायालय में प्रत्यर्थियों/ वादियों ने फाइल किया था । चूंकि वादी अपने व्यवसाय के संबंध में अधिकतर समय अपने टाउन से बाहर सूरत में रहे थे । विक्रेता (प्रतिवादियों) ने अपनी अनुपस्थिति का लाभ लेते हुए, वाद के फाइल करने की तारीख तीन मास से पूर्व प्रश्नगत भूखंड का जबरन कब्जा वापस लिया

था और वादी स्वामी होने के नाते और निर्माण और प्रश्नगत भूखंड का वास्तविक कब्जे में विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 6 के अधीन कब्जा लेने के हकदार थे । वाद प्रतिवादियों/आवेदकों ने लड़ा था तथापि, विद्वान् विचारण न्यायालय ने तारीख 2 मई, 2008 के अपने निर्णय द्वारा वादियों के पक्ष में डिक्री की थी । निर्णय से व्यथित होकर पुनरीक्षण आवेदन फाइल की गई । न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण आवेदनों को खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – वर्तमान मामले में, विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभि. सा. 1, कन्हैयालाल, अभि. सा. 2, रतन लाल, दोनों वादियों और प्रश्नगत वाद भूमि के क्रेताओं तथा अभि. सा. 3, पीरचन्द और अभि. सा. 4 गंगाराम की परीक्षा कराई थी, जबकि प्रतिवादियों ने प्रत्यर्थी साक्षी 1 के रूप में प्रतिवादी गोरधन सिंह और प्रत्यर्थी साक्षी 2 के रूप में स्वरूप सिंह की परीक्षा कराई थी । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित किए गए अभिकथनों से यह स्पष्ट होता है कि प्रश्नगत भूखंड को स्वयं प्रतिवादयों ने तारीख 25 अक्तूबर, 1988 को रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख द्वारा वादियों को विक्रय किया था और वादियों ने उस पर निर्माण करने के लिए तारीख 18 मई 1992 को प्रदर्श-2ए द्वारा नगर परिषद् से अनुशंसा प्राप्त कर ली थी, जिसे नगर परिषद ने तारीख 10 फरवरी, 1993 को प्रदर्श-3ए द्वारा अनुज्ञा प्रदान कर दी थी और नक्शे को भी नगर प्राधिकारियों द्वारा अनुमोदित कर दिया गया था । रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेखों के निष्पादन से, यह सुरक्षित तौर पर उपधारणा की जा सकती है कि वर्ष 1988 में विक्रेताओं (स्वयं प्रतिवादियों) वादियों को वास्तविक कब्जा दे दिया था और विक्रय विलेख में भी इसके लिए अनुबंध स्पष्ट है । वादियों ने अपने अभिकथनों के साथ ही वादपत्र में यह अभिकथन किया है कि प्रतिवादियों ने उनके अपने व्यवसाय के संबंध में बाड़मेर शहर से बाहर रहने का लाभ उठाकर उन्हें बेकब्जा कर दिया था । वादियों में से एक अभि. सा. 2 अर्थात् रतन लाल ने भी अपनी प्रतिपरीक्षा में यह अभिकथन किया है कि प्रतिवादियों ने वर्ष 2002 में बलपूर्वक कब्जा ले लिया था जब उक्त भूखंड पर पत्थर पट्टी लगा रहे थे । 1963 के अधिनियम की धारा 6 के सूक्ष्म परिशीलन से यह स्पष्टतः दर्शित होता है कि वादियों का बेकब्जा करना, विधि की सम्यक् प्रक्रिया से अन्यथा सिद्ध हो गया है । वर्तमान मामले में वादी प्रश्नगत वाद भूमि के स्वीकृततः रजिस्ट्रीकृत स्वामी हैं, इसलिए, विधि में यह उपधारणा की जा सकती है कि वे वाद भूमि के कब्जे में हैं और इस प्रकार, यह दर्शित करने का भार प्रतिवादियों पर था कि वे विधि की सम्यक् प्रक्रिया को अपनाते हुए प्रश्नगत

वाद भूमि के कब्जे में है और न कि अन्यथा क्योंकि उन्होंने रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख से इनकार किया है और वाद भूमि पर काफी लंबे समय से कब्जा होने का दावा किया है । वाद फाइल करने की तारीख से छह मास पूर्व बेकब्जा करने के समय पर भी इस मुद्दे को वर्तमान मामले में वादियों द्वारा पर्याप्त रूप से साबित कर दिया गया था । यद्यपि साक्षियों में यह मतैक्य नहीं था कि प्रतिवादी, विक्रय के तुरन्त पश्चात् बेकब्जा कर दिया गया था किन्तु वह भी उस समय जब वादियों ने 1963 के अधिनियम की धारा 6 के अधीन कब्जे को वापस प्राप्त करने के दावे का खंडन नहीं किया है, यदि वे यह साबित करते हैं कि प्रतिवादियों ने विधि की सम्यक् प्रक्रिया को अपनाए बिना वाद भूमि का कब्जा प्राप्त किया है । वर्तमान मामले में, न केवल वादियों के प्रकथन द्वारा अपितु वादियों के साक्षियों की परीक्षा और प्रतिपरीक्षा द्वारा यह साबित किया गया है कि उन्हें वाद फाइल करने से छह मास पूर्व प्रतिवादियों ने विधि की सम्यक् प्रक्रिया को अपनाए बिना बलपूर्वक बेकब्जा किया गया था । वर्तमान मामले में, स्वयं प्रतिवादी साक्षी 1 गोरधन सिंह और प्रत्यर्थी साक्षी 2 स्वरूप सिंह के साक्ष्य में कोई विश्वास प्रतीत नहीं होता है । वर्तमान मामले में, प्रतिवादियों ने स्वयमेव ही तारीख 25 अक्तूबर, 1988 की रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख के विवाद से इनकार किया है । इसी प्रकार, अन्य साक्षी अर्थात् प्रतिवादी साक्षी 2 जो प्रतिवादी की परिचित थी, ने भी अपनी प्रतिपरीक्षा में विक्रय विलेख के तथ्य से इनकार किया है । इस प्रकार, प्रतिवादी/आवेदक, वादियों के इस दावे और साक्ष्य का खंडन करने में असफल रहे हैं कि वे प्रश्नगत भूखंड का विधिक और शांतिपूर्ण कब्जा रखते थे और प्रतिवादियों ने विधि की सम्यक् प्रक्रिया को अपनाए बिना वादियों को बेकब्जा कर दिया था और इस प्रकार वर्तमान मामले में स्पष्ट रूप से 1963 के अधिनियम की धारा 6 लागू होती है । श्री आर. के. थानवी, ज्येष्ठ अधिवक्ता द्वारा जिन निर्णयों का अवलंब लिया गया है, वे वर्तमान मामले के तथ्यों को लागू नहीं होते हैं क्योंकि वादियों ने, अपने पक्षकथन को स्पष्ट रूप से साबित कर दिया है कि वर्ष 2002 में वाद फाइल किए जाने से छह मास पूर्व स्वयं विक्रेताओं द्वारा उन्हें उनके स्वयं के भूखंड से बलपूर्वक और अवैध तरीके से बेकब्जा कर दिया गया था । अतः इस न्यायालय की सुविचारित राय यह है कि वादी हकदार है और विद्वान् निचले न्यायालय द्वारा उनके पक्ष में पारित डिक्री कायम रखे जाने योग्य है । इस प्रकार प्रतिवादियों की वर्तमान पुनरीक्षण आवेदन गुणागुण रहित पाए जाते हैं और एतद्द्वारा उन्हें खर्चों सहित खारिज किया जाता है, जिनकी राशि प्रत्येक मामले में 10,000/- रुपए निश्चित की जाती है ।

प्रतिवादी, आज की तारीख से अर्थात् तारीख 10 जून, 2016 से तीन मास की अवधि के भीतर से या उससे पूर्व वादियों/प्रत्यर्थियों को भूखंडों का कब्जा सौंप देंगे और वे वाद के फाइल किए जाने की तारीख से भूखंडों के वास्तविक कब्जे को सौंपे जाने की तारीख तक 300/- रुपए प्रतिमास की दर से भूखंडों के उपयोग और उन्हें अधिभोग में रखने के लिए अन्तःकालीन लाभ का संदाय भी करेंगे और अन्तःकालीन लाभ या खर्चों का संदाय करने में किसी व्यतिक्रम की दशा में वाद में अन्तर्वलित भूखंडों के खाली कब्जे को प्रदान करने के लिए मंजूर की गई अवधि कम कर दी जाएगी और कब्जे की डिक्री तुरन्त निष्पादनीय हो जाएगी । अपीलार्थी/प्रतिवादी अन्तःकालीन लाभ के सभी बकायों का भी संदाय करेंगे और आज की तारीख से तीन मास की अवधि के भीतर उनका संदाय वादियों और प्रत्यर्थियों को करेंगे अन्यथा उस पर 9 प्रतिशत वार्षिक ब्याज की दर प्रभारित की जाएगी । अपीलार्थी/प्रतिवादी पूर्वोक्त अवधि के दौरान वाद की भूमि या उसके किसी भाग को किसी अन्य व्यक्ति के पक्ष में उप-पट्टे पर नहीं देंगे, उसका समनुदेशन नहीं करेंगे या उसके कब्जे से विलग नहीं होंगे और उस पर किसी तृतीय पक्षकार का हित सृजन नहीं करेंगे और यदि ऐसा किया जाता है तो उसे शून्य माना जाएगा और ऐसे तृतीय पक्षकार भी इस डिक्री से आबद्ध होंगे । यह स्पष्ट किया जाता है कि यदि वाद भूमि का शांतिपूर्ण और खाली कब्जा तारीख 10 जून, 2016 को या उससे पूर्व वादियों/प्रत्यर्थियों को सौंपा नहीं जाता है या ऊपर दिए गए निर्देशानुसार अंतःकालीन लाभों का संदाय नहीं किया जाता है तो सामान्य अनुक्रम में डिक्री के त्वरित निष्पादन के साथ वादी/प्रत्यर्थी इस न्यायालय की अवमान अधिकारिता का लाभ उठाने के लिए भी हकदार होंगे । (पैरा 6, 7, 8, 9, 10 और 11)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2007]	ए. आई. आर. 2007 (एन. ओ. सी.) 932 (राजस्थान) : **अशोक कुमार गुप्ता** बनाम **सुरेन्द्रा राकयान और एक अन्य** ;	3
[2003]	2003 ए. आई. एच. सी. 618 : **एम. नरसिम्हा रेड्डी और अन्य** बनाम **श्रीमती के. विनोभा देवी और अन्य** ।	3

रिट (सिविल) अधिकारिता : 2008 की एस. बी. सिविल पुनरीक्षण याचिका सं. 182 और 181.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन पुनरीक्षण आवेदन ।

आवेदकों/प्रतिवादियों की ओर से सर्वश्री आर. के. थानवी और नरेन्द्र थानवी ज्येष्ठ अधिवक्ता

प्रत्यर्थियों/वादियों की ओर से सर्वश्री श्रेयांश मार्डिया और संदीप शाह

न्यायमूर्ति विनीत कोठारी – ये दोनों पुनरीक्षण आवेदन, आवेदकों/प्रतिवादियों, गोरधन सिंह और वीर सिंह ने प्रत्यर्थी/वादी कन्हैयालाल के विरुद्ध फाइल की हैं (सी. आर. सं. 182/2008 में) और वादी, रतन लाल (सी. आर. सं. 181/2008 में) को वादियों प्रत्यर्थियों को प्रश्नगत भूखंड का कब्जा सौंपे जाने का निर्देश, विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 (1963 का 47) की धारा 6 के अधीन अपर जिला न्यायाधीश, बाड़मेर के विद्वान् विचारण न्यायालय के तारीख 2 मई, 2008 की डिक्री द्वारा दिया गया है ।

2. वर्तमान पुनरीक्षण आवेदनों से उद्भूत हुए संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं । भूखंड के दो भागों को प्रतिवादियों अर्थात् गोरधन सिंह और वीर सिंह ने वादियों, क्रमशः कन्हैयालाल और रतन लाल को तारीख 25 अक्तूबर, 1988 को दो पृथक् रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेखों द्वारा विक्रय किया था । प्रश्नगत आवासीय भूखंड का आकार 58 × 19 सरदारपुरा, बाड़मेर में स्थित था । वर्तमान वाद वर्ष 1988 में भूखंड विक्रय के पश्चात् उस प्रकथन के साथ तारीख 16 दिसम्बर, 2002 को विचारण न्यायालय में प्रत्यर्थियों/वादियों ने फाइल किया था । चूंकि वादी अपने व्यवसाय के संबंध में अधिकतर समय अपने टाउन से बाहर सूरत में रहे थे । विक्रेता (प्रतिवादियों) ने अपनी अनुपस्थिति का लाभ लेते हुए, वाद के फाइल करने की तारीख तीन मास से पूर्व प्रश्नगत भूखंड का जबरन कब्जा वापस लिया था और वादी स्वामी होने के नाते और निर्माण और प्रश्नगत भूखंड का वास्तविक कब्जे में विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 6 के अधीन कब्जा लेने के हकदार थे । वाद प्रतिवादियों/आवेदकों ने लड़ा था तथापि, विद्वान् विचारण न्यायालय ने तारीख 2 मई, 2008 के अपने निर्णय

द्वारा वादियों के पक्ष में डिक्री की थी :–

"शपथपत्र के माध्यम से वादी पी. डब्ल्यू. 1 ने बताया है कि उसका एक आवासीय भूखंड मोहल्ला सरदारपुरा, बाड़मेर में स्थित है । यह 58 × 19 फुट का है । तारीख 25 अक्तूबर, 1988 को इस भूखंड को प्रतिवादीगण के जरिए रजिस्टर्ड विक्रय पत्र द्वारा खरीदा गया था । प्रतिफल की राशि 15,500/- रुपए अदा की गई इसका कब्जा प्रतिवादीगण ने वादी को सुपुर्द किया । आगे गवाह ने बताया कि आवासीय भूखंड की कीमत बढ़ जाने से प्रतिवादीगण के मन में बेईमानी आ गई । प्रतिवादीगण गैर कानूनी तौर पर इस भूखंड पर जबरदस्ती कब्जा कर लिया । वादी व्यापार के सिलसिले से अक्सर बाहर रहता है । भूखंड बेचने की रजिस्ट्री प्रदर्श ए-1 है इसके नियमन के लिए निर्धारित शुल्क जमा कराया गया था जिसकी रसीद क्रमांक 7209 तारीख 18 मई, 1992 है । नगर परिषद बाड़मेर ने भवन निर्माण की स्वीकृति भी दी थी जो कि प्रदर्श-3ए है । तथा नक्शा प्रदर्श-4ए और प्रदर्श-5ए है । इस पर निर्माण कार्य प्रतिवादीगण ने कब्जा करने के बाद करवाया है । इसी दिन प्रतिवादीगण ने एक भूखंड रतन लाल के हक में भी बेचा था ।

जिरह में गवाह ने बताया है कि उसका रहवास सरदारपुरा में है । गवाह कथन है कि वह सूरत में व्यापार करता है विवादित भूखंड रहवास से लगभग डेढ़ किलोमीटर दूरी पर है जिस समय प्लाट लिया तब यह खुला था बाद में प्रतिवादीगण ने चीड़ों के टुकड़े लगाकर इस पर कब्जा कर लिया इस प्लाट को खरीदने के पहले प्रतिवादीगण से कोई पहचान नहीं थी यह सही है कि बेचाननामा नवरत्न जैन के द्वारा लिखा गया है जो गंगाराम का लड़का है । प्रतिवादीगण कब्जा कर रहे थे उन्हें बहुत समझाया था । शादी-ब्याह, होली, दीपावली पर घर बाड़मेर आते हैं । प्रतिवादीगण विवादित भूखंड में नहीं रहते हैं इस भूखंड को देखने मौका कमिश्नर आया हो तो पता नहीं । प्रतिवादीगण ने आटा चक्की के अलावा इस भूखंड में पानी की टंकी भी बना रखी है ।

गवाह पी. डब्ल्यू. 2 रतन लाल ने शपथपत्र के माध्यम से बताया कि वादी द्वारा खरीदा हुआ भूखंड उसका देखा हुआ है । यह भूखंड 58 × 19 फुट का है । कन्हैयालाल ने तारीख 25 अक्तूबर, 1988

को इस प्लाट को 15,500/- रुपए प्रतिफल के बदले खरीदा था । प्रतिवादीगण ने इसका कब्जा वादी को सुपुर्द कर दिया था उसी दिन प्रतिवादीगण ने एक भूखंड इस गवाह को भी बेचा था । गवाह का यह भी कथन है कि उसका भाई व्यापार के सिलसिले से अक्सर बाहर रहता है । इसी कारण प्रतिवादीगण ने गैरकानूनी तौर पर इस प्लाट पर कब्जा कर लिया है ।

जिरह में गवाह ने बताया है कि उसके पिताजी एवं वादी के पिता जी सगे भाई हैं । परिवाद अलग-अलग है यह गवाह सूरत में व्यापार करता है । बेचान की लिखापढ़ी नवरत्न से कराई थी । इसके पहले प्रतिवादीगण को नहीं जानते हैं । रहवास मकान में मां अकेली रहती है । यह गवाह नियमन को नहीं समझता है । प्रतिवादीगण ने सन् 2002 के किस माह में कब्जा किया पता नहीं है ।

गवाह पी. डब्ल्यू. 3 पीर चन्द ने शपथपत्र के माध्यम से बताया है कि उसने विवादित भूखंड को देखा है । वादी ने इसे प्रतिवादीगण से तारीख 25 अक्तूबर, 1988 को 15,500/- रुपए के बदले खरीदा था व्यापार के सिलसिले में वादी अक्सर बाहर रहता है । विक्रय पत्र रजिस्ट्री प्रदर्श-1ए पर इस गवाह की साख डाली हुई है ।

जिरह में गवाह ने बताया है उसका मकान विवादग्रस्त प्लाट से 2-3 किलोमीटर की दूरी पर है । इस प्लाट को 8 साल पहले देखा था इसके नाप की जानकारी नहीं है साख डालने के लिए राजपूतों ने कहा था । गवाह के सामने पैसे नहीं दिए । आगे पी. डब्ल्यू. 2 ने बताया है कि इस बात की जानकारी नहीं है कि प्रतिवादीगण इस प्लाट में रहते हो ।

गवाह पी. डब्ल्यू. 4 गंगाराम ने शपथपत्र के माध्यम से बताया है कि वह वकालत का व्यवसाय करते हैं विवादित भूखंड सरदारपुरा मोहल्ला में वार्ड संख्या 1 में स्थित है । दिनांक 25 अक्तूबर, 1988 को इस प्लाट को वादी ने प्रतिवादीगण से 15,500/- रुपए का प्रतिफल अदा करके खरीदा था । रजिस्ट्री प्रदर्श-1ए पर इस गवाह द्वारा पहचान डाली हुई है । वादी व्यापार के सिलसिले से बाहर रहता है । बाद में प्रतिवादीगण ने इस पर जबरन कब्जा कर लिया । जिरह गवाह ने बताया कि वह वादी को नहीं जानता है लेकिन उसके पिता

भगवान दास को जानता है नवरत्न जैन टाइपिस्ट गवाह का लड़का है । रजिस्ट्री के संबंध में पैसे इस गवाह के सामने नहीं दिए हस्ताक्षर दोनों पार्टियों के रू-ब-रू किए थे ।

गवाह डी. डब्ल्यू. 1 गोरधन सिंह ने शपथपत्र के माध्यम से कथन किया है कि वादी ने यह मुकदमा सरासर झूठा किया है मौके पर इस प्रकार का कोई प्लाट नहीं है तारीख 25 अक्तूबर, 1988 को वादी के हक में कोई बेचान नहीं किया न ही कीमत ली 2002 में प्लाट पर कब्जा नहीं किया आगे गवाह ने कथन किया है कि शिव मार्ग पर 73 × 40 फुट का उसका भूखंड है । पिछले 25 वर्षों से प्रतिवादीगण का इसमें कमरा व चौक बना हुआ है । 7-8 साल पहले आटा चक्की लगी है रहवासीय मकान को हड़पने के लिए वादी ने झूठा मुकदमा किया है ।

जिरह में गवाह ने बताया है कि माधोसिंह और वीर सिंह उसके सगे भाई हैं । गवाह का कथन है कि शपथपत्र में क्या लिखा है तो पता नहीं है भाई ने लिखाया था 58 × 19 फुट का प्लाट वादी को नहीं बेचा गवाह का यह भी कथन है कि वह अनपढ़ है यह पता नहीं कि वादी व्यापार के सिलसिले में अक्सर बाहर रहता है । इस भूखंड के संबंध में वादी ने नगर पालिका से भवन निर्माण की स्वीकृति ली हो तो पता नहीं ।

गवाह डी. डब्ल्यू. 2 स्वरूप सिंह ने अपने शपथपत्र के माध्यम से बताया है कि वह प्रतिवादीगण को 25 वर्षों से जानता है इनके मालिकाना हक व कब्जे का एक प्लाट मोहल्ला सरदारपुरा में स्थित है । यह प्लाट पुश्तैनी है तथा 73 फुट × 40 फुट का है । इसमें प्रतिवादीगण का रहवास है व उनके कमरे बने हुए हैं जिरह में गवाह ने बताया कि वह सरदारपुरा में रहता है इसका मकान गोरधन सिंह के मकान के पीछे है । गोरधन सिंह के बाड़मेर में कितने प्लाट हैं इसकी जानकारी नहीं है । गवाह कन्हैयालाल व रतन लाल को नहीं जानता हूं । गवाह का यह भी कथन है कि वह 24 घंटे प्रतिवादीगण के साथ नहीं रहता ।

इस स्तर पर विद्वान् वकील प्रतिवादीगण ने दलील दी है कि वह दावा कथित रूप से बेदखल किए जाने के 6 माह के अन्दर पेश नहीं

किया गया है । जबकि विशिष्ट अधिनियम की धारा 6 के अन्तर्गत इस प्रकार का दावा 6 माह के अन्दर पेश किया जाना आवश्यक है उनका तर्क है कि वादी पी. डब्ल्यू. 1 ने जिरह में कथन किया है कि भूखंड बेचने के 5-10 दिन बाद ही प्रतिवादीगण ने उस पर कब्जा कर लिया था इस आधार पर दावा खारिज किए जाने योग्य है । अपनी इस दलील के समर्थन में उन्होंने तिरूमाला गियली देवस्थान **बनाम** के. एम. कृष्णैया (1998 डी एन जे का हवाला दिया) जिसका मैंने ससम्मान अवलोकन किया ।

स्वीकृत रूप से यह दावा तारीख 16 दिसम्बर, 2002 को पेश किया गया है । इस बिन्दु को पहले भी प्रतिवादीगण ने उठाया था विद्वान् पूर्व पीठासीन अधिकारी महोदय ने इस संदर्भ में दिनांक 19 सितम्बर, 2005 को निम्नलिखित आदेश पारित किया ।

जहां तक प्रतिवादी के जवाब दावा पद संख्या 6 के अनुसार वाद समय सीमा में नहीं होने के तथ्य का प्रश्न है इस संबंध में प्रतिवादीगण द्वारा प्रस्तुत जवाब का अवलोकन किया गया । प्रतिवादी ने अपने जवाब में केवल यह कथन किया है कि वास्तविक कब्जे के अभाव में वर्तमान वाद समय सीमा में नहीं होने से चलने योग्य नहीं है जबकि वास्तविकता में वादी ने जो दावा पेश किया है वह विवादित संपत्ति के कब्जे के संबंध में पेश किया है प्रतिवादीगण ने यह स्पष्ट नहीं किया है कि किस तरह से वादी का वाद निर्धारित समय सीमा के अन्दर नहीं है ।

फिर भी यह एक विधि का प्रश्न है कि किसी भी स्तर पर इस पर विचार किया जा सकता है ।

वादपत्र के पैरा संख्या 4 में वादी ने कथन किया है कि तीन माह पहले प्रतिवादीगण ने भूखंड पर कब्जा कर लिया । इस भूखंड को प्रतिवादीगण से वादी ने दिनांक 25 अक्तूबर, 1988 को खरीदा था वादी के हक में दिनांक 20 फरवरी, 1993 को नगर पालिका बाड़मेर ने स्वीकृति जारी की यह ई. एक्स. 3ए है । इसके साथ का नक्शा ई. एक्स. 4 व ई. एक्स. 5ए है इस तरह से बेचान के तुरन्त बाद कब्जा करने वाली बात साबित नहीं होती है ।

ई. एक्स. 1 बेचानपत्र है इसमें उल्लेख है कि –

इस पट्टा की जमीन में से इजाजत नगर पालिका बाड़मेर से मिली हुई है अतः ऊपर लिखे नाप व पाडोस बिचला प्लाट हमने आपको आज दिन मोल बाजार बिकता रुपए 15,500/- अक्षरे पन्द्रह हजार पांच सौ रुपए में मोल बेचान का कब्जा जमीन पर आपका आज मौके पर करा दिया है ।

इसकी पुष्टि गवाह पी. डब्ल्यू. 3 व पी. डब्ल्यू. 4 ने भी की है । इन गवाहान ने इस पर साख डाली है । अतः यह प्रमाणित है कि वादी ने प्रतिवादीगण से भूखंड मुन्दर्जे पद संख्या 1 वाद पत्र को खरीद फरोक्त कर कब्जा प्राप्त किया प्रतिवादीगण ने वादी के इस भूखंड पर बाद में नाजायज कब्जा कर लिया अतः ये दोनों तनकीयात वादी के पक्ष में एवं प्रतिवादीगण के विरुद्ध तय की जाती है ।

तनकी संख्या 3

इस तनकी को सिद्ध करने का भार प्रतिवादीगण पर है जवाब दावा के मद संख्या 7 में प्रतिवादीगण ने कथन किया है कि न्याय शुल्क पर्याप्त अदा नहीं किया गया है । परन्तु इस संबंध में विश्वसनीय एवं ठोस साक्ष्य पेश नहीं की गई है केवल मात्र सरसरी तौर पर कथन किया गया है अतः यह तनकी वादी के पक्ष में व प्रतिवादीगण के विरुद्ध तय की जाती है ।

तनकी संख्या 4

यह तनकी दादरसी बाबत है स्वीकृत रूप से दावा विशिष्ट अधिनियम की धारा 6 के अन्तर्गत पेश किया गया है अतः वादी को तद्नुसार अनुतोष दिलाया जाना उचित प्रतीत होता है । दावा वादी विरुद्ध प्रतिवादीगण डिक्री किए जाने योग्य है ।

आदेश

1. वादी प्रतिवादीगण के भूखंड मुन्दर्जे मद 1 वादपत्र का कब्जा प्राप्त करने का अधिकारी है । प्रतिवादीगण को हिदायत दी जाती है कि 2 माह के अन्दर भूखंड खाली करके इसका कब्जा वादी को सौंप दे ।

2. वादी प्रतिवादीगण से तारीख दायरी दावा से ता इन्तलाय तक 300/- रुपए महावार की दर से अन्तःकालीन लाभ प्राप्त करने का अधिकारी है ।

3. वादी प्रतिवादीगण से नियमानुसार खर्चा मुकदमा प्राप्त करने का अधिकारी है ।

डिक्री पर्चा इसी प्रकार से बनाया जावे ।

हस्ता./-
अपर जिला एवं सेशन न्यायाधीश,
बाड़मेर"

3. आवेदकों/प्रतिवादियों के श्री आर. के. थानवी ज्येष्ठ अधिवक्ता के सहयोगी श्री नरेन्द्र थानवी, विद्वान् काउंसेल ने यह निवेदन किया है कि 1963 के अधिनियम की धारा 6 केवल ऐसे वाद को फाइल करने की अनुमति देती है यदि वादी को वाद फाइल करने की तारीख से पूर्व छह मास के भीतर बलपूर्वक बेकब्जा कर दिया जाता है और वादियों के हक के होते हुए भी व्यक्ति, जिसने यह सिद्ध कर दिया है कि प्रश्नगत भूखंड के कब्जे में था किन्तु विधि की सम्यक् प्रक्रिया के बिना उसे बलपूर्वक बेकब्जा कर दिया गया है, वह अधिनियम की धारा 6 के अधीन कब्जे के लिए वाद फाइल कर सकता है । तथापि, उसने यह निवेदन किया कि वर्तमान मामले में, वादी वर्ष 2002 में न्यायालय में आए थे और विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित अपने अभिकथनों में उन्होंने यह भी स्वीकार किया था कि वर्ष 1988 में प्रश्नगत भूखंड का क्रय करने के प्रतिवादियों ने गलत आशय से बलपूर्वक कब्जा ले लिया था और भूखंड के मूल्य में बढ़ोतरी कर दी थी । इस प्रकार, उन्होंने यह निवेदन किया है कि वाद को 1963 के अधिनियम की धारा 6 के अधीन कायम नहीं रखा जा सकता है और यह वादियों के हक पर आधारित कब्जे के लिए वाद नहीं है और इसलिए, निचले न्यायालय द्वारा दी गई डिक्री अपास्त किए जाने योग्य है । उन्होंने आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के निर्णय **एम. नरसिम्हा रेड्डी और अन्य** बनाम **श्रीमती के. विनोभा देवी और अन्य**[1] और इस न्यायालय के **अशोक कुमार गुप्ता** बनाम **सुरेन्द्रा राकयान और एक अन्य**[2] वाले मामलों का अवलंब लिया है ।

4. दूसरी ओर, प्रत्यर्थियों/वादियों की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री संदीप शाह के मार्फत श्री श्रेयांश मारडिया ने यह जोरदार निवेदन किया है कि वाद सक्षम था और विचारण न्यायालय के

---

[1] 2003 ए. आई. एच. सी. 618.
[2] ए. आई. आर. 2007 (एन. ओ. सी.) 932 (राजस्थान).

समक्ष सही ही कायम रखा गया था और वादियों ने निचले न्यायालय के समक्ष यह साबित कर दिया था कि प्रतिवादियों ने वादी को सूरत में अपने व्यवसाय के संबंध में बाड़मेर शहर से अनुपस्थित रहने का लाभ उठाकर बलपूर्वक भूखंडों पर कब्जा कर लिया था स्वयं प्रतिवादियों द्वारा निचले न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए गए विक्रय विलेख (प्रदर्श 1) के माध्यम से विक्रय के अविवादित तथ्य को दृष्टिगत करते हुए, वाद न केवल परिसीमा अवधि के भीतर था अपितु विद्वान् निचले न्यायालय द्वारा भी सही ही डिक्री पारित की गई है और प्रतिवादियों का वर्तमान पुनरीक्षण आवेदन गुणागुण रहित है और खारिज किए जाने योग्य है ।

5. मैंने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को विस्तार से सुना और अभिलेख तथा न्यायालय में उद्धृत निर्णयों का परिशीलन किया है ।

6. विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभि. सा. 1, कन्हैयालाल, अभि. सा. 2, रतन लाल, दोनों वादियों और प्रश्नगत वाद भूमि के क्रेताओं तथा अभि. सा. 3, पीरचन्द और अभि. सा. 4 गंगाराम की परीक्षा कराई थी, जबकि प्रतिवादियों ने प्रत्यर्थी साक्षी 1 के रूप में प्रतिवादी गोरधन सिंह और प्रत्यर्थी साक्षी 2 के रूप में स्वरूप सिंह की परीक्षा कराई थी । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित किए गए अभिकथनों से यह स्पष्ट होता है कि प्रश्नगत भूखंड को स्वयं प्रतिवादियों ने तारीख 25 अक्तूबर, 1988 को रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख द्वारा वादियों को विक्रय किया था और वादियों ने उस पर निर्माण करने के लिए तारीख 18 मई, 1992 को प्रदर्श-2ए द्वारा नगर परिषद् से अनुशंसा प्राप्त कर ली थी, जिसे नगर परिषद् ने तारीख 10 फरवरी, 1993 को प्रदर्श-3ए द्वारा अनुज्ञा प्रदान कर दी थी और नक्शे को भी नगर प्राधिकारियों द्वारा अनुमोदित कर दिया गया था । रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेखों के निष्पादन से, यह सुरक्षित तौर पर उपधारणा की जा सकती है कि वर्ष 1988 में विक्रेताओं (स्वयं प्रतिवादियों) वादियों को वास्तविक कब्जा दे दिया था और विक्रय विलेख में भी इसके लिए अनुबंध स्पष्ट है । वादियों ने अपने अभिकथनों के साथ ही वादपत्र में यह अभिकथन किया है कि प्रतिवादियों ने उनके अपने व्यवसाय के संबंध में बाड़मेर शहर से बाहर रहने का लाभ उठाकर उन्हें बेकब्जा कर दिया था । वादियों में से एक अभि. सा. 2 अर्थात् रतन लाल ने भी अपनी प्रतिपरीक्षा में यह अभिकथन किया है कि प्रतिवादियों ने वर्ष 2002 में बलपूर्वक कब्जा ले लिया था जब उक्त भूखंड पर पत्थर पट्टी लगा रहे थे । अभि. सा. 2

रतन लाल की उक्त प्रतिपरीक्षा के सुसंगत भाग, वर्तमान संदर्भ के लिए भी इसमें नीचे उद्धृत है :–

> "मैंने मुख्य परीक्षण के रूप में शपथपत्र पेश किया है जिसमें ए से बी चार जगह मेरे हस्ताक्षर हैं । उक्त शपथपत्र मैंने पढ़कर हस्ताक्षर किए हैं ।
>
> जिरह द्वारा वकील प्रतिवादी-कन्हैयालाल जी के पिताजी तथा मेरे पिताजी सगे भाई हैं । हमारे परिवार अलग-अलग रहते हैं । मेरा रहवास कन्हैयालाल जी के मकान के रहवास के 20 मकान दूर है । मैं भी सूरत में धंधा करता हूं । हम 1992-93 से सूरत में धंधा करते हैं । कन्हैयालाल ने जो भूखंड खरीदा जो मैंने देखा हुआ है उसकी साईज 19 × 58 फुट है । कन्हैयालाल के प्लाट के पास में मेरा प्लाट है । मैं दिशाएं नहीं बता सकता । मैं दसवीं पास हूं । कन्हैयालाल के प्लाट के पास एक तरफ मेरा प्लाट दूसरी तरफ इन्द्रसिंह का प्लाट है । सीधे की तरफ प्रतिवादी गोरधन सिंह का प्लाट है तथा आने का आम रास्ता है । आम रास्ता शिव मार्ग है जो कि दिशा भूखंड तारीख 25 अक्तूबर, 1988 को खरीदा था । इस भूखंड को 15,500/- रुपए में खरीदा था इस भूखंड के पैसे गोरधन सिंह व वीर सिंह को दिए थे उक्त पैसे कोर्ट में जहां रजिस्ट्री हुई वहां दिए थे । उनके साथ माधोसिंह थे वो उनके भाई हैं जो वर्तमान में जीवित नहीं है । तथा पीरचंद, उदय चंद भी थे । लिखा पढ़ी नवरत्न ने करवाई थी, प्लाट खरीदने से पूर्व प्रतिवादीगण को नहीं जानते थे । प्लाट खरीदा था तब हमने नापा था उस समय मैं, कन्हैयालाल, गोरधन सिंह व वीर सिंह थे । गोरधन सिंह व वीर सिंह ने लगभग 2002 के आस पास कब्जा विवादित भूखंड पर कन्हैयालाल व मेरे भूखंडों पर किया चीड़ों के टुकड़े कुल 8 टुकड़े लगाए थे । प्रतिवादीगण उक्त विवादित भूखंड पर कब्जा कर चीड़ों का कमरा बनाकर आटे की चक्की लगाई व पानी की टंकी बनवाई है । प्रतिवादीगण का रहवास विवादित भूखंड में नहीं है वो कहां रहते हैं इसकी जानकारी नहीं है । मेरे रहवासी मकान से विवादित भूखंड 20 मकान आगे के बाद करीब 120 फुट रोड के आगे है । हमारे रहवास मकान में मेरी मां अकेली रहती है हम आते जाते रहते हैं । हम तीन भाई हैं जो बाड़मेर में हमारे साथ ही रहते हैं तथा सूरत में हम अलग-अलग रहते हैं । शपथपत्र के पद संख्या 5 में नियमन

बाबत लिखा है । नियमन में मैं नहीं समझता हूं नगरपालिका से कन्हैयालाल ने इजाजत ली थी जो 1992 में मांगी थी जो 1993 में इजाजत मिली थी । कन्हैयालाल से विवादित भूखंड पर कोई निर्माण नहीं करवाया है यह गलत बात है कि प्रतिवादीगण ने कन्हैयालाल के पक्ष में बेचान नहीं किया हो और न ही कब्जा सुपुर्द किया हो । और न ही वापस कब्जा किया इसकी जानकारी नहीं है क्योंकि मैं यहां नहीं था । मेरी माता ने मुझे बताया कि अपने भूखंड पर प्रतिवादीगण ने कब्जा कर लिया है उक्त बात मुझे बाड़मेर आने पर बताई थी । मैं बाड़मेर किस महीने आया था यह ध्यान नहीं है । यह बात गलत है कि कन्हैयालाल मेरा भाई होने से मैं झूठे बयान दे रहा हूं ।

पुनः परीक्षण – कुछ नहीं ।"

7. 1963 के अधिनियम की धारा 6 के सूक्ष्म परिशीलन से यह स्पष्टतः दर्शित होता है कि वादियों का बेकब्जा करना, विधि की सम्यक् प्रक्रिया से अन्यथा सिद्ध हो गया है । वर्तमान मामले में वादी प्रश्नगत वाद भूमि के स्वीकृततः रजिस्ट्रीकृत स्वामी है, इसलिए, विधि में यह उपधारणा की जा सकती है कि वे वाद भूमि के कब्जे में हैं और इस प्रकार, यह दर्शित करने का भार प्रतिवादियों पर था कि वे विधि की सम्यक् प्रक्रिया को अपनाते हुए प्रश्नगत वाद भूमि के कब्जे में है और न कि अन्यथा क्योंकि उन्होंने रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख से इनकार किया है और वाद भूमि पर काफी लंबे समय से कब्जा होने का दावा किया है । वाद फाइल करने की तारीख से छह मास पूर्व बेकब्जा करने के समय पर भी इस मुद्दे को वर्तमान मामले में वादियों द्वारा पर्याप्त रूप से साबित कर दिया गया था । यद्यपि साक्षियों में यह मतैक्य नहीं था कि प्रतिवादी, विक्रय के तुरन्त पश्चात् बेकब्जा कर दिया गय था किन्तु वह भी उस समय जब वादियों ने 1963 के अधिनियम की धारा 6 के अधीन कब्जे को वापस प्राप्त करने के दावे का खंडन नहीं किया है, यदि वे यह साबित करते हैं कि प्रतिवादियों ने विधि की सम्यक् प्रक्रिया को अपनाए बिना वाद भूमि का कब्जा प्राप्त किया है । वर्तमान मामले में, न केवल वादियों के प्रकथन द्वारा अपितु वादियों के साक्षियों की परीक्षा और प्रतिपरीक्षा द्वारा यह साबित किया गया है कि उन्हें वाद फाइल करने से छह मास पूर्व प्रतिवादियों ने विधि की सम्यक् प्रक्रिया को अपनाए बिना बलपूर्वक बेकब्जा किया गया था ।

8. वर्तमान मामले में, स्वयं प्रतिवादी साक्षी 1 गोरधन सिंह और

प्रत्यर्थी साक्षी 2 स्वरूप सिंह के साक्ष्य में कोई विश्वास प्रतीत नहीं होता है । वर्तमान मामले में, प्रतिवादियों ने स्वयमेव ही तारीख 25 अक्तूबर, 1988 की रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख के विवाद से इनकार किया है । प्रतिवादी अर्थात् गोरधन सिंह के शपथपत्र के पैरा 3 को वर्तमान संदर्भ के लिए इसमें नीचे उद्धृत किया जाता है :–

> "3. कि वादी ने गलत रूप से लिखाया है कि ऊपर वर्णित प्लाट मेरे व मेरे भाई से दिनांक 25 अक्तूबर, 1988 को रजिस्ट्री से खरीदा है । मैंने व मेरे भाई वीर सिंह ने ऐसा कोई बेचान नहीं किया है हमने ऐसे प्लाट का कब्जा वादी कन्हैयालाल को सुपुर्द नहीं किया है । मैंने व मेरे भाई ने कन्हैयालाल से इस प्लाट की कोई कीमत नहीं ली है । वादी कन्हैयालाल ऊपर लिखे प्लाट पर मालिक के रूप में कभी काबिज नहीं रहा है ।"

पैरा 8 में प्रतिवादी, गोरधन सिंह ने प्रश्नगत वाद भूमि का लम्बे समय से कब्जे में होने का दावा किया है । प्रतिवादी, गोरधन सिंह के शपथपत्र का पैरा 8 वर्तमान संदर्भ के लिए इसमें नीचे उद्धृत किया जाता है :–

> "8. कि ऊपर लिखे इस प्लाट में मेरा लगभग 25 वर्षों से पुराने बने कमरे, चौक, छप्परे में रहवास है तथा रोड साईड पर चीड़ों का 10 × 15 फुट का कमरा बना हुआ है जिसमें करीब 7-8 साल से आटे की चक्की लगाई हुई है तथा पास में टांकली उस समय की बनी हुई है । पूरा प्लाट लगभग 25 वर्षों से चीड़ों की पट्टियों से घेरा हुआ है । बिजली कनेक्शन भी ले रखा है । वादी कन्हैयालाल ने मेरे इस रहवासी मकान को हड़पने के लिए यह झूठा दावा किया है । इसलिए मुझे हर्जाने के 5,000/- रुपए दिलाएं जाएं ।"

9. इसी प्रकार, अन्य साक्षी अर्थात् प्रतिवादी साक्षी 2 जो प्रतिवादी का परिचित थी, ने भी अपनी प्रतिपरीक्षा में विक्रय विलेख के तथ्य से इनकार किया है । उक्त अभिकथन का सुसंगत भाग वर्तमान संदर्भ के लिए इसमें नीचे उद्धृत है :–

> "**जिरह द्वारा अधिवक्ता वादी** –
>
> यह बात सही है कि बाड़मेर शहर के सरदारपुरा में निवास कर रहा हूं । मेरा रहवासी मकान गोरधन सिंह के मकान के पीछे है । गोरधन सिंह वगैरा मेरे जाति भाई वह चूली के हैं कि मैं लूणु

का हूं । गोरधन सिंह वगैरा अपने घर में कोई काम करते हैं तो मुझे नहीं पूछते हैं । यह बात गलत है कि गोरधन सिंह ने दिनांक 25 अक्तूबर, 1988 को कन्हैयालाल को प्लाट बेचा हो । यह बात गलत है कि विवादित भूखंड पर दिनांक 25 अक्तूबर, 1988 से कन्हैयालाल का कब्जा चला आ रहा हो । कन्हैयालाल ने कोई रजिस्ट्री कराई हो तो मैं साथ नहीं था । गोरधन सिंह के बाड़मेर में कितने प्लाट हैं इसकी मुझे जानकारी नहीं है । मैं कन्हैयालाल व रतन लाल को नहीं जानता हूं । यह बात सही है कि मैं गोरधन सिंह व वीर सिंह के साथ 24 घण्टे नहीं रहता हूं । यह बात गलत है कि गोरधन सिंह वगैरह ने भूखंड कन्हैयालाल को बेचा उस पर पुनः गोरधन सिंह वगैरह ने कब्जा कर लिया हो ।"

10. इस प्रकार, प्रतिवादी/आवेदक, वादियों के इस दावे और साक्ष्य का खंडन करने में असफल रहे हैं कि वे प्रश्नगत भूखंड का विधिक और शांतिपूर्ण कब्जा रखते थे और प्रतिवादियों ने विधि की सम्यक् प्रक्रिया को अपनाए बिना वादियों को बेकब्जा कर दिया था और इस प्रकार वर्तमान मामले में स्पष्ट रूप से 1963 के अधिनियम की धारा 6 लागू होती है । श्री आर. के. थानवी, ज्येष्ठ अधिवक्ता द्वारा जिन निर्णयों का अवलंब लिया गया है, वे वर्तमान मामले के तथ्यों को लागू नहीं होते हैं क्योंकि वादियों ने, अपने पक्षकथन को स्पष्ट रूप से साबित कर दिया है कि वर्ष 2002 में वाद फाइल किए जाने से छह मास पूर्व स्वयं विक्रेताओं द्वारा उन्हें उनके स्वयं भूखंड से बलपूर्वक और अवैध तरीके से बेकब्जा कर दिया गया था ।

11. अतः इस न्यायालय की यह सुविचारित राय यह है कि वादी हकदार है और विद्वान् निचले न्यायालय द्वारा उनके पक्ष में पारित डिक्री कायम रखे जाने योग्य है । इस प्रकार प्रतिवादियों के वर्तमान पुनरीक्षण आवेदन गुणागुण रहित पाए जाते हैं और एतद्द्वारा उन्हें खर्चों सहित खारिज किया जाता है, जिनकी राशि प्रत्येक मामले में 10,000/- रुपए निश्चित की जाती है । प्रतिवादी, आज की तारीख से अर्थात् तारीख 10 जून, 2016 तीन मास की अवधि के भीतर से या उससे पूर्व वादियों/प्रत्यर्थियों को भूखंडों का कब्जा सौंप देंगे और वे वाद के फाइल किए जाने की तारीख से भूखंडों के वास्तविक कब्जे को सौंपे जाने की तारीख तक 300/- रुपए प्रतिमास की दर से भूखंडों के उपयोग और उन्हें अधिभोग में

रखने के लिए अन्तःकालीन लाभ का संदाय भी करेंगे और अन्तःकालीन लाभ या खर्चों का संदाय करने में किसी व्यतिक्रम की दशा में वाद में अन्तर्वलित भूखंडों के खाली कब्जे को प्रदान करने के लिए मंजूर की गई अवधि कम कर दी जाएगी और कब्जे की डिक्री तुरन्त निष्पादनीय हो जाएगी । अपीलार्थी/प्रतिवादी अन्तःकालीन लाभ के सभी बकायों का भी संदाय करेंगे और आज की तारीख से तीन मास की अवधि के भीतर उनका संदाय वादियों और प्रत्यर्थियों को करेंगे अन्यथा उस पर 9 प्रतिशत वार्षिक ब्याज की दर प्रभारित की जाएगी । अपीलार्थी/प्रतिवादी पूर्वोक्त अवधि के दौरान वाद की भूमि या उसके किसी भाग को किसी अन्य व्यक्ति के पक्ष में उप पट्टे पर नहीं देंगे, उसका समनुदेशन नहीं करेंगे या उसके कब्जे से विलग नहीं होंगे और उस पर किसी तृतीय पक्षकार का हित सृजन नहीं करेंगे और यदि ऐसा किया जाता है तो उसे शून्य माना जाएगा और ऐसे तृतीय पक्षकार भी इस डिक्री से आबद्ध होंगे । यह स्पष्ट किया जाता है कि यदि वाद भूमि का शांतिपूर्ण और खाली कब्जा तारीख 10 जून, 2016 को या उससे पूर्व वादियों/प्रत्यर्थियों को सौंपा नहीं जाता है या ऊपर दिए गए निर्देशानुसार अंतःकालीन लाभों का संदाय नहीं किया जाता है तो सामान्य अनुक्रम में डिक्री के त्वरित निष्पादन के साथ वादी/प्रत्यर्थी इस न्यायालय की अवमान अधिकारिता का लाभ उठाने के लिए भी हकदार होंगे । इस निर्णय की एक प्रति दोनों विद्वान् निचले न्यायालयों और दोनों पक्षकारों को तुरन्त भेजी जाए ।

पुनरीक्षण आवेदनों को खारिज किया गया है ।

मही./क.

---

*बजाज आलियांज जनरल इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड

बनाम

धन्नाराम और अन्य

तथा

बजाज आलियांज जनरल इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड

बनाम

शम्भूसिंह और अन्य

तारीख 13 अप्रैल, 2016

न्यायमूर्ति महेश चन्द्र शर्मा

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 163क और 173 – दुर्घटना – प्रतिकर के लिए दावा – बीमा कंपनी द्वारा अपने दायित्व से इनकार करना – जहां बीमा कंपनी, बीमाकृत के किसी दोष के कारण घटित दुर्घटना में प्रतिकर संदाय करने के अपने दायित्व से इनकार करती है तथापि, यदि उसे प्रतिकर संदाय करने के लिए दायी ठहराया जाता है और उसके द्वारा प्रतिकर संदत्त कर दिया जाता है तो वह बीमा पालिसी की शर्तों और निबंधनों के भंग के आधार पर बीमाकृत से ऐसी प्रतिकर धनराशि वसूल सकती है ।

वर्तमान मामले में, क्लेमेन्ट्स (दावेदार) ने अधिकरण के समक्ष पृथक्-पृथक् क्लेम (दावा) याचिकाएं इन तथ्यों के साथ प्रस्तुत कीं कि दिनांक 29 अक्तूबर, 2006 को रात 8 बजे पुलिस थाना गेगल के क्षेत्र में थाने से 13 कि. मी. दूरी पर विपक्षी संख्या 1 ने विपक्षी संख्या 2 की मोटरसाइकिल संख्या आर जे 01 एस सी 3745 (जिसे आगे "दुर्घटना कारित करने वाली मोटरसाइकिल" कहा जाएगा) को तेज गति व असावधानी से चलाकर प्रार्थीगण को मोटरसाइकिल पर जाते हुए को टक्कर मारी जिससे उनके गंभीर चोटें आईं । घटना की प्रथम इत्तिला सूचना दर्ज कराई गई जिसके आधार पर आरोप पत्र विपक्षी संख्या 1 के विरुद्ध प्रस्तुत हो चुका है । चोटों से प्रार्थीगण को नुकसान कारित हुआ । प्रत्यर्थीगण-क्लेमेन्ट्स (दावेदार) द्वारा

---

* मूल निर्णय हिन्दी में है ।

प्रस्तुत क्लेम (दावा) याचिकाओं के नोटिस याचिकाओं के विपक्षीगण को जारी किए गए । विपक्षीगण की ओर से जवाब प्रस्तुत किया गया, जिसमें क्लेम (दावा) याचिका के तथ्यों से इनकार करते हुए याचिका खारिज किए जाने की प्रार्थना की गई । विद्वान् अधिकरण ने पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर पांच विवाद्यक विरचित किए । तत्पश्चात् साक्ष्य लेखबद्ध किए जाने एवं बहस सुनने के उपरान्त विद्वान् अधिकरण ने अपने निर्णय दिनांक 12 फरवरी, 2008 के द्वारा प्रत्यर्थी-क्लेमेन्ट्स (दावेदार) धन्नाराम को 10,49,000/- रुपए एवं प्रत्यर्थी-क्लेमेंट्स (दावेदार) शंभूसिंह को 1,58,000/- रुपए क्षतिपूर्ति राशि दिलाए जाने का आदेश दिया, जिससे व्यथित होकर अपीलार्थी बीमा कम्पनी की ओर से उपरोक्त वर्णित दोनों सिविल विविध अपीलें इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत कर अपीलाधीन निर्णय को अपास्त किए जाने की प्रार्थना की गई है । अपीलें खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय ने दोनों पक्षों के तर्कों पर विचार किया । डिस्चार्ज टिकट प्रदर्श 42 धन्नाराम का है जिसमें यह लिखा हुआ है कि मोटरसाइकिल स्लिप होने से चोटें आई हैं । बेड हेड टिकट प्रदर्श 44 पर यह लिखा हुआ है कि मोटरसाइकिल के स्लिप होने से दुर्घटना हुई है जिससे चोटें आईं । जहां तक डिस्चार्ज टिकट का प्रश्न है यह डिस्चार्ज टिकट बेड हेड टिकट के आधार पर बनाया गया है । यह प्राथमिक दस्तावेज नहीं है । बेड हेड टिकट प्रदर्श 44 में यह अंकित है कि सड़क पर दिनांक 29 अक्तूबर, 2006 को रात को 8 बजे मोटरसाइकिल के स्लिप होने से दुर्घटना हुई है । इस वाक्य का यह अर्थ नहीं है कि प्रार्थीगण मोटरसाइकिल पर थे और वे स्लिप हो गए जिससे उनके चोटें आईं थीं । इसका यह भी अर्थ हो सकता है कि कोई मोटरसाइकिल स्लिप हुई जिससे प्रार्थीगण के चोटें आईं । वैसे भी जो उक्त तथ्य लिखा हुआ है उसके नीचे प्रार्थी धन्नाराम या उसके किसी परिजन के हस्ताक्षर नहीं हो रखे हैं । ऐसी परिस्थिति में यह नहीं माना जा सकता कि यह तथ्य प्रार्थी ने लिखाया या उसके परिजन ने लिखाया । साक्षी प्रा. सा. 2 शंभूसिंह का यह कथन है कि टक्कर मारने वाले भी अस्पताल में आ गए थे । यह भी संभव हो कि जिस मोटरसाइकिल से प्रार्थीगण की टक्कर हुई थी उन्होंने उक्त प्रकार से यह तथ्य लिखा दिया हो । अतः इस तथ्य के बेड हेड टिकट में अंकित होने के आधार पर मात्र यह निष्कर्ष नहीं निकलता है कि प्रार्थीगण मोटरसाइकिल पर थे और उनकी स्वयं की मोटरसाइकिल स्लिप हुई जिससे उनके चोटें आईं । दुर्घटना की रिपोर्ट 24 घंटे के भीतर दर्ज करवा

दी गई है । मोटरसाइकिल चालक और मालिक न तो प्रार्थीगण की जाति के हैं न ही उनके गांव में रह रहे हैं । ऐसा तथ्य भी सामने नहीं आया है कि प्रार्थीगण उनको पहले से जानते थे । ऐसी परिस्थिति में प्रार्थीगण को उक्त मोटरसाइकिल के नम्बर की जानकारी किस प्रकार से हुई और किस प्रकार वे उनकी मोटरसाइकिल का नम्बर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में अंकित करते । अतः जो तर्क विपक्षी सं. 3 द्वारा रखा गया है वह स्वीकार किए जाने योग्य नहीं रहता है । उक्त साक्षियों के कथनों में प्रतिपरीक्षा के दौरान ऐसा कोई तथ्य सामने नहीं आया है जिससे उनके साक्ष्य पर विश्वास न किया जा सके । विपक्षी सं. 1 के विरुद्ध आरोप पत्र प्रस्तुत हो चुका है । विपक्षीगण ने उक्त साक्षियों के कथनों के खण्डन में किसी प्रकार का साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है । ऐसी परिस्थिति में उक्त चश्मदीद साक्षियों के कथन विश्वसनीय हो जाते हैं । अनुसंधान के दौरान धारा 133 एम. वी. ऐक्ट में नोटिस प्रदर्श 4 विपक्षी सं. 2 को दिया गया है जिसमें यह सूचना दी है कि घटना के समय विपक्षी सं. 1 वाहन को चला रहा था । मोटरसाइकिल के रजिस्ट्रेशन प्रमाणपत्र प्रदर्श 6 के अनुसार मोटरसाइकिल का मालिक विपक्षी सं. 2 है । अतः यह तथ्य साबित हो जाता है कि विपक्षी सं. 1 विपक्षी सं. 2 की मोटरसाइकिल को उसके लिए तेज गति व लापरवाही से चलाकर प्रार्थीगण को साइकिल पर जाते समय को टक्कर मारी । यह देखना है कि इस दुर्घटना में प्रार्थीगण के किस प्रकार की चोटें कारित हुईं थीं ? साक्षी प्रा. सा. धन्नाराम के अनुसार इस घटना में उसके दाएं पैर में दो जगह की हड्डी टूट गई थी । इलाज के दौरान पैर काट दिया गया था । उसके चोट प्रतिवेदन प्रदर्श 8 के अनुसार उसके शरीर पर तीन चोटें आना पाई गईं हैं जिनके एक्सरे रिपोर्ट प्रदर्श 9 के अनुसार उसके दाएं पैर की टीबिया व फीमर की हड्डी टूट गई थी । अतः यह तथ्य साबित हो जाता है कि प्रार्थी धन्नाराम के इस दुर्घटना में दो चोटें गंभीर प्रकृति की थीं । उसका विकलांगता प्रमाणपत्र प्रदर्श 41 है जिसके अनुसार उसे 70 प्रतिशत अस्थायी रूप से विकलांग पाया है क्योंकि उसके पैर घुटने के थोड़ा नीचे से इस दुर्घटना में आई चोटों के कारण काटना पड़ा था । मैंने स्वयं इस साक्षी के कथन लेखबद्ध किए हैं । घुटने से थोड़ा नीचे से दायां पैर मौजूद नहीं था नीचे का भाग मिसिंग था । अतः यह तथ्य साबित हो जाता है कि जो चोटें दाएं पैर में प्रार्थी के लगी थीं उसके कारण उसका दायां पैर घुटने के नीचे से काट दिया गया इसलिए उसे 70 प्रतिशत स्थायी रूप से विकलांग बताया गया है । अतः यह तथ्य साबित हो

जाता है कि इस दुर्घटना में प्रार्थी के साधारण व गंभीर चोटें आईं जिनके कारण वह 70 प्रतिशित स्थायी रूप से विकलांग हो गया था । साक्षी प्रा. सा. 2 शंभूसिंह का कथन है कि इस दुर्घटना में उसके दाएं कंधे, दाईं जांघ, दाएं घुटने पर चोटें आई थीं और हयूमरस की बोर का अस्थिभंग हो गया था । उसका चोट प्रतिवेदन प्रदर्श 45 है जिसके अनुसार उसके शरीर पर चार चोटें आना पाई गईं हैं । एक्सरे रिपोर्ट प्रदर्श 46 के अनुसार दाएं हाथ का हयूमरस बोन में अस्थिभंग होना पाया गया है । उसका विकलांगता प्रमाणपत्र प्रदर्श 48 है जिसके अनुसार उसके हाथ की गंभीर चोट के कारण उसे 15 प्रतिशत स्थायी रूप से विकलांग पाया गया है । अतः यह तथ्य साबित हो जाता है कि इस दुर्घटना में प्रार्थी शंभूसिंह के चार चोटें आईं जिनमें से दाएं हाथ की गंभीर चोट के कारण वह 15 प्रतिशत स्थायी रूप से विकलांग हो गया । इस प्रकार विवाद्यक का निर्णय दोनों प्रकरणों के प्रार्थीगण के पक्ष में किया जाता है । विवाद्यक सं. 3 – इस विवाद्यक को साबित करने का भार प्रा. सा. 285/7 धन्नाराम/शंभूसिंह के प्रार्थी पर है । यह तय किया जाना है कि इस प्रकरण का प्रार्थी कितना प्रतिकर प्राप्त करने का अधिकारी है । प्रार्थी धन्नाराम के अनुसार उसके इलाज पर 60 हजार रुपए की राशि खर्च हो गई थी । इलाज पेटे बिल प्रदर्श 11 से 40 प्रस्तुत किए गए हैं जिनका योग लगाए जाने पर यह राशि 20,554/- रुपए आती है जिसे निकटतम 20,500/- रुपए किया जा रहा है जिसे प्रार्थी इलाज पेटे बतौर प्रतिकर प्राप्त करने का अधिकारी है । साक्षी प्रा. सा. 1 धन्नाराम का इलाज के दौरान दायां पैर घुटने के नीचे से काट दिया गया था वह दो बार जे. एल. एन. अस्पताल, अजमेर में भर्ती रहा था । प्रथम बार डिस्चार्ज टिकट प्रदर्श 42 के अनुसार वह 18 दिन तक भर्ती रहा था, उसका आपरेशन भी किया था । पुनः उसे दिनांक 19 अप्रैल, 2007 को भर्ती किया गया और उसे दिनांक 17 मई, 2007 को छुट्टी दी गई है । इस प्रकार वह पुनः 28 दिन तक जे. एल. एन. अस्पताल, अजमेर में भर्ती रहा था । उसका आपरेशन किया गया था । इस प्रकार वह कुल मिलाकर 46 दिन तक जे. एल. एन. अस्पताल, अजमेर में भर्ती रह चुका है । दो आपरेशन किए गए हैं जिनकी पीड़ा उसे झेलनी पड़ी है, पैर कटने की पीड़ा भी उसे झेलनी पड़ी है, लम्बी अवधि तक पलंग पर रहकर उसने भारी शारीरिक व मानसिक पीड़ा उठाई है । अतः इन सब मदों में से उसे 1,00,000/- रुपए का प्रतिकर दिला रहा हूं । प्रार्थी को 70 प्रतिशत स्थायी विकलांगता पाया गया है उसके दाएं पैर के घुटने के नीचे से काट दिया

गया है । प्रतिकर देते समय अधिकरण को यह तथ्य भी तय करना होता है कि भविष्य में विकलांगता के कारण क्या-क्या असुविधाएं होंगी । क्या-क्या आर्थिक नुकसान पीड़ित को उठाना पड़ेगा । क्योंकि प्रार्थी का दायां पैर घुटने के नीचे से काट कर अलग कर दिया गया है । अतः प्रार्थी को भविष्य में भारी मानसिक पीड़ा उठानी पड़ेगी, दर्द भी उठाना पड़ेगा, चलने-फिरने व उठने-बैठने में उसे असुविधा होगी, दैनिक क्रियाओं के लिए उसे दूसरों पर आश्रित रहना पड़ेगा । जीवन की सुख-सुविधाओं से वंचित होना पड़ेगा । उसका वैवाहिक जीवन भी विपरीत से प्रभावित होगा । पीड़ित/प्रार्थी कुण्ठा से ग्रस्त होगा, उसके जीवन जीने की प्रत्याशा कम होगी । उसे कहीं भी आने-जाने के लिए दूसरों पर आश्रित रहना पड़ेगा । प्रार्थी का कथन है कि वह जे. एल. एन. अस्पताल, अजमेर में भर्ती रहा तब उसके दो सहायक हमेशा रहे जिनके खाने, पीने, रहने का प्रतिदिन प्रति व्यक्ति 200/- रुपए खर्च हुआ था व प्रार्थी की विशिष्ट खुराक पर भी खर्चा हुआ था । मैंने उसके इस तर्क पर विचार किया । यह सही है कि प्रार्थी 46 दिन तक जे. एल. एन अस्पताल, अजमेर में भर्ती रहा था कम से कम 24 घंटे दो सहायकों की आवश्यकता थी जिनके खाने, पीने, रहने, रहने के स्थान से अस्पताल आने-जाने में खर्चा लगा है । प्रार्थी की विशिष्ट खाने में भी 46 दिन तक खर्चा लगा है । हालांकि इन छोटे-छोटे खर्चों के बिल एकत्रित किए जाने की आवश्यकता नहीं है परन्तु ये ऐसे खर्चे हैं जो प्रार्थी द्वारा किए गए हैं । मैं इस संबंध में खर्च का अनुमान प्रतिदिन प्रति व्यक्ति 100/- रुपए लगा रहा हूं 3 व्यक्तियों का यह खर्चा 100/- रुपए प्रतिदिन के हिसाब से 46 दिन का 13,800/- रुपए आता है जिसने निकटतम 14,000/- रुपए किया जा रहा है जिसे प्रार्थी प्रतिकर के रूप में प्राप्त करने का अधिकारी है । प्रार्थी का कथन है कि उसे इलाज हेतु गांव से अजमेर लाया गया और वापिस गांव ले जाया गया जिसमें 5,000/- रुपए टैक्सी का खर्चा लगा था । क्योंकि प्रार्थी के पैर में गंभीर चोट थी इसलिए निश्चित तौर से टैक्सी से उसे लाया व ले जाया गया है । हालांकि टैक्सी के बिल प्रस्तुत नहीं किए गए हैं । प्रार्थी ने अपने खुण्डियास जिला नागौर का रहने वाला बताया है । नागौर अजमेर का सीमावर्ती जिला है दूरी को देखते हुए यह खर्च का अनुमान 2,500/- रुपए लगा रहा हूं जिसे वह प्रतिकर के तौर पर प्राप्त करने का अधिकारी है । प्रार्थी का कथन है कि उसके पैर के कट जाने के कारण वह कोई कार्य नहीं कर सकता है । वह मकान बनाने का मिस्त्री था और 5,000/- रुपए मासिक कमाता था । यह

सही है कि प्रार्थी का दाएं पैर के कट कर अलग हो जाने पर ऐसा व्यक्ति जिसका एक ही पैर रहे वह मकान बनाने के मिस्त्री को साइड पर जाना पड़ता है, खड्डों में उतरना पड़ता है, खड़े रहना पड़ता है, दीवार पर चढ़ना पड़ता है, नसैनी पर चढ़ना पड़ता है । ऐसी परिस्थिति में वह बिल्कुल भी ऐसा काम नहीं कर सकता है और ऐसे व्यक्ति को आय का शत-प्रतिशत नुकसान होगा । उपरोक्त माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय आर. डी. हट्टंगणी की रोशनी में प्रार्थी को जो भविष्य में आर्थिक नुकसान होगा उसका प्रतिकर भी दिलाना होगा । प्रार्थी ने अपनी आय 5,000/- रुपए मासिक होना बताई है । क्लेमेंट की यह प्रवृत्ति होती है कि वे अपनी आय को अधिक से अधिक बताते हैं जिससे कि अधिक प्रतिकर राशि प्राप्त की जा सके । मैं समस्त परिस्थिति को देखते हुए उसकी मासिक आय 3,000/- रुपए तक कर रहा हूं । प्रार्थी 34 वर्ष का व्यक्ति है । अतः मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 163ए में दी गई द्वितीय अनुसूची के अनुसार 30 से 35 वर्ष के व्यक्ति के लिए 17 का गुणक लगाए जाने का प्रावधान है । उक्त गुणक के गुणा करके प्रतिकर की राशि का निर्धारण किया जाना न्यायोचित है । फलस्वरूप प्रतिकर की राशि 3000 × 12 × 17 = 6,12,000/- रुपए आती है । अतः जिन-जिन मदों में प्रार्थी को प्रतिकर दिलाया गया है उन राशियों का योग 10,49,000/- रुपए आता है जिसे वह प्राप्त करने का अधिकारी है । इस प्रकार इस विवाद्यक का निर्णय प्रार्थी के पक्ष में किया जाता है । विद्वान् अधिकरण द्वारा अपने निर्णय में अंकित किए गए उपरोक्त वर्णित निष्कर्ष से मैं पूर्णतया सहमत हूं । अपीलाधीन निर्णय का अवलोकन करने के उपरान्त मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि विद्वान् अधिकरण पत्रावली पर उपलब्ध साक्ष्य का सही रूप से मूल्यांकन करने के उपरान्त अपना निर्णय पारित किया है । मेरे मत में विद्वान् अधिकरण का निर्णय पूर्णतया विधिसम्मत है, जिसमें हस्तक्षेप किए जाने का कोई आधार नहीं है । मैं अपीलार्थी की ओर से प्रस्तुत अपीलों में बल नहीं पाता हूं । अतः अपीलार्थी-बीमा कम्पनी की ओर से प्रस्तुत उपरोक्त वर्णित दोनों अपीलों को निरस्त किया जाता है । अपील के साथ संलग्न स्थगन प्रार्थनापत्र भी निरस्त किए जाते हैं । (पैरा 11, 12, 13, 14, 15, 16, 17, 18, 19, 20, 21, 22, 23, 24 और 25)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2008 की एकलपीठ सिविल विविध अपील संख्या 949 और 2008 की एकलपीठ सिविल विविध अपील सं. 950.

मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन अपीलें ।

अपीलार्थी की ओर से श्री वीरेन्द्र अग्रवाल

प्रत्यर्थी/दावेदार की ओर से श्री संदीप पाठक

न्यायमूर्ति महेश चन्द्र शर्मा – अपीलार्थी-बीमा कंपनी की ओर से उपरोक्त वर्णित सिविल विविध अपील क्रमशः 949/2008 एवं 950/2008 मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण, अजमेर द्वारा पारित निर्णय दिनांक 2 फरवरी, 2008 के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है, जिसके द्वारा प्रत्यर्थी-क्लेमेन्ट्स (दावेदार) धन्नाराम को 10,49,000/- रुपए एवं प्रत्यर्थी-क्लेमेन्ट्स (दावेदार) शंभूसिंह को 1,58,000/- रुपए क्षतिपूर्ति राशि दिलाए जाने का आदेश दिया गया । चूंकि उपरोक्त वर्णित दोनों अपीलों के अंतर्गत अधिकरण के एक ही निर्णय को दी गई है, जिससे इनका निस्तारण इस एक ही निर्णय के द्वारा किया जा रहा है ।

2. प्रकरण के तथ्य इस प्रकार हैं कि क्लेमेन्ट्स (दावेदार) ने अधिकरण के समक्ष पृथक्-पृथक् क्लेम (दावा) याचिकाएं इन तथ्यों के साथ प्रस्तुत की कि दिनांक 29 अक्तूबर, 2006 को रात 8 बजे पुलिस थाना गेगल के क्षेत्र में थाने से 13 किमी. दूरी पर विपक्षी संख्या 1 ने विपक्षी संख्या 2 की मोटरसाइकिल संख्या आर जे 01 एस सी 3745 (जिसे आगे दुर्घटना कारित करने वाली मोटरसाइकिल कहा जाएगा) को तेज गति व असावधानी से चलाकर प्रार्थीगण को मोटरसाइकिल पर जाते हुए को टक्कर मारी जिससे उनके गंभीर चोटें आईं । घटना की प्रथम इत्तिला सूचना दर्ज कराई गई जिसके आधार पर आरोप पत्र विपक्षी संख्या 1 के विरुद्ध प्रस्तुत हो चुका है । चोटों से प्रार्थीगण को नुकसान कारित हुआ ।

3. प्रत्यर्थीगण-क्लेमेन्ट्स (दावेदार) द्वारा प्रस्तुत क्लेम (दावा) याचिकाओं के नोटिस याचिकाओं के विपक्षीगण को जारी किए गए । विपक्षीगण की ओर से जवाब प्रस्तुत किया गया, जिसमें क्लेम (दावा) याचिका के तथ्यों से इनकार करते हुए याचिका खारिज किए जाने की प्रार्थना की गई । विद्वान् अधिकरण ने पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर पांच विवाद्यक विरचित किए । तत्पश्चात् साक्ष्य लेखबद्ध किए जाने एवं बहस सुनने के उपरान्त विद्वान् अधिकरण ने अपने निर्णय दिनांक 12 फरवरी, 2008 के द्वारा प्रत्यर्थी-क्लेमेन्ट्स (दावेदार) धन्नाराम को 10,49,000/- रुपए एवं प्रत्यर्थी-क्लेमेंट्स (दावेदार) शंभूसिंह को 1,58,000/- रुपए क्षतिपूर्ति राशि

दिलाए जाने का आदेश दिया, जिससे व्यथित होकर अपीलार्थी-बीमा कम्पनी की ओर से उपरोक्त वर्णित दोनों सिविल विविध अपीलें इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत कर अपीलाधीन निर्णय को अपास्त किए जाने की प्रार्थना की गई है ।

4. अपीलार्थी के विद्वान् अधिवक्ता का तर्क है कि विद्वान् अधिकरण ने अपना निर्णय पारित करते समय विधि की अपेक्षित अपेक्षाओं पर ध्यान नहीं दिया । उनका तर्क है कि विद्वान् अधिकरण ने अपना निर्णय पारित करने से पूर्व पत्रावली पर उपलब्ध साक्ष्य का सही रूप से विवेचन व विश्लेषण नहीं किया । अपीलाधीन निर्णय विधिविरुद्ध है, अतः अपीलाधीन निर्णय को अपास्त किया जाए ।

5. इसके विपरीत प्रत्यर्थीगण-क्लेमेन्ट्स (दावेदार) के विद्वान् अधिवक्ता का तर्क है कि विद्वान् अधिकरण ने अपना निर्णय पारित करते समय विधि की समस्त अपेक्षित अपेक्षाओं को ध्यान में रखा है उनका कथन है कि विद्वान् अधिकरण ने अपना निर्णय पारित करने से पूर्व पत्रावली पर उपलब्ध साक्ष्य का सही रूप से मूल्यांकन किया है । उनका यह भी कथन है कि अपीलाधीन निर्णय में किसी प्रकार से हस्तक्षेप किए जाने का कोई आधार नहीं है । अतः अपीलार्थी की ओर से प्रस्तुत अपीलों को अपास्त किया जाए ।

6. मैंने उभयपक्ष के विद्वान् अधिवक्तागण के तर्कों पर मनन किया । अपीलाधीन निर्णय का ध्यानपूर्वक अवलोकन किया । विद्वान् अधिकरण ने विवाद्यक संख्या 1 व 3 के संबंध में अपने निर्णय में निम्न निष्कर्ष अंकित किया है ।

7. विवाद्यक सं. 1 – इस विवाद्यक को साबित करने का भार प्रार्थीगण पर था । जिन्हें यह साबित करना है कि विपक्षी सं. 1 ने विपक्षी सं. 2 की दुर्घटना कारित करने वाली मोटरसाइकिल को दिनांक 29 अक्तूबर, 2006 को रात 8 बजे करीब घटनास्थल पर तेज गति/असावधानी से चलाकर प्रार्थीगण को साइकिल पर जाते हुए को टक्कर मारी जिससे उनके गंभीर चोटें आईं थीं ?

8. साक्षी प्रा. सा. धन्नाराम का यह कथन है कि वह दिनांक 29 अक्तूबर, 2006 को शंभूसिंह के साथ साइकिल पर किशनगढ़ की तरफ जा रहा था डागोलाई ढाणी के पास में किशनगढ़ की तरफ से विपक्षी सं. 1

दुर्घटना कारित करने वाली मोटरसाइकिल को तेज गति से लापरवाही से चलाकर गलत साइड आया व उनकी साइकिल को टक्कर मारी जिससे उनके चोटें आईं । इस कथन की पुष्टि प्रा. सा. 2 शंभूसिंह ने अपने साक्ष्य से की है और यह प्रतिपरीक्षा में बताया है कि वह साइकिल चला रहा था और धन्नाराम पीछे बैठा हुआ था । साक्षी प्रा. सा. 1 धन्नाराम ने यह भी बताया है कि इस दुर्घटना की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्रदर्श 1 दर्ज कराई गई थी जिसके आधार पर आरोप पत्र प्रदर्श 2 विपक्षी सं. 1 के विरुद्ध प्रस्तुत हो चुका है ।

9. विद्वान् अधिवक्ता विपक्षी सं. 3 का तर्क है कि घटना की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्रदर्श 1 एक दिन विलंब से दर्ज कराई गई थी । उनका उक्त तर्क स्वीकार किए जाने योग्य नहीं है । घटना की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट 24 घंटे के भीतर दर्ज करवा दी गई है । क्योंकि प्रार्थीगण के गंभीर चोटें थीं । ऐसी परिस्थिति में तुरंत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करवाना संभव नहीं था । इस आधार पर उनका प्रकरण झूठा नहीं माना जा सकता है ।

10. विद्वान् अधिवक्ता विपक्षी सं. 3 का तर्क है कि जब धन्नाराम अस्पताल में भर्ती हुआ था तब उसने यह लिखाया था कि मोटरसाइकिल स्लिप होने से चोटें आईं हैं । उनका तर्क है कि बाद में सोच-समझकर उक्त मोटरसाइकिल को झूठा लिप्त कर प्रकरण दर्ज करवा दिया गया । इन तर्कों का विरोध प्रार्थीगण की तरफ से किया गया ।

11. मैंने दोनों पक्षों के तर्कों पर विचार किया । डिस्चार्ज टिकट प्रदर्श 42 धन्नाराम का है जिसमें यह लिखा हुआ है कि मोटरसाइकिल स्लिप होने से चोटें आईं हैं । बेड हेड टिकट प्रदर्श 44 पर यह लिखा हुआ है कि मोटरसाइकिल के स्लिप होने से दुर्घटना हुई है जिससे चोटें आईं । जहां तक डिस्चार्ज टिकट का प्रश्न है यह डिस्चार्ज टिकट बेड हेड टिकट के आधार पर बनाया गया है । यह प्राथमिक दस्तावेज नहीं है । बेड हेड टिकट प्रदर्श 44 में यह अंकित है कि सड़क पर दिनांक 29 अक्तूबर, 2006 को रात को 8 बजे मोटरसाइकिल के स्लिप होने से दुर्घटना हुई है । इस वाक्य का यह अर्थ नहीं है कि प्रार्थीगण मोटरसाइकिल पर थे और वे स्लिप हो गए जिससे उनके चोटें आईं थीं । इसका यह भी अर्थ हो सकता है कि कोई मोटरसाइकिल स्लिप हुई जिससे प्रार्थीगण के चोटें आईं । वैसे भी जो उक्त तथ्य लिखा हुआ है उसके नीचे प्रार्थी धन्नाराम या उसके किसी परिजन के हस्ताक्षर नहीं हो रखे हैं । ऐसी परिस्थिति में यह नहीं माना जा

सकता कि यह तथ्य प्रार्थी ने लिखाया या उसके परिजन ने लिखाया ।

12. साक्षी प्रा. सा. 2 शंभूसिंह का यह कथन है कि टक्कर मारने वाले भी अस्पताल में आ गए थे । यह भी संभव हो कि जिस मोटरसाइकिल से प्रार्थीगण की टक्कर हुई थी उन्होंने उक्त प्रकार से यह तथ्य लिखा दिया हो । अतः इस तथ्य के बेड हेड टिकट में अंकित होने के आधार पर मात्र यह निष्कर्ष नहीं निकलता है कि प्रार्थीगण मोटरसाइकिल पर थे और उनकी स्वयं की मोटरसाइकिल स्लिप हुई जिससे उनके चोटें आईं । दुर्घटना की रिपोर्ट 24 घंटे के भीतर दर्ज करवा दी गई है । मोटरसाइकिल चालक और मालिक न तो प्रार्थीगण की जाति के हैं न ही उनके गांव में रह रहे हैं । ऐसा तथ्य भी सामने नहीं आया है कि प्रार्थीगण उनको पहले से जानते थे । ऐसी परिस्थिति में प्रार्थीगण को उक्त मोटरसाइकिल के नम्बर की जानकारी किस प्रकार से हुई और किस प्रकार वे उनकी मोटरसाइकिल का नम्बर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में अंकित करते । अतः जो तर्क विपक्षी सं. 3 द्वारा रखा गया है वह स्वीकार किए जाने योग्य नहीं रहता है ।

13. उक्त साक्षियों के कथनों में प्रतिपरीक्षा के दौरान ऐसा कोई तथ्य सामने नहीं आया है जिससे उनकी साक्ष्य पर विश्वास न किया जा सके । विपक्षी सं. 1 के विरुद्ध आरोप पत्र प्रस्तुत हो चुका है । विपक्षीगण ने उक्त साक्षियों के कथनों के खण्डन में किसी प्रकार का साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है । ऐसी परिस्थिति में उक्त चश्मदीद साक्षियों के कथन विश्वसनीय हो जाते हैं ।

14. अनुसंधान के दौरान धारा 133 एम. वी. ऐक्ट में नोटिस प्रदर्श 4 विपक्षी सं. 2 को दिया गया है जिससे यह सूचना दी है कि घटना के समय विपक्षी सं. 1 वाहन को चला रहा था । मोटरसाइकिल के रजिस्ट्रेशन प्रमाणपत्र प्रदर्श 6 के अनुसार मोटरसाइकिल का मालिक विपक्षी सं. 2 है । अतः यह तथ्य साबित हो जाता है कि विपक्षी सं. 1 विपक्षी सं. 2 की मोटरसाइकिल को उसके लिए तेज गति व लापरवाही से चलाकर प्रार्थीगण को साइकिल पर जाते समय टक्कर मारी ।

15. यह देखना है कि इस दुर्घटना में प्रार्थीगण के किस प्रकार की चोटें कारित हुईं थीं ? साक्षी प्रा. सा. धन्नाराम के अनुसार इस घटना में उसके दाएं पैर में दो जगह की हड्डी टूट गई थी । इलाज के दौरान पैर

काट दिया गया था । उसके चोट प्रतिवेदन प्रदर्श 8 के अनुसार उसके शरीर पर तीन चोटें आना पाई गईं हैं जिनके एक्सरे रिपोर्ट प्रदर्श 9 के अनुसार उसके दाएं पैर की टीबिया व फीमर की हड्डी टूट गई थी । अतः यह तथ्य साबित हो जाता है कि प्रार्थी धन्नाराम के इस दुर्घटना में दो चोटें गंभीर प्रकृति की थीं । उसका विकलांगता प्रमाणपत्र प्रदर्श 41 है जिसके अनुसार उसे 70 प्रतिशत अस्थायी रूप से विकलांग पाया है क्योंकि उसके पैर घुटने के थोड़ा नीचे से इस दुर्घटना में आई चोटों के कारण काटना पड़ा था । मैंने स्वयं इस साक्षी के कथन लेखबद्ध किए हैं । घुटने से थोड़ा नीचे से दायां पैर मौजूद नहीं था नीचे का भाग मिसिंग था । अतः यह तथ्य साबित हो जाता है कि जो चोटें दाएं पैर में प्रार्थी के लगी थीं उसके कारण उसका दायां पैर घुटने के नीचे से काट दिया गया इसलिए उसे 70 प्रतिशत स्थायी रूप से विकलांग बताया गया है । अतः यह तथ्य साबित हो जाता है कि इस दुर्घटना में प्रार्थी के साधारण व गंभीर चोटें आईं जिनके कारण वह 70 प्रतिशत स्थायी रूप से विकलांग हो गया था ।

16. साक्षी प्रा. सा. 2 शंभूसिंह का कथन है कि इस दुर्घटना में उसके दाएं कंधे, दाईं जांघ, दाएं घुटने पर चोटें आईं थीं और हयूमरस की बोन का अस्थिभंग हो गया था । उसका चोट प्रतिवेदन प्रदर्श 45 है जिसके अनुसार उसके शरीर पर चार चोटें आना पाई गईं हैं । एक्सरे रिपोर्ट प्रदर्श 46 के अनुसार दाएं हाथ का हयूमरस बोन में अस्थिभंग होना पाया गया है । उसका विकलांगता प्रमाणपत्र प्रदर्श 48 है जिसके अनुसार उसके हाथ की गंभीर चोट के कारण उसे 15 प्रतिशत स्थायी रूप से विकलांग पाया गया है । अतः यह तथ्य साबित हो जाता है कि इस दुर्घटना में प्रार्थी शंभूसिंह के चार चोटें आईं जिनमें से दाएं हाथ की गंभीर चोट के कारण वह 15 प्रतिशत स्थायी रूप से विकलांग हो गया । इस प्रकार विवाद्यक का निर्णय दोनों प्रकरणों के प्रार्थीगण के पक्ष में किया जाता है ।

17. विवाद्यक सं. 3 – इस विवाद्यक को साबित करने का भार प्रा. सा. 285/7 धन्नाराम/शंभूसिंह के प्रार्थी पर है । यह तय किया जाना है कि इस प्रकरण का प्रार्थी कितना प्रतिकर प्राप्त करने का अधिकारी है । प्रार्थी धन्नाराम के अनुसार उसके इलाज पर 60 हजार रुपए की राशि खर्च हो गई थी । इलाज पेटे बिल प्रदर्श 11 से 40 प्रस्तुत किए गए हैं जिनका योग लगाए जाने पर यह राशि 20,554/- रुपए आती है जिसे निकटतम 20,500/- रुपए किया जा रहा है जिसे प्रार्थी इलाज पेटे बतौर प्रतिकर

प्राप्त करने का अधिकारी है ।

18. साक्षी प्रा. सा. 1 धन्नाराम का इलाज के दौरान दायां पैर घुटने के नीचे से काट दिया गया था वह दो बार जे. एल. एन. अस्पताल, अजमेर में भर्ती रहा था । प्रथम बार डिस्चार्ज टिकट प्रदर्श 42 के अनुसार वह 18 दिन तक भर्ती रहा था, उसका आपरेशन भी किया था । पुनः उसे दिनांक 19 अप्रैल, 2007 को भर्ती किया गया और उसे दिनांक 17 मई, 2007 को छुट्टी दी गई है । इस प्रकार वह पुनः 28 दिन तक जे. एल. एन. अस्पताल, अजमेर में भर्ती रहा था । उसका आपरेशन किया गया था । इस प्रकार वह कुल मिलाकर 46 दिन तक जे. एल. एन. अस्पताल, अजमेर में भर्ती रह चुका है । दो आपरेशन किए गए हैं जिनकी पीड़ा उसे झेलनी पड़ी है, पैर कटने की पीड़ा भी उसे झेलनी पड़ी है, लम्बी अवधि तक पलंग पर रहकर उसने भारी शारीरिक व मानसिक पीड़ा उठाई है । अतः इन सब मदों में से उसे 1,00,000/- रुपए की प्रतिकर दिला रहा हूं ।

19. प्रार्थी को 70 प्रतिशत स्थायी विकलांगता पाया गया है उसके दाएं पैर के घुटने के नीचे से काट दिया गया है । प्रतिकर देते समय अधिकरण को यह तथ्य भी तय करना होता है कि भविष्य में विकलांगता के कारण क्या-क्या असुविधाएं होंगी । क्या-क्या आर्थिक नुकसान पीड़ित को उठाना पड़ेगा । क्योंकि प्रार्थी का दायां पैर घुटने के नीचे से काट कर अलग कर दिया गया है । अतः प्रार्थी को भविष्य में भारी मानसिक पीड़ा उठानी पड़ेगी, दर्द भी उठाना पड़ेगा, चलने-फिरने व उठने-बैठने में उसे असुविधा होंगी, दैनिक क्रियाओं के लिए उसे दूसरों पर आश्रित रहना पड़ेगा । जीवन की सुख-सुविधाओं से वंचित होना पड़ेगा । उसका वैवाहिक जीवन भी विपरीत से प्रभावित होगा । पीड़ित/प्रार्थी कुण्ठा से ग्रस्त होगा, उसके जीवन जीने की प्रत्याशा कम होगी । उसे कहीं भी आने-जाने के लिए दूसरों पर आश्रित रहना पड़ेगा । अतः मैं इन सब मदों में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय 1995 (1) टी. ए. सी. 557 (एस. सी.) आर. डी. हट्टंगणी/मैसर्स पेस्ट कंट्रोल प्रा. लि. की रोशनी में प्रतिकर दिलाया जाना आवश्यक समझता हूं । इस संबंध में मैं माननीय राजस्थान उच्च न्यायालय के निर्णय 1998 दु. मु. प्र. 351 (राज.) यूनाइटेड बीमा कंपनी/सिराजुद्दीन के निर्णय का उल्लेख करना भी उचित समझ रहा हूं । इस न्यायिक निर्णय में प्रार्थी का दायां हाथ कटने पर 50 प्रतिशत विकलांग हो जाने पर तीन लाख रुपए गैर आर्थिक मद में प्रतिकर दिया गया था । वर्तमान मामले में

प्रार्थी 34 वर्ष का है । वह 70 प्रतिशत विकलांग हो गया है । उसका दाएं पैर घुटने के थोड़ा नीचे से काट दिया गया है । इसलिए मैं समस्त परिस्थिति को देखते हुए उसे उपरोक्त सभी मदों में 3,00,000/- रुपए का प्रतिकर दिला रहा हूं ।

20. प्रार्थी का कथन है कि वह जे. एल. एन. अस्पताल, अजमेर में भर्ती रहा तब उसके दो सहायक हमेशा रहे जिनके खाने, पीने, रहने का प्रतिदिन प्रति व्यक्ति 200/- रुपए खर्च हुआ था व प्रार्थी की विशिष्ट खुराक पर भी खर्चा हुआ था । मैंने उसके इस तर्क पर विचार किया । यह सही है कि प्रार्थी 46 दिन तक जे. एल. एन अस्पताल, अजमेर में भर्ती रहा था कम से कम 24 घंटे दो सहायकों की आवश्यकता थी जिनके खाने, पीने, रहने, रहने के स्थान से अस्पताल आने-जाने में खर्चा लगा है । प्रार्थी की विशिष्ट खाने में भी 46 दिन तक खर्चा लगा है । हालांकि इन छोटे-छोटे खर्चों के बिल एकत्रित किए जाने की आवश्यकता नहीं है परन्तु ये ऐसे खर्चे हैं जो प्रार्थी द्वारा किए गए हैं । मैं इस संबंध में खर्च का अनुमान प्रतिदिन प्रति व्यक्ति 100/- रुपए लगा रहा हूं 3 व्यक्तियों का यह खर्चा 100/- रुपए प्रतिदिन के हिसाब से 46 दिन का 13,800/- रुपए आता है जिसे निकटतम 14,000/- रुपए किया जा रहा है जिसे प्रार्थी प्रतिकर के रूप में प्राप्त करने का अधिकारी है ।

21. प्रार्थी का कथन है कि उसे इलाज हेतु गांव से अजमेर लाया गया और वापस गांव ले जाया गया जिसमें 5,000/- रुपए टैक्सी का खर्चा लगा था । क्योंकि प्रार्थी के पैर में गंभीर चोट थी इसलिए निश्चित तौर से टैक्सी से उसे लाया व ले जाया गया है । हालांकि टैक्सी के बिल प्रस्तुत नहीं किए गए हैं । प्रार्थी ने अपने खुण्डियास जिला नागौर का रहने वाला बताया है । नागौर अजमेर का सीमावर्ती जिला है दूरी को देखते हुए यह खर्च का अनुमान 2,500/- रुपए लगा रहा हूं जिसे वह प्रतिकर के तौर पर प्राप्त करने का अधिकारी है ।

22. प्रार्थी का कथन है कि उसके पैर के कट जाने के कारण वह कोई कार्य नहीं कर सकता है । वह मकान बनाने का मिस्त्री था और 5,000/- रुपए मासिक कमाता था । यह सही है कि प्रार्थी का दाएं पैर के कट कर अलग हो जाने पर ऐसा व्यक्ति जिसका एक ही पैर रहे वह मकान बनाने के मिस्त्री को साइड पर जाना पड़ता है, खड्डों में उतरना पड़ता है, खड़े रहना पड़ता है, दीवार पर चढ़ना पड़ता है, नसैनी पर चढ़ना

पड़ता है । ऐसी परिस्थिति में वह बिल्कुल भी ऐसा काम नहीं कर सकता है और ऐसे व्यक्ति को आय का शत-प्रतिशत नुकसान होगा ।

23. उपरोक्त माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय आर. डी. हट्टंगणी की रोशनी में प्रार्थी को जो भविष्य में आर्थिक नुकसान होगा उसका प्रतिकर भी दिलाना होगा । प्रार्थी ने अपनी आय 5,000/- रुपए मासिक होना बताई है । क्लेमेंट की यह प्रवृत्ति होती है कि वे अपनी आय को अधिक से अधिक बताते हैं जिससे कि अधिक प्रतिकर राशि प्राप्त की जा सके । मैं समस्त परिस्थिति को देखते हुए उसकी मासिक आय 3,000/- रुपए तक कर रहा हूं । प्रार्थी 34 वर्ष का व्यक्ति है । अतः मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 163ए में दी गई द्वितीय अनुसूची के अनुसार 30 से 35 वर्ष के व्यक्ति के लिए 17 का गुणक लगाए जाने का प्रावधान है । उक्त गुणक के गुणा करके प्रतिकर की राशि का निर्धारण किया जाना न्यायोचित है । फलस्वरूप प्रतिकर की राशि 3000 × 12 × 17 = 6,12,000/- रुपए आती है । अतः जिन-जिन मदों में प्रार्थी को प्रतिकर दिलाया गया है उन राशियों का योग 10,49,000/- रुपए आता है जिसे वह प्राप्त करने का अधिकारी है । इस प्रकार इस विवाद्यक का निर्णय प्रार्थी के पक्ष में किया जाता है ।

24. विद्वान् अधिकरण द्वारा अपने निर्णय में अंकित किए गए उपरोक्त वर्णित निष्कर्ष से मैं पूर्णतया सहमत हूं । अपीलाधीन निर्णय का अवलोकन करने के उपरान्त मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि विद्वान् अधिकरण पत्रावली पर उपलब्ध साक्ष्य का सही रूप से मूल्यांकन करने के उपरान्त अपना निर्णय पारित किया है । मेरे मत में विद्वान् अधिकरण का निर्णय पूर्णतया विधिसम्मत है, जिसमें हस्तक्षेप किए जाने का कोई आधार नहीं है । मैं अपीलार्थी की ओर से प्रस्तुत अपीलों में बल नहीं पाता हूं ।

25. अतः अपीलार्थी-बीमा कम्पनी की ओर से प्रस्तुत उपरोक्त वर्णित दोनों अपीलों को निरस्त किया जाता है । अपील के साथ संलग्न स्थगन प्रार्थनापत्र भी निरस्त किए जाते हैं ।

अपीलें खारिज की गईं ।

मही./क.

यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड

बनाम

श्रीमती कृष्णादेवी और अन्य

तारीख 5 मई, 2016

न्यायमूर्ति महेश चन्द्र शर्मा

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 173 – दुर्घटना – प्रतिकर के लिए दावा – बीमा कंपनी द्वारा अपने दायित्व से इनकार करना – जहां बीमा कंपनी, बीमाकृत के किसी दोष के कारण घटित दुर्घटना में प्रतिकर संदाय करने के अपने दायित्व से इनकार करती है तथापि, यदि उसे प्रतिकर संदाय करने के लिए दायी ठहराया जाता है और उसके द्वारा प्रतिकर संदत्त कर दिया जाता है तो वह बीमा पालिसी की शर्तों और निबंधनों के भंग के आधार पर बीमाकृत से ऐसी प्रतिकर धनराशि वसूल सकती है ।

वर्तमान मामले में, क्लेमेन्ट्स (दावेदार) श्रीमती कृष्णादेवी व अन्य ने अधिकरण के समक्ष क्लेम (दावा) याचिका इन तथ्यों के साथ प्रस्तुत की कि प्रार्थी संख्या 1 का पति एवं प्रार्थीगण संख्या 2 व 3 के पिता मृतक अनिल कुमार अपनी बहन के पुत्र जन्म पर मनाए जा रहे जलवा महोत्सव में शामिल होने हेतु अपने बहनोई की मारूति कार संख्या आर जे 14 सी 3610 में अपनी पत्नी एवं बहन के साथ दिनांक 13 नवम्बर, 1995 को झुंझुनू गया था । इसके बाद दोनों साले बहनोई अनिल व सुभाष आवश्यक कार्य से चिड़ावा गए तथा चिड़ावा से सुभाष व अनिल रात्रि 12.00 बजे वापस झुंझुनू के लिए रवाना हुए । अनिल मारूति कार में पीछे सो गया और सुभाष कार चलाता रहा कि रास्ते में झुंझुनू से कुछ पहले रोही मौजा समनपुरा (बीड) में गाड़ी ने अचानक बहुत तेजी से आग पकड़ ली और सुभाष का कार पर नियंत्रण नहीं रहा तथा कार को एक जाल के पेड़ से जा टकराया, फलस्वरूप कार पूरी तरह जल गई और उसमें बैठे सुभाष तथा अनिल दोनों ही पूरी तरह चल गए और उनके केवल कंकाल ही शेष रहे । क्लेमेंट्स (दावेदार) ने विभिन्न मदों में कुल 5,50,00000/- रुपए क्षतिपूर्ति राशि दिलाए जाने की प्रार्थना की । प्रत्यर्थीगण-क्लेमेन्ट्स

(दावेदार) द्वारा प्रस्तुत क्लेम (दावा) याचिका के नोटिस याचिका विपक्षीगण को जारी किए गए । विपक्षीगण की ओर से जवाब प्रस्तुत किया गया, जिसमें क्लेम (दावा) याचिका के तथ्यों से इनकार करते हुए याचिका खारिज किए जाने की प्रार्थना की गई । विद्वान् अधिकरण ने पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर पांच विवाद्यक विरचित किए । तत्पश्चात् साक्ष्य लेखबद्ध किए जाने एवं बहस सुनने के उपरान्त विद्वान् अधिकरण ने अपने निर्णय दिनांक 10 अप्रैल, 2000 के द्वारा प्रत्यर्थीगण-क्लेमेन्ट्स (दावेदार) को 6,58,000/- रुपए क्षतिपूर्ति राशि दिलाए जाने का आदेश दिया, जिससे व्यथित होकर अपीलार्थी-बीमा कम्पनी की ओर से यह सिविल विविध अपील इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत कर अपीलाधीन निर्णय को अपास्त किए जाने की प्रार्थना की गई है । न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय ने उभयपक्ष के विद्वान् अधिवक्तागण के तर्कों पर मनन किया । अपीलाधीन निर्णय का ध्यानपूर्वक अवलोकन किया । विद्वान् अधिकरण द्वारा अपने निर्णय में अंकित किए गए उपरोक्त वर्णित निष्कर्ष से मैं पूर्णतया सहमत हूं । अपीलाधीन निर्णय का अवलोकन करने के उपरान्त मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि विद्वान् अधिकरण पत्रावली पर उपलब्ध साक्ष्य का सही रूप से मूल्यांकन करने के उपरान्त अपना निर्णय पारित किया है । मेरे मत में विद्वान् अधिकरण का निर्णय पूर्णतया विधिसम्मत है, जिसमें हस्तक्षेप किए जाने का कोई आधार नहीं है । न्यायालय अपीलार्थी की ओर से प्रस्तुत इस अपील में कोई बल नहीं पाता है । (पैरा 6 और 7)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2002 की एकलपीठ सिविल विविध अपील सं. 1082.

मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री वीरेन्द्र जितेन्द्र मिश्रा वास्ते अजीत कुमार भण्डारी

प्रत्यर्थी सं. 5 व 6 की ओर से श्री सुनील कुमार सिंगोदिया, अधिवक्ता

न्यायमूर्ति महेश चन्द्र शर्मा – अपीलार्थी-बीमा कंपनी की ओर से यह सिविल विविध अपील मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण, जयपुर एवं राजस्थान राज्य सहकारी न्यायाधिकरण, जयपुर द्वारा पारित निर्णय दिनांक 10 अप्रैल, 2000 के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है, जिसके द्वारा प्रत्यर्थीगण-क्लेमेन्ट्स

(दावेदारों) को 6,58,000/- रुपए क्षतिपूर्ति राशि दिलाए जाने का आदेश दिया गया ।

2. प्रकरण के तथ्य इस प्रकार हैं कि क्लेमेन्ट्स (दावेदार) श्रीमती कृष्णादेवी व अन्य ने अधिकरण के समक्ष क्लेम (दावा) याचिका इन तथ्यों के साथ प्रस्तुत की कि प्रार्थी संख्या 1 का पति एवं प्रार्थीगण संख्या 2 व 3 के पिता मृतक अनिल कुमार अपनी बहन के पुत्र जन्म पर मनाए जा रहे जलवा महोत्सव में शामिल होने हेतु अपने बहनोई की मारूति कार संख्या आर जे 14 सी 3610 में अपनी पत्नी एवं बहन के साथ दिनांक 13 नवम्बर, 1995 को झुंझुनू गया था । इसके बाद दोनों साले बहनोई अनिल व सुभाष आवश्यक कार्य से चिड़ावा गए तथा चिड़ावा से सुभाष व अनिल रात्रि 12.00 बजे वापस झुंझुनू के लिए रवाना हुए । अनिल मारूति कार में पीछे सो गया और सुभाष कार चलाता रहा कि रास्ते में झुंझुनू से कुछ पहले रोही मौजा समनपुरा (बीड) में गाड़ी ने अचानक बहुत तेजी से आग पकड़ ली और सुभाष का कार पर नियंत्रण नहीं रहा तथा कार को एक जाल के पेड़ से जा टकराया, फलस्वरूप कार पूरी तरह जल गई और उसमें बैठे सुभाष तथा अनिल दोनों ही पूरी तरह चल गए और उनके केवल कंकाल ही शेष रहे । क्लेमेंट्स (दावेदार) ने विभिन्न मदों में कुल 5,50,00000/- रुपए क्षतिपूर्ति राशि दिलाए जाने की प्रार्थना की ।

3. प्रत्यर्थीगण-क्लेमेन्ट्स (दावेदार) द्वारा प्रस्तुत क्लेम (दावा) याचिका के नोटिस याचिका विपक्षीगण को जारी किए गए । विपक्षीगण की ओर से जवाब प्रस्तुत किया गया, जिसमें क्लेम (दावा) याचिका के तथ्यों से इनकार करते हुए याचिका खारिज किए जाने की प्रार्थना की गई । विद्वान् अधिकरण ने पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर पांच विवाद्यक विरचित किए । तत्पश्चात् साक्ष्य लेखबद्ध किए जाने एवं बहस सुनने के उपरान्त विद्वान् अधिकरण ने अपने निर्णय दिनांक 10 अप्रैल, 2000 के द्वारा प्रत्यर्थीगण-क्लेमेन्ट्स (दावेदार) को 6,58,000/- रुपए क्षतिपूर्ति राशि दिलाए जाने का आदेश दिया, जिससे व्यथित होकर अपीलार्थी बीमा कम्पनी की ओर से यह सिविल विविध अपील इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत कर अपीलाधीन निर्णय को अपास्त किए जाने की प्रार्थना की गई है ।

4. अपीलार्थी के विद्वान् अधिवक्ता का तर्क है कि विद्वान् अधिकरण ने अपना निर्णय पारित करते समय विधि की अपेक्षित अपेक्षाओं पर ध्यान नहीं दिया । उनका तर्क है कि विद्वान् अधिकरण ने विवाद्यक संख्या 3 व 4

के संबंध में अपना निर्णय पारित करने से पूर्व पत्रावली पर उपलब्ध साक्ष्य का सही रूप से विवेचन व विश्लेषण नहीं किया । अपीलाधीन निर्णय विधि-विरुद्ध होने से उक्त निर्णय को अपास्त किया जाए ।

5. इसके विपरीत प्रत्यर्थी संख्या 5 व 6 के विद्वान् अधिवक्ता का तर्क है कि विद्वान् अधिकरण ने अपना निर्णय पारित करते समय विधि की समस्त अपेक्षित अपेक्षाओं को ध्यान में रखा है उनका कथन है कि विद्वान् अधिकरण ने अपना निर्णय पारित करने से पूर्व पत्रावली पर उपलब्ध साक्ष्य का सही रूप से मूल्यांकन किया है । उनका यह भी कथन है कि अपीलाधीन निर्णय में किसी प्रकार से हस्तक्षेप किए जाने का कोई आधार नहीं है । अतः अपीलार्थी की ओर से प्रस्तुत अपीलों को अपास्त किया जाए ।

6. मैंने उभयपक्ष के विद्वान् अधिवक्तागण के तर्कों पर मनन किया । अपीलाधीन निर्णय का ध्यानपूर्वक अवलोकन किया । विद्वान् अधिकरण ने विवाद्यक संख्या 3 व 4 के संबंध में अपने निर्णय में निम्न निष्कर्ष अंकित किया है :–

> "तनकी नं. 3
>
> इस तनकी को साबित करने का भार अप्रार्थी बीमा कंपनी पर है । बीमा कंपनी की ओर से इस तनकी के संबंध में कोई साक्ष्य पेश नहीं की गई है, विवादित कार को अपने यहां बीमित होना स्वीकार किया है, शेष बीमा आपत्तियों में कोई सार नहीं होने से इस तनकी का निर्णय बीमा कंपनी के विरुद्ध एवं प्रार्थीगण के पक्ष में किया जाता है ।
>
> तनकी नं. 4
>
> इस तनकी को साबित करने का भार प्रार्थीगण पर है ।
>
> श्रीमती कृष्णादेवी प्रा. सा. 1 ने अपने न्यायालय कथनों में कहा कि मृत्यु के समय उसके पति की आयु 27 वर्ष थी । उन्होंने जनरल इंजीनियरिंग कारपोरेशन विश्वकर्मी, जयपुर में फैक्ट्री खोली थी उस फैक्ट्री से एक लाख रुपए सालाना मृत्यु के समय आय थी जिसके आयकर रिटर्न उसने पेश किए हैं । बाद में वह फैक्ट्री बंद हो गई । मेरे पास अब आय का कोई साधन नहीं है । जिरह में प्रार्थीगण का

कथन है कि फैक्ट्री रजिस्टर्ड थी या नहीं उसे पता नहीं, कोई साझेदार था या नहीं, उसे पता नहीं । अभी वह अपने सास-ससुर के पास रह रही है ।

निरंजन गुप्ता प्रा. सा. 2 का कथन है कि वह अनिल जी की फैक्ट्री जनरल इंजीनियरिंग कारपोरेशन में पार्ट टाइम अकाउन्टेंट का काम करता था । आयकर का हिसाब-किताब भी मैं ही देखता था । इस फैक्ट्री की वर्ष 93-94 में 30,500/- रुपए, वर्ष 94-95 में 47,640/- रुपए, वर्ष 95-96 में 80,502/- रुपए वार्षिक आय थी । जिरह में साक्षी का कथन है कि वर्ष 91 में यह फर्म रजिस्टर्ड हुई थी, कहां हुई थी पता नहीं है । फैक्ट्री वर्ष 95 से खत्म हो गई । उसे कोई नियुक्ति पत्र नहीं दिया गया था ।

विद्वान् अधिवक्ता प्रार्थीगण का तर्क है कि प्रस्तुत आयकर रिटर्न्स से मृतक की आय एक लाख रुपए वार्षिक होना साबित है तथा मृतक अपने व्यापार को बढ़ाकर अधिक उन्नति करता । मृतक की मृत्यु होने से फर्म बंद हो गई है । प्रार्थीगण के अन्य आय अर्जित करने वाला कोई नहीं है अतः प्रार्थीगण को चाही गई क्षतिपूर्ति राशि दिलाई जानी चाहिए । अपने तर्कों की पुष्टि में विद्वान् अधिवक्ता ने 1998 (1) टी. ए. सी. पेज 313 राज. श्रीमती गोपाल कंवर व अन्य **बनाम** दरबारा सिंह व अन्य तथा 1993 (3) टी. ए. सी. पेज 115 राज. श्रीमती विभा सेठ व अन्य **बनाम** जयकिशन तिवाड़ी व अन्य न्यायिक दृष्टांत पेश किए हैं ।

विद्वान् अधिवक्ता बीमा कंपनी ने इन तर्कों का विरोध करते हुए कहा है कि मृतक की फैक्ट्री अभी भी कार्यरत है तथा आय अर्जित कर रही है । प्रार्थीगण को आय की क्षति नहीं हुई है केवल मृतक की मृत्यु होने से उसके सुपरवीजन की कमी आई है ।

हमने मामले पर विचार किया । प्रार्थीगण ने मृतक अनिल कुमार की आयु 27 वर्ष बताई है परन्तु इस संबंध में कोई दस्तावेजी साक्ष्य पेश नहीं किया गया है । मृतक का कंकाल प्राप्त होने से उसके शव-परीक्षण प्रतिवेदन में भी उसकी आयु अंकित नहीं की गई है अतः प्रार्थी के कथनों पर ही विश्वास कर दुर्घटना के समय मृतक की आयु 27 वर्ष निर्धारित की जाती है ।

जहां तक मृतक आय निर्धारित करने का प्रश्न है,

प्रार्थीगण ने मृतक की आय 93-94 में 30,500/- रुपए, वर्ष 94-95 में 47,640/- रुपए, वर्ष 95-96 में 80,502/- रुपए होना बताते हुए आयकर रिटर्न्स पेश किए हैं तथा माननीय राज. उच्च न्यायालय के उपरोक्त वर्णित दृष्टांत व अन्य दृष्टांत प्रस्तुत करते हुए इस आय को दुगुनी कर क्षतिपूर्ति दिलाए जाने की प्रार्थना की है, परन्तु मृतक की उक्त फर्म का क्या वह स्वयं ही स्वामी था और यह फर्म उसकी मृत्यु के पश्चात् बंद हो गई है इस संबंध में कोई दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है । मृतक फर्म का वर्ष 96-97 का रिटर्न प्रस्तुत होने से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि फर्म अभी भी यथावत् चालू है तथा आय अर्जित कर रही है यही नहीं बल्कि उस फर्म की आय भी पहले से अधिक बढ़ी हुई दर्शायी गई है ।

अतः प्रकरण के तथ्य, फर्म के चालू होकर आय अर्जित करने की स्थिति, आयकर रिटर्न्स, सुनिश्चित भविष्य की आय नहीं होने तथा मृतक की मृत्यु से सुपरवीजन की कमी आदि तथ्यों को देखते हुए मृतक की 4,000/- रुपए प्रतिमाह आय स्वीकार करना उचित प्रतीत होता है ।

मृतक की उक्त आय पर आश्रित परिजनों की यूनिट संख्या 10 बनती है अतः इस आय को यूनिट आधार पर विभाजित कर मृतक स्वयं की खर्च राशि की ढाई यूनिट राशि 1,000/- रुपए कम करने के पश्चात् परिवार की आश्रितता राशि 3,000/- रुपए प्रतिमाह रहती है । दुर्घटना के समय मृतक की आयु 27 वर्ष थी अतः इस प्रकरण में 18 का गुणक लागू करना उचित प्रतीत होता है । इस प्रकार आय से वंचित होने के आधार पर प्रार्थीगण 3000 × 12 × 18 = 6,48,000/- रुपए प्राप्त करने के अधिकारी होते हैं ।

इसके अतिरिक्त प्रार्थीगण मृतक के साथ सहयोग, लाड प्यार व सेवा सुश्रूषा से वंचित हुए हैं, अंतिम संस्कार पर राशि खर्च करनी पड़ी है तथा एस्टेट लोस आदि के लिए 10,000/- रुपए और दिलाए जाने उचित प्रतीत होते हैं ।

इस प्रकार प्रार्थीगण कुल 6,58,000/- रुपए प्राप्त करने के अधिकारी होते हैं परन्तु प्रार्थीगण को पूर्व में दोष रहित दायित्व के

अधीन 50,000/- रुपए दिलाए जा चुके हैं अतः उक्त राशि के समायोजन के पश्चात् शेष राशि 6,08,000/- रुपए प्राप्त करने के अधिकारी हैं । शेष राशि की प्रार्थना अस्वीकार कर खारिज की जाती है ।

दुर्घटना के लिए कार चालक की गलती एवं लापरवाही रही है । अप्रार्थी संख्या 1 के स्वामित्व में कार होने थी, उक्त कार अप्रार्थी सं. 2 के यहां दुर्घटना के समय बीमाकृत होने से अप्रार्थी नं. 1 व 2 इस राशि की अदायगी हेतु सामूहिक रूप से एवं पृथक्-पृथक् रूप से उत्तरदायी होंगे । तनकी का निर्णय इसी प्रकार प्रार्थीगण के पक्ष में एवं अप्रार्थीगण के विरुद्ध किया जाता है ।"

7. विद्वान् अधिकरण द्वारा अपने निर्णय में अंकित किए गए उपरोक्त वर्णित निष्कर्ष से मैं पूर्णतया सहमत हूं । अपीलाधीन निर्णय का अवलोकन करने के उपरान्त मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि विद्वान् अधिकरण पत्रावली पर उपलब्ध साक्ष्य का सही रूप से मूल्यांकन करने के उपरान्त अपना निर्णय पारित किया है । मेरे मत में विद्वान् अधिकरण का निर्णय पूर्णतया विधिसम्मत है, जिसमें हस्तक्षेप किए जाने का कोई आधार नहीं है । मैं अपीलार्थी की ओर से प्रस्तुत इस अपील में बल नहीं पाता हूं ।

8. अतः अपीलार्थी की ओर से प्रस्तुत यह सिविल विविध अपील निरस्त की जाती है । मोटर दुर्घटना दावा न्यायाधिकरण, जयपुर एवं राजस्थान राज्य सहकारी न्यायाधिकरण, जयपुर द्वारा पारित निर्णय दिनांक 10 अप्रैल, 2000 की पुष्टि की जाती है ।

अपील खारिज की गई ।

मही./क.

श्री राम जनरल इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड

बनाम

योगेश ठाकोर और अन्य

तारीख 6 मई, 2016

न्यायमूर्ति महेश चन्द्र शर्मा

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 163क और 173 – दुर्घटना – प्रतिकर के लिए दावा – पक्षकारों की प्रास्थिति – आय अर्जित करने के साधन – आश्रितों की संख्या – मानक गुणांक – यदि न्यायालय द्वारा प्रतिकर अधिनिर्णीत करते समय दावेदार की प्रास्थिति उसके आय अर्जित करने के साधन, आश्रितों की संख्या के साथ ही मानक गुणांक लागू करते हुए, प्रतिकर अधिनिर्णीत किया जाता है तो ऐसा प्रतिकर विधिमान्य और युक्तियुक्त होगा और इसमें हस्तक्षेप करना अपेक्षित नहीं होगा ।

वर्तमान मामले में, क्लेमेन्ट्स (दावेदार) श्रीमती आशा एवं क्लेमेंट्स (दावेदार) योगेश ठाकोर व अन्य ने अधिकरण के समक्ष पृथक्-पृथक् क्लेम (दावा) याचिकाएं इन तथ्यों के साथ प्रस्तुत की कि दिनांक 23 मई, 2010 को प्रतीक ठाकोर **उर्फ** सुमित **उर्फ** लकी अपने साथी राजेन्द्रसिंह के साथ उसकी मोटरसाइकिल द्वारा बालचंद पाडा से गायत्री नगर जा रहा था कि आम रोड बाईपास नक्शे के पास बूंदी में रात्रि के समय 9.15 बजे करीब सामने से आरोपित वाहन ट्रक नम्बर आर जे 33 जी ए 1113 को उसके चालक अप्रार्थी क्रम 1 ने काफी तेज रफ्तार गफलत लापरवाही से चलाकर मोटरसाइकिल को टक्कर मार दी, जिसके कारण प्रतीक ठाकोर **उर्फ** सुमित **उर्फ** लकी एवं राजेन्द्र कुमार गम्भीर घायल हो गए । जिन्हें तत्काल बूंदी अस्पताल ले जाया गया । जहां पहुंचने पर चिकित्सकों ने दोनों को मृत घोषित कर दिया । उक्त दुर्घटना वाहन आर जे 33 जी ए 1113 के चालक अप्रार्थी क्रम 1 की कथित लापरवाही के कारण घटित हुई । प्रत्यर्थीगण-क्लेमेन्ट्स (दावेदार) द्वारा प्रस्तुत क्लेम (दावा) याचिकाओं के नोटिस याचिकाओं के विपक्षीगण को जारी किए गए । विपक्षीगण की ओर से जवाब प्रस्तुत किया गया, जिसमें क्लेम (दावा) याचिकाओं के तथ्यों से इनकार करते हुए याचिका खारिज किए जाने की प्रार्थना की गई । विद्वान्

अधिकरण ने पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर पांच विवाद्यक विरचित किए । तत्पश्चात् साक्ष्य लेखबद्ध किए जाने एवं बहस सुनने के उपरान्त विद्वान् अधिकरण ने अपने निर्णय दिनांक 19 सितम्बर, 2014 के द्वारा क्लेमेन्ट्स (दावेदार) श्रीमती आशा कंवर को 2,08,000/- रुपए एवं क्लेमेंट्स (दावेदार) योगेश ठाकोर व अन्य को 2,25,000/- रुपए क्षतिपूर्ति राशि दिलाए जाने का आदेश दिया, जिससे व्यथित होकर अपीलार्थी-बीमा कम्पनी की ओर से उपरोक्त वर्णित दोनों सिविल विविध अपीलें इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत कर अपीलाधीन निर्णय को अपास्त किए जाने की प्रार्थना की गई है एवं क्लेमेंट्स (दावेदार) की ओर से उपरोक्त वर्णित दोनों सिविल विविध अपीलें प्रस्तुत कर उन्हें दिलाई गई क्षतिपूर्ति राशि को उपयुक्त सीमा तक बढ़ाए जाने की प्रार्थना की गई है । न्यायालय द्वारा अपीलें खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय ने, विवाद्यक संख्या 3 – ए. डब्ल्यू. 1 योगेश ठाकोर का साक्ष्य में कहना है कि प्रतीक ठाकोर की असामयिक मौत के बाद शपथकर्ता सहित सभी प्रार्थीगण से अत्यधिक पीड़ा व कष्ट शारीरिक एवं मानसिक रूप से भोगा है तथा जो जीवन भर भोगना पड़ेगा । प्रतीक एक स्वस्थ युवक होने के कारण घर के कामकाज में पूर्णतया योगदान करता था जिसकी सेवाओं का योगदान कम से कम 5,000/- रुपए प्रतिमाह था जो परिवार को योगदान होता था । उसकी मृत्यु के उपरांत उसके अंतिम संस्कार एवं 12 दिनों के कार्यक्रम एवं शोक प्रकट करने वाले लोगों पर करीब 40,000/- रुपए खर्च हुआ । युवा अवस्था में एक युवा पुत्र के चले जाने से मुझ शपथकर्ता के बुढ़ापे का सहारा छिन गया । प्रतीक से मुझ शपथकर्ता को काफी अपेक्षा एवं आशाएं थीं जिससे मेरा एवं मेरे परिवार का नाम रोशन होता । उससे भविष्य में काफी आय हम परिजनों को प्राप्त होती तथा हमारा जीवन आराम से व्यतीत होता जो अब नहीं होगा । मैं शपथकर्ता सहित अन्य प्रार्थीगण प्रतीक ठाकोर के प्यार स्नेह व वात्सल्य से जीवन भर के लिए महरूम हो गए । समर्थन में दस्तावेजी साक्ष्य पेश की है जिनमें बीमा पालिसी प्रदर्श 8, पी. एम. आर. प्रदर्श 14 साक्ष्य में प्रदर्शित कराया है । जिरह में ए.ड. 1 योगेश ठाकोर का कहना है कि सही है कि मैंने खर्चे के बिल वगै. पेश नहीं किए हैं । मैंने मृतक की आय, आयु और व्यवसाय का प्रमाणपत्र पेश नहीं किया है । वाहन बीमित है । मृतक की आय के संबंध में कोई लेखा रिकार्ड पेश नहीं किया गया है । पी. एम. आर. प्रदर्श 14 में मृतक प्रतीक ठाकोर की उम्र 17 वर्ष बताई गई

है । मृतक पर चार आश्रित प्रार्थी है । भगवान सिंह एवं अन्य बनाम नारायणलाल एवं अन्य में धारा 168, 173-द्वितीय अनुसूची-मृतक 18 वर्षीय कृषि में कार्यरत कुछ कमा रहा था । अधिकरण ने 1,20,000/- रुपए का पंचाट किया । एकलपीठ ने अभिवृद्धि हेतु अपील स्वीकार की द्वितीय अनुसूची अनुज्ञात करते हुए पंचाट में 1,20,000/- रुपए से 2,25,000/- रुपए तक अभिवृद्धि की गई । इस पर प्रार्थीगण अर्जी प्रस्तुति की दिनांक 9 अगस्त, 2010 से वसूली तक 6 प्रतिशत वार्षिक ब्याज की दर से प्राप्त कर सकेंगे । भैरूसिंह बनाम सरफुद्दीन वगै. भैरूसिंह का साक्ष्य में कहना है कि मुझ शपथकर्ता का पुत्र राजेन्द्रसिंह जो एक हृष्ट- पुष्ट नवयुवक था जो कोहिनूर कम्प्यूटर बालचन्द पाडा बून्दी आपरेटर कम्पीटीशन कार्य करके करीब 10,000/- रुपए प्रतिमाह की आय प्राप्त करता जो हम सभी परिजनों पर खर्च होती थी । राजेन्द्रसिंह असामयिक मौत के बाद मैं शपथकर्ता सहित सभी प्रार्थीगण ने अत्यधिक पीड़ा व कष्ट शारीरिक एवं मानसिक रूप से भोगा है तथा जो जीवन भर भोगना पड़ेगा । राजेन्द्रसिंह घर के सारे काम-काज संभालता था । उसकी मृत्यु के उपरांत उसके अंतिम संस्कार एवं 12 दिनों के कार्यक्रम एवं शोक प्रकट करने वाले लोगों पर करीब 40,000/- रुपए खर्च हुआ । युवा अवस्था में एक युवा पुत्र के चले जाने से मुझ शपथकर्ता के बुढ़ापे का सहारा छिन गया । राजेन्द्रसिंह से मुझ शपथकर्ता को काफी अपेक्षा एवं आशाएं थीं । जिससे मेरा एवं मेरे परिवार का नाम रोशन होता । उससे भविष्य में काफी आय हम परिजनों को प्राप्त होती तथा हमारा जीवन आराम से व्यतीत होता जो अब नहीं होगा । न्यायालय शपथकर्ता सहित अन्य प्रार्थीगण राजेन्द्रसिंह के प्यार, स्नेह व वात्सल्य से जीवन भर के लिए महरूम हो गए । समर्थन में दस्तावेजी साक्ष्य पेश किया है जिनमें पोस्टमार्टम रिपोर्ट प्रदर्श 15, पहचान पत्र प्रदर्श 16 जिसकी प्रमाणित प्रतिलिपि प्रदर्श 16ए साक्ष्य में प्रदर्शित कराया है । जिरह में ए. डब्ल्यू. 2 का कहना है कि यह सही है कि न्यायालय मृतक की आय, आयु और आमदनी का कोई प्रमाण पेश नहीं किया । यह सही है कि मेरा पुत्र अविवाहित था । मृतक पर आश्रित प्रार्थी हैं । सरला वर्मा ए. जी. जे. 2009 पेज नम्बर 1298 में अविवाहित के मामले में माता-पिता की उम्र के आधार पर मृतक के पिता की उम्र 55 वर्ष होने पर 11 गुणांक व 50 प्रतिशत निजी व्यय काटा जाना धारित किया गया है । आय का ठोस प्रमाण नहीं है । आय के ठोस प्रमाण के अभाव में 3,000/- रुपए प्रतिमाह नोशनल आय माना जाना उचित होगा । अतः

निम्न प्रकरण की तथ्य व परिस्थितियों में निम्न प्रकार प्रतिकर की गणना की जाती है –

3000 × 12 × 11	=	3,96,000/- रुपए
निजी व्यय 50 प्रतिशत		1,98,000/- रुपए
3,96,000 - 1,98,000	=	1,98,000/- रुपए
सम्पदा की हानि	=	5,000/- रुपए
दाह संस्कार की हानि	=	5,000/- रुपए
कुल प्रतिकर	=	2,08,000/- रुपए
घटाए अंतरिम प्रतिकर	=	50,000/- रुपए
आदेश दिनांक 30.04.2011		
कुल प्रतिकर देय	=	1,58,000/- रुपए

इस पर प्रार्थीगण अर्जी प्रस्तुति की दिनांक 9 अगस्त, 2010 से वसूली तक 6 प्रतिशत वार्षिक ब्याज की दर से प्राप्त कर सकेंगे । विद्वान् अधिकरण द्वारा अपने निर्णय में अंकित किए गए उपरोक्त वर्णित निष्कर्ष से न्यायालय पूर्णतया सहमत है । अपीलाधीन निर्णय का अवलोकन करने के उपरान्त न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि विद्वान् अधिकरण पत्रावली पर उपलब्ध साक्ष्य का सही रूप से मूल्यांकन करने के उपरान्त अपना निर्णय पारित किया है । न्यायालय मत में विद्वान् अधिकरण का निर्णय पूर्णतया विधिसम्मत है, जिसमें हस्तक्षेप किए जाने का कोई आधार नहीं है । न्यायालय उपरोक्त वर्णित चारों अपीलों में बल नहीं पाता है । उभयपक्ष के विद्वान् अधिवक्तागण के तर्कों पर मनन किया । अपीलाधीन निर्णय का ध्यानपूर्वक अवलोकन किया । विद्वान् अधिकरण द्वारा अपने निर्णय में अंकित किए गए उपरोक्त वर्णित निष्कर्ष से न्यायालय पूर्णतया सहमत है । अपीलाधीन निर्णय का अवलोकन करने के उपरान्त न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि विद्वान् अधिकरण पत्रावली पर उपलब्ध साक्ष्य का सही रूप से मूल्यांकन करने के उपरान्त अपना निर्णय पारित किया है । न्यायालय के मत में विद्वान् अधिकरण का निर्णय पूर्णतया विधिसम्मत है, जिसमें हस्तक्षेप किए जाने का कोई आधार नहीं है । न्यायालय उपरोक्त वर्णित चारों अपीलों में बल नहीं पाता है । (पैरा 18, 19, 20, 21, 22, 23, 24, 25, 26, 27, 28, 29, 30, 31, 32 और 33)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2006]	2006 आर. ए. आर. पेज 554 : **भगवान सिंह एवं अन्य** बनाम **नारायणलाल एवं अन्य** ;	24

क्लेम (दावा) संख्या 409-2010, ए. डब्ल्यू. 2 :
भैरूसिंह बनाम **सरफुद्दीन वगै.** । 25

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2015 की एकलपीठ सिविल विविध अपील संख्या 162, 2014 की एकलपीठ सिविल विविध अपील संख्या 3686, 2014 की एकलपीठ सिविल विविध अपील संख्या 3685, 2015 की एकलपीठ सिविल विविध अपील सं. 164.

मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन अपीलें ।

अपीलार्थियों की ओर से श्री आर. पी. विजय

दावेदारों की ओर से श्री संदीप माथुर

न्यायमूर्ति महेश चन्द्र शर्मा – अपीलार्थी-बीमा कंपनी की ओर से उपरोक्त वर्णित सिविल विविध अपील एवं क्लेमेंट्स (दावेदार) की ओर से उपरोक्त वर्णित सिविल विविध अपील न्यायाधीश, मोटर वाहन दुर्घटना दावा अधिकरण, बूंदी द्वारा पारित निर्णय दिनांक 19 सितम्बर, 2014 के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है, जिसके द्वारा क्लेमेन्ट्स (दावेदार) श्रीमती आशा कंवर को 2,08,000/- रुपए एवं क्लेमेन्ट्स (दावेदार) योगेश ठाकोर व अन्य को 2,25,000/- रुपए क्षतिपूर्ति राशि दिलाए जाने का आदेश दिया गया ।

2. प्रकरण के तथ्य इस प्रकार हैं कि क्लेमेन्ट्स (दावेदार) श्रीमती आशा एवं क्लेमेंट्स (दावेदार) योगेश ठाकोर व अन्य ने अधिकरण के समक्ष पृथक्-पृथक् क्लेम (दावा) याचिकाएं इन तथ्यों के साथ प्रस्तुत कीं कि दिनांक 23 मई, 2010 को प्रतीक ठाकोर **उर्फ** सुमित **उर्फ** लकी अपने साथी राजेन्द्रसिंह के साथ उसकी मोटरसाइकिल द्वारा बालचंद पाडा से गायत्री नगर जा रहा था कि आम रोड बाईपास नक्शे के पास बूंदी में रात्रि के समय 9.15 बजे करीब सामने से आरोपित वाहन ट्रक नम्बर आर जे 33 जी ए 1113 को उसके चालक अप्रार्थी क्रम 1 ने काफी तेज रफ्तार गफलत लापरवाही से चलाकर मोटरसाइकिल को टक्कर मार दी, जिसके कारण प्रतीक ठाकोर **उर्फ** सुमित **उर्फ** लकी एवं राजेन्द्र कुमार गम्भीर घायल हो गए । जिन्हें तत्काल बूंदी अस्पताल ले जाया गया । जहां पहुंचने पर चिकित्सकों ने दोनों को मृत घोषित कर दिया । उक्त दुर्घटना वाहन आर जे 33 जी ए 1113 के चालक अप्रार्थी क्रम 1 की कथित लापरवाही के कारण घटित हुई ।

3. प्रत्यर्थीगण-क्लेमेन्ट्स (दावेदार) द्वारा प्रस्तुत क्लेम (दावा) याचिकाओं के नोटिस याचिकाओं के विपक्षीगण को जारी किए गए । विपक्षीगण की ओर से जवाब प्रस्तुत किया गया, जिसमें क्लेम (दावा) याचिकाओं के तथ्यों से इनकार करते हुए याचिका खारिज किए जाने की प्रार्थना की गई । विद्वान् अधिकरण ने पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर पांच विवाद्यक विरचित किए । तत्पश्चात् साक्ष्य लेखबद्ध किए जाने एवं बहस सुनने के उपरान्त विद्वान् अधिकरण ने अपने निर्णय दिनांक 19 सितम्बर, 2014 के द्वारा क्लेमेन्ट्स (दावेदार) श्रीमती आशा कंवर को 2,08,000/- रुपए एवं क्लेमेंट्स (दावेदार) योगेश ठाकोर व अन्य को 2,25,000/- रुपए क्षतिपूर्ति राशि दिलाए जाने का आदेश दिया, जिससे व्यथित होकर अपीलार्थी-बीमा कम्पनी की ओर से उपरोक्त वर्णित दोनों सिविल विविध अपीलें इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत कर अपीलाधीन निर्णय को अपास्त किए जाने की प्रार्थना की गई है एवं क्लेमेंट्स (दावेदार) की ओर से उपरोक्त वर्णित दोनों सिविल विविध अपीलें प्रस्तुत कर उन्हें दिलाई गई क्षतिपूर्ति राशि को उपयुक्त सीमा तक बढ़ाए जाने की प्रार्थना की गई है ।

4. अपीलार्थी के विद्वान् अधिवक्ता का तर्क है कि विद्वान् अधिकरण ने अपना निर्णय पारित करते समय विधि की अपेक्षित अपेक्षाओं पर ध्यान नहीं दिया । उनका तर्क है कि विद्वान् अधिकरण ने अपना निर्णय पारित करने से पूर्व पत्रावली पर उपलब्ध साक्ष्य का सही रूप से विवेचन व विश्लेषण नहीं किया । विद्वान् अधिकरण ने विवाद्यक संख्या 1 व 3 के संबंध में अपना उपयुक्त निर्णय पारित नहीं किया है । अतः अपीलाधीन निर्णय विधिविरुद्ध होने से अपास्त किए जाने योग्य है ।

5. जबकि क्लेमेन्ट्स (दावेदार) के विद्वान् अधिवक्ता का तर्क है कि विद्वान् अधिकरण ने अपना निर्णय पारित करते समय विधि की समस्त अपेक्षित अपेक्षाओं को ध्यान में रखा है । किन्तु उनका कथन है कि विद्वान् अधिकरण ने क्लेमेंट्स को क्षतिपूर्ति राशि दिलाए जाने के संबंध में अपना निर्णय पारित करने से पूर्व पत्रावली पर उपलब्ध साक्ष्य का सही रूप से मूल्यांकन नहीं किया है । उनका यह भी कथन है कि विद्वान् अधिकरण ने क्लेमेंट्स को अत्यंत ही कम क्षतिपूर्ति राशि दिलाई है । अतः उन्हें दिलाई गई क्षतिपूर्ति को उपयुक्त सीमा तक बढ़ाया जाए ।

6. मैंने, उभयपक्ष के विद्वान् अधिवक्तागण के तर्कों पर मनन किया । अपीलाधीन निर्णय का ध्यानपूर्वक अवलोकन किया । विद्वान् अधिकरण ने विवाद्यक संख्या 1 व 3 के संबंध में अपने निर्णय में निम्न निष्कर्ष अंकित किया है :–

7. विवाद्यक सं. 1

गवाह ए. डब्ल्यू. 1 योगेश कुमार व ए. डब्ल्यू. 2 भैरूसिंह का साक्ष्य में कहना है कि दिनांक 23 मई, 2010 को प्रतीक ठाकोर **उर्फ** सुमित **उर्फ** लकी व राजेन्द्रसिंह की मृत्यु हो गई थी । वक्त दुर्घटना प्रतीक ठाकोर व राजेन्द्रसिंह 17 वर्ष के नौजवान शिक्षित युवक थे । जो अपने साथी के साथ मोटरसाइकिल द्वारा बालचन्द पाडा से गायत्री नगर जा रहा था कि आम रोड बाईपास नक्शे के पास बूंदी में आरोपित वाहन ट्रक संख्या आर जे 33 जी ए 1113 जो सामने से आ रहा था ने गफलत तेज रफ्तार, लापरवाही से चलाकर मोटरसाइकिल के टक्कर मारकर यह दुर्घटना कारित की थी ।

8. समर्थन में योगेश ठाकोर ने दस्तावेजी साक्ष्य पेश किया है जिनमें एफ. आई. आर. प्रदर्श 1, चार्जशीट प्रदर्श 2, नक्शा मौका प्रदर्श 12, पी. एम. आर. प्रदर्श 14 व भैरूसिंह ने पी. एम. आर. प्रदर्श 15 साक्ष्य में प्रदर्शित कराया है ।

9. ए. डब्ल्यू. 3 शहजाद का साक्ष्य में कहना है कि दिनांक 23 मई, 2010 को मौजा आम रोड बाईपास नक्शे के पास बूंदी में रात्रि 9.15 बजे करीब वाहन ट्रक संख्या आर जे 33 जी ए 1113 की टक्कर से हुई दुर्घटना के कारण राजेन्द्रसिंह एवं प्रतीक ठाकोर **उर्फ** सुमित **उर्फ** लकी की मृत्यु हो गई थी । टक्कर मारने वाला ट्रक सामने से आया था जो टक्कर मारने के बाद देवली की तरफ भाग गया था । दुर्घटना के बाद मुझ शपथकर्ता एवं मेरे दोस्त पंकज सालूजा ने हमारी मोटरसाइकिल से टक्कर मारने वाले ट्रक का सथूर नाके तक पीछा किया था, हमने उसके नम्बर आर जे 33 जी ए 1113 देखे थे । दुर्घटना हमारी आंखों के सामने हुई थी हमने टक्कर मारने वाले ट्रक को भी रुकवाने की कोशिश की थी परन्तु उसने अपना ट्रक नहीं रोका ।

10. समर्थन में दस्तावेजी साक्ष्य पेश किया है जिनमें मेरा बयान प्रदर्श 17 व पंकज का बयान प्रदर्श 18 साक्ष्य में प्रदर्शित कराया है ।

11. ए. डब्ल्यू. 1 योगेश ठाकोर का जिरह में कहना है कि यह कहना गलत है कि राजेन्द्रसिंह को मोटरसाइकिल चलाना नहीं आता हो और उसके पास डी. एल. नहीं हो । यह कहना गलत है कि दुर्घटना स्थल चढ़ाई हो, दुर्घटना स्थल पर चढ़ाई नहीं है, समतल है । ट्रक पहाड़ी के साईड पर चल रहा था । यह मुझे मालूम नहीं है कि मोटरसाइकिल वाले ने ट्रक को टक्कर मारी हो । यह भी गलत है कि मोटरसाइकिल वाला

जानबूझकर ट्रक में घुसा हो ।

12. यह सही है कि प्रदर्श 1 अज्ञात वाहन के खिलाफ है । यह सही है कि मैंने वाहन संख्या नम्बर आर जे 33 जी ए 1113 से मौके पर दुर्घटना होते नहीं देखी । यह कहना गलत है कि सरफुद्दीन वाहन स्वामी हमारा मिलने वाला हो । यह कहना गलत है कि मैं क्लेम (दावा) लेने के लिए झूठे बयान दे रहा हूं और शपथपत्र में वर्णित वाहन संख्या से कोई दुर्घटना नहीं हुई हो ।

13. ए. डब्ल्यू. 2 भैरूसिंह का जिरह में कहना है कि यह कहना गलत है कि राजेन्द्रसिंह मोटरसाइकिल चलाना नहीं जानता हो । यह गलत है कि वर्णित ट्रक से कोई दुर्घटना नहीं की हो ।

14. यह सही है कि नम्बर आर जे 33 जी ए 1113 से दुर्घटना होते मैंने नहीं देखी । यह गलत है कि ट्रक मालिक मेरे मिलने वाला हो और मैं क्लेम लेने के लिए झूठे बयान दे रहा हूं । यह गलत है कि मैंने पुलिस व वाहन स्वामी से मिलकर झूठा क्लेम पेश किया हो ।

15. जिरह में ए. डब्ल्यू. 3 का कहना है कि यह गलत है कि ट्रक नम्बर आर जे 33 जी ए 1113 से कोई दुर्घटना नहीं हुई हो । यह गलत है कि मोटरसाइकिल चालक राजेन्द्रसिंह खुद जाकर ट्रक से टकराया हो व ट्रक चालक की गलती से दुर्घटना नहीं हुई हो ।

16. यह सही है कि दुर्घटना जिस वाहन ने की वह मौके पर से भाग गया था एवं यह गलत है कि मैंने क्लेम (दावा) दिलाने के लिए बीमित वाहन को झूठा फंसाया है ।

17. प्रकरण में, बाद के अनुसंधान आरोप पत्र पेश हुआ है जिससे दुर्घटना व प्रार्थीगण की साक्ष्य की पुष्टि होती है । आरोप पत्र प्रदर्श 2 पेश हुआ है अनुसंधान से जो आरोपित वाहन घटना में लिप्त होना पाया गया है तथा इससे साबित है कि वक्त घटना आरोपित वाहन घटना में लिप्त था आरोपित वाहन के चालक अप्रार्थी संख्या 1 की गलती से घटना कारित होना तथा इस घटना के फलस्वरूप मृतक प्रतीक ठाकोर **उर्फ** सुमित **उर्फ** लकी व राजेन्द्रसिंह की मृत्यु हुई । जिसकी पुष्टि पी. एम. आर. प्रदर्श 14 व 15 से होती है । मृतक की आंशिक अपेक्षा के संबंध में कोई साक्ष्य नहीं है । यह विवाद्यक प्रार्थीगण के पक्ष में निर्धारित किया जाता है ।

18. विवाद्यक संख्या 3

ए. डब्ल्यू. 1 योगेश ठाकोर का साक्ष्य में कहना है कि प्रतीक ठाकोर की असामयिक मौत के बाद शपथकर्ता सहित सभी प्रार्थीगण से अत्यधिक पीड़ा व कष्ट शारीरिक एवं मानसिक रूप से भोगा है तथा जो जीवन भर भोगना पड़ेगा । प्रतीक एक स्वस्थ युवक होने के कारण घर के कामकाज में पूर्णतया योगदान करता था जिसकी सेवाओं का योगदान कम से कम 5,000/- रुपए प्रतिमाह था जो परिवार को योगदान होता था । उसकी मृत्यु के उपरांत उसके अंतिम संस्कार एवं 12 दिनों के कार्यक्रम एवं शोक प्रकट करने वाले लोगों पर करीब 40,000/- रुपए खर्च हुआ ।

19. युवा अवस्था में एक युवा पुत्र के चले जाने से मुझ शपथकर्ता के बुढ़ापे का सहारा छिन गया । प्रतीक से मुझ शपथकर्ता को काफी अपेक्षा एवं आशाएं थीं जिससे मेरा एवं मेरे परिवार का नाम रोशन होता । उससे भविष्य में काफी आय हम परिजनों को प्राप्त होती तथा हमारा जीवन आराम से व्यतीत होता जो अब नहीं होगा । मैं शपथकर्ता सहित अन्य प्रार्थीगण प्रतीक ठाकोर के प्यार स्नेह व वात्सल्य से जीवन भर के लिए महरूम हो गए ।

20. समर्थन में दस्तावेजी साक्ष्य पेश की है जिनमें बीमा पालिसी प्रदर्श 8, पी. एम. आर. प्रदर्श 14 साक्ष्य में प्रदर्शित कराया है ।

21. जिरह में ए.ड. 1 योगेश ठाकोर का कहना है कि सही है कि मैंने खर्चे के बिल वगै. पेश नहीं किए हैं ।

22. मैंने मृतक की आय, आयु और व्यवसाय का प्रमाणपत्र पेश नहीं किया है ।

23. वाहन बीमित है । मृतक की आय के संबंध में कोई लेखा रिकार्ड पेश नहीं किया गया है । पी. एम. आर. प्रदर्श 14 में मृतक प्रतीक ठाकोर की उम्र 17 वर्ष बताई गई है ।

मृतक पर चार आश्रित प्रार्थी हैं ।

24. **भगवान सिंह एवं अन्य** बनाम **नारायणलाल एवं अन्य**[1] में धारा 168, 173-द्वितीय अनुसूची-मृतक 18 वर्षीय कृषि में कार्यरत कुछ कमा रहा था- अधिकरण ने 1,20,000/- रुपए का पंचाट किया – एकलपीठ ने अभिवृद्धि हेतु अपील स्वीकार की – द्वितीय अनुसूची अनुज्ञात करते हुए पंचाट में 1,20,000/- रुपए से 2,25,000/- रुपए तक अभिवृद्धि की गई ।

---

[1] 2006 आर. ए. आर. पेज 554.

25. इस पर प्रार्थीगण अर्जी प्रस्तुति की दिनांक 9 अगस्त, 2010 से वसूली तक 6 प्रतिशत वार्षिक ब्याज की दर से प्राप्त कर सकेंगे ।

भैरूसिंह बनाम **सरफुद्दीन वगै.**[1]

26. ए. डब्ल्यू. 2 भैरूसिंह का साक्ष्य में कहना है कि मुझ शपथकर्ता का पुत्र राजेन्द्रसिंह जो एक हृष्ट-पुष्ट नवयुवक था जो कोहिनूर कम्प्यूटर बालचन्द पाडा बून्दी आपरेटर कम्पीटीशन कार्य करके करीब 10,000/- रुपए प्रतिमाह की आय प्राप्त करता जो हम सभी परिजनों पर खर्च होती थी ।

27. राजेन्द्रसिंह असामयिक मौत के बाद मैं शपथकर्ता सहित सभी प्रार्थीगण ने अत्यधिक पीड़ा व कष्ट शारीरिक एवं मानसिक रूप से भोगा है तथा जो जीवन भर भोगना पड़ेगा । राजेन्द्रसिंह घर के सारे काम-काज संभालता था । उसकी मृत्यु के उपरांत उसके अंतिम संस्कार एवं 12 दिनों के कार्यक्रम एवं शोक प्रकट करने वाले लोगों पर करीब 40,000/- रुपए खर्च हुआ ।

28. युवा अवस्था में एक युवा पुत्र के चले जाने से मुझ शपथकर्ता के बुढ़ापे का सहारा छिन गया । राजेन्द्रसिंह से मुझ शपथकर्ता को काफी अपेक्षा एवं आशाएं थीं । जिससे मेरा एवं मेरे परिवार का नाम रोशन होता । उससे भविष्य में काफी आय हम परिजनों को प्राप्त होती तथा हमारा जीवन आराम से व्यतीत होता जो अब नहीं होगा । मैं शपथकर्ता सहित अन्य प्रार्थीगण राजेन्द्रसिंह के प्यार, स्नेह व वात्सल्य से जीवन भर के लिए महरूम हो गए ।

29. समर्थन में दस्तावेजी साक्ष्य पेश किया है जिनमें पोस्टमार्टम रिपोर्ट प्रदर्श 15, पहचान पत्र प्रदर्श 16 जिसकी प्रमाणित प्रतिलिपि प्रदर्श 16ए साक्ष्य में प्रदर्शित कराया है ।

30. जिरह में ए. डब्ल्यू. 2 का कहना है कि यह सही है कि मैंने मृतक की आय, आयु और आमदनी का कोई प्रमाण पेश नहीं किया । यह सही है कि मेरा पुत्र अविवाहित था ।

31. मृतक पर आश्रित प्रार्थी हैं । सरला वर्मा ए. जी. जे. 2009 पेज नं. 1298 में अविवाहित के मामले में माता-पिता की उम्र के आधार पर मृतक के पिता की उम्र 55 वर्ष होने पर 11 गुणांक व 50 प्रतिशत निजी

---

[1] क्लेम (दावा) संख्या 409-2010, ए. डब्ल्यू. 2.

व्यय काटा जाना धारित किया गया है । आय का ठोस प्रमाण नहीं है । आय के ठोस प्रमाण के अभाव में 3,000/- रुपए प्रतिमाह नोशनल आय माना जाना उचित होगा । अतः निम्न प्रकरण की तथ्य व परिस्थितियों में निम्न प्रकार प्रतिकर की गणना की जाती है :–

3000×12×11 =		3,96,000/- रुपए
निजी व्यय 50 प्रतिशत		1,98,000/- रुपए
3,96,000 - 1,98,000	=	1,98,000 रुपए
सम्पदा की हानि	=	5,000/- रुपए
दाह संस्कार की हानि	=	5,000/- रुपए
कुल प्रतिकर	=	2,08,000/- रुपए
घटाए अंतरिम प्रतिकर	=	50,000/- रुपए
आदेश दिनांक 30.04.2011		
कुल प्रतिकर देय	=	1,58,000/- रुपए

32. इस पर प्रार्थीगण अर्जी प्रस्तुति की दिनांक 9 अगस्त, 2010 से वसूली तक 6 प्रतिशत वार्षिक ब्याज की दर से प्राप्त कर सकेंगे ।

33. विद्वान् अधिकरण द्वारा अपने निर्णय में अंकित किए गए उपरोक्त वर्णित निष्कर्ष से मैं पूर्णतया सहमत हूं । अपीलाधीन निर्णय का अवलोकन करने के उपरान्त मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि विद्वान् अधिकरण पत्रावली पर उपलब्ध साक्ष्य का सही रूप से मूल्यांकन करने के उपरान्त अपना निर्णय पारित किया है । मेरे मत में विद्वान् अधिकरण का निर्णय पूर्णतया विधिसम्मत है, जिसमें हस्तक्षेप किए जाने का कोई आधार नहीं है । मैं उपरोक्त वर्णित चारों अपीलों में बल नहीं पाता हूं ।

34. अतः उपरोक्त वर्णित चारों अपीलें निरस्त की जाती हैं । न्यायाधीश, मोटर वाहन दुर्घटना दावा अधिकरण, बूंदी द्वारा पारित निर्णय दिनांक 19 सितम्बर, 2014 की पुष्टि की जाती है । अपील संख्या 162/2015 एवं 164/2015 के साथ संलग्न स्थगन प्रार्थनापत्र भी निरस्त किए जाते हैं ।

अपीलें खारिज की गईं ।

मही./क.

सत पाल और अन्य

बनाम

श्री लक्षी राम और एक अन्य

तारीख 9 जुलाई, 2015

न्यायमूर्ति राजीव शर्मा

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 100 [सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम, 1882 की धारा 53क तथा विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 17 और 19 एवं परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 54] – द्वितीय अपील – सम्पत्ति का विक्रय करार – परिसीमा अवधि के भीतर विक्रय करार का विनिर्दिष्ट पालन नहीं कराना – सम्पत्ति तीसरे पक्षकार को विक्रय करना – तीसरा पक्षकार सद्भाविक क्रेता होना – पश्चात्वर्ती विक्रय करार वैध और विधिमान्य होना – यदि कोई सम्पत्ति विक्रय करार द्वारा क्रेता को विक्रय की जाती है किन्तु वह परिसीमा अवधि के भीतर अपने भाग का विनिर्दिष्ट पालन नहीं करता है तो विक्रेता उसे अभिखंडित कर सकता है और उस सम्पत्ति को किसी तीसरे पक्षकार को विक्रय कर सकता है यदि तीसरा पक्षकार सद्भाविक क्रेता है तो यह विक्रय करार वैध और विधिमान्य होगा ।

वर्तमान मामले में, प्रत्यर्थी सं. 1 वादी ने तारीख 18 जुलाई, 1991 की संविदा, प्रदर्श पी-8 के विनिर्दिष्ट पालन के लिए एक वाद फाइल किया था । विक्रय प्रतिफल 3,000/- रुपए था । वादी ने प्रतिवादी सं. 1 श्री सीता राम को करार के निष्पादन के समय पर माननीय साक्षियों की उपस्थिति में अग्रिम धन के रूप में 2,050/- रुपए संदत्त किया था और अतिशेष रकम 950/- रुपए अक्तूबर, 1991 के माह में विक्रय विलेख की रजिस्ट्रीकरण के समय पर संदत्त करने के लिए सहमत हुआ था । वादी ने रजिस्ट्रीकृत डाक द्वारा वादी के पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए प्रतिवादी सं. 1 को तारीख 24 नवम्बर, 1996 को एक नोटिस जारी किया । प्रतिवादी सं. 1 विक्रय विलेख निष्पादित करने में असफल रहा । वादी ने विक्रय विलेख का रजिस्ट्रीकरण कराने के लिए राजस्व कागजातों को तैयार करने के लिए तारीख 30 नवम्बर, 1996 को पटवारी हल्का से मिला । पूछताछ करने पर, यह पाया कि प्रतिवादी सं. 1 ने विवादित भूमि

को तारीख 4 मार्च, 1996 को विक्रय विलेख सं. 112 के माध्यम से अपीलार्थियों-प्रतिवादियों अर्थात् सत पाल, राकेश कुमार और तिलक राज को पहले ही विक्रय कर चुका है । वाद का प्रतिवादियों द्वारा विरोध किया गया । प्रतिवादी सं. 1 ने एक पृथक् लिखित कथन फाइल किया । वाद पत्र में अन्तर्विष्ट अभिकथनों से इनकार किया । नोटिस जारी करने को भी इनकार किया । एक विनिर्दिष्ट आधार यह लिया कि वाद, करार के निष्पादन के 5 वर्षों पश्चात् फाइल किया गया है और इस प्रकार, यह परिसीमा अवधि द्वारा वर्जित है । प्रतिवादी सं. 2 से 4 द्वारा लिए गए आधारों का सार यह है कि वे तारीख 4 मार्च, 1996 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख सं. 112 के माध्यम से भूमि के सद्भाविक क्रेता हैं । वादी द्वारा प्रत्युत्तर फाइल किया गया । विद्वान् सिविल न्यायाधीश (ज्येष्ठ खंड), कसौली, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश ने तारीख 25 अगस्त, 1999 को विवाद्यक विरचित किए थे । विद्वान् विचारण न्यायालय ने तारीख 3 सितम्बर, 2005 को वाद खारिज कर दिया । वादी ने विद्वान् जिला न्यायाधीश, सोलन के समक्ष अपील फाइल की । उसे तारीख 24 अप्रैल, 2006 को मंजूर कर लिया गया । अतएव, यह नियमित द्वितीय अपील फाइल की गई । न्यायालय द्वारा द्वितीय अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – चूंकि, विधि के सभी सारवान् प्रश्न एक-दूसरे से संबंधित और जुड़े हुए हैं इसलिए, साक्ष्य की चर्चा की पुनरावृत्ति को रोकने के लिए, इन्हें अवधारित करने हेतु एक साथ लिया जाता है । अभि. सा. 1 श्री मनोहर लाल ने चकबन्दी कार्यवाहियों के दौरान जारी समन प्रदर्श पी-1 को साबित किया है । अभि. सा. 2 श्री लक्षी राम ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि वाद भूमि का कभी भी विभाजन नहीं हुआ था । एक करार तैयार किया गया था और उस करार में प्रतिफल 3,000/- रुपए था । 2,050/- रुपए प्रतिवादी श्री सीता राम को संदत्त कर दिए गए थे और शेष रकम अक्तूबर माह में विक्रय विलेख की रजिस्ट्रीकरण के समय संदत्त किया जाना था । तथापि, विक्रय विलेख प्रतिवादी द्वारा रजिस्ट्रीकृत नहीं कराया गया था । वह अक्तूबर माह में सायंकाल उसके घर आया था और यह बताया था कि उसका पुत्र बीमार है । वादी ने उसे 950/- रुपए संदत्त कर दिया था । उसने प्राप्ति तैयार की थी किन्तु प्रतिवादी ने उसे बताया कि वह बाद में इस तैयार प्राप्ति को लेगा । तथापि, इसके बावजूद भी विक्रय विलेख रजिस्ट्रीकृत नहीं हुआ था । प्रदर्श पी-4 के माध्यम से प्रतिवादी पर नोटिस तामील की गई थी । अभि. सा. 3 श्री श्याम लाल ने यह अभिसाक्ष्य दिया

कि पक्षकारों के बीच एक करार, प्रदर्श पी-8 हुआ था । कुल प्रतिफल रकम 3,000/- रुपए था । सीता राम (प्रतिवादी), वादी के पास गया और उसे बताया कि उसका पुत्र बीमार है । उसे धन की अत्यधिक आवश्यकता थी । वह सीता राम और गीता राम के साथ वादी के घर गया था । वादी ने प्रतिवादी सीता राम को 950/- रुपए संदत्त किया था । उनकी उपस्थिति में, लिखित में कुछ भी लेखबद्ध नहीं किया गया था । तथापि, प्रतिवादी सं. 1 ने उसे बताया कि वह विक्रय विलेख रजिस्ट्रीकृत करा लेगा । अभि. सा. 4 श्री कौशल चन्द ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि प्रतिवादी कभी भी वाद भूमि के कब्जे में नहीं रहे । अभि. सा. 5 श्री लियाक राम ने कब्जे के बारे में अभि. सा. 4 के कथन की पुष्टि की है । प्रतिवादी सं. 1 श्री सीता राम ने एक शपथपत्र प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 1/ए के माध्यम से अपना साक्ष्य प्रस्तुत किया । उसने यह स्वीकार किया कि तारीख 18 जुलाई, 1991 को उसके और वादी के बीच 3,000/- रुपए के प्रतिफल के एवज में एक करार हुआ था । 2,050/- रुपए उसे उसी दिन संदत्त कर दिया था जबकि शेष रकम अर्थात् 950/- रुपए विक्रय विलेख की रजिस्ट्रीकरण के समय संदत्त किया जाना था । विक्रय विलेख 15 अक्तूबर, 1991 तक रजिस्ट्रीकृत किया जाना था । उसने तारीख 4 मार्च, 1996 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख सं. 112 द्वारा प्रतिवादियों को भूमि विक्रय किया था । वह वाद भूमि के कब्जे में था । अपनी प्रतिपरीक्षा में उसने यह स्वीकार किया कि वह वादी से मिलने परवानू और ग्राम थांडू गया था । उसने इस सुझाव से इनकार किया कि उसने वादी को यह बताया था कि उसका पुत्र बीमार है और उसने, उससे 950/- रुपए देने को कहा था । उसने इस बात से इनकार किया कि श्याम लाल और गीता राम उसके साथ थे । उसने कभी भी वादी से विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए नहीं कहा । वादी ने उसे 2,050/- रुपए संदत्त किए थे किन्तु उसने शेष 950/- रुपए परिसीमा अवधि के भीतर संदत्त नहीं किया । प्रतिवादी साक्षी 2 श्री तिलक राज ने भी एक शपथपत्र प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 2/ए के माध्यम से अपना साक्ष्य प्रस्तुत किया । उसने यह अभिसाक्ष्य दिया कि उसने वर्ष 1996 में अपने भाई के साथ सीता राम से भूमि क्रय की थी । अपनी प्रतिपरीक्षा में उसने यह स्वीकार किया कि भूमि क्रय करने के पूर्व उसने उसकी प्रास्थिति के बारे में सत्यापन किया था । उसने इस सुझाव से इनकार किया कि उसके द्वारा सीता राम को कोई धन संदत्त नहीं किया गया । प्रतिवादी साक्षी 3 श्री आशा राम ने भी एक शपथपत्र प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 3/ए के माध्यम से अपना

साक्ष्य प्रस्तुत किया । उसने यह अभिसाक्ष्य दिया कि वाद भूमि को वर्ष 1996 में सीता राम से सत पाल, राकेश कुमार और तिलक राज द्वारा क्रय किया गया था । (पैरा 9, 10, 11, 12, 13, 14 और 15)

तारीख 18 जुलाई, 1991 के करार, प्रदर्श पी-8 का पैराग्राफ 2 इस प्रकार है – "जबकि प्रथम पक्षकार, भूमि संपत्ति जो ग्राम मंज, परगना बसल, तहसील कसौली, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश में स्थित माप 2 बीघा है, का संयुक्त स्वामी है, जो उसके हिस्से में आता है, को 3,000/- रुपए (तीन हजार रुपए मात्र) के विक्रय मूल्य में क्रय करने के लिए सहमत हुआ है जिसमें से अग्रिम धन के रूप में 2,050/- रुपए (दो हजार पचास रुपए मात्र) संदत्त किया है और अतिशेष रकम 950/- रुपए अक्तूबर, 1991 के मध्य तक क्रेता के पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित करने के समय पर संदत्त किया जाएगा ।" पैराग्राफ सं. 2 में समाविष्ट साधारण भाषा के अनुसार, कुल प्रतिफल 3,000/- रुपए था । प्रतिवादी द्वारा 2,050/- रुपए अग्रिम के रूप में संदत्त किया गया था और अतिशेष रकम 950/- रुपए अक्तूबर, 1991 के मध्य तक विक्रय विलेख के निष्पादन के समय संदत्त किया जाना था । वादी द्वारा प्रतिवादी सं. 1 को एक नोटिस तारीख 24 नवम्बर, 1996 को जारी किया गया था । तारीख 18 जुलाई, 1991 के करार का निष्पादन विवादित नहीं है । अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल श्री रमाकांत शर्मा ने यह जोरदार तर्क दिया कि वाद तारीख 15 अक्तूबर, 1991 से 3 वर्ष की अवधि के भीतर फाइल किया गया है । यद्यपि, वाद तारीख 27 दिसम्बर, 1996 को संस्थित किया गया था । प्रतिवादी सं. 1 के विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री जी. डी. वर्मा ने यह जोरदार तर्क दिया कि 950/- रुपए प्राप्त करने के पश्चात्, प्रतिवादी सं. 1 विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए सहमत हुआ था, इस प्रकार, परिसीमा अवधि विस्तारित हो गई थी और समय को संविदा का सार नहीं कहा जा सकता है । अभि. सा. 1 श्री लक्षी राम ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि प्रतिवादी सं. 1 सीता राम उसके घर आया और उसे बताया कि उसका पुत्र बीमार है और इस प्रकार, उसे धन की अत्यधिक आवश्यकता है । उसने उसे 950/- रुपए संदत्त किया । तथापि, उस समय पर कोई प्राप्ति तैयार नहीं थी । इसी प्रकार, अभि. सा. 3 श्री श्याम लाल ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि प्रतिवादी सं. 1 वादी के घर आया था और उसे अपने पुत्र की बीमारी के बारे में बताया था और उसने उसे 950/- रुपए संदत्त किया था । उसने सुस्पष्टतः यह अभिसाक्ष्य दिया कि उसकी उपस्थिति में कुछ भी लेखबद्ध नहीं किया गया था । प्रतिवादी सं. 1 ने प्रतिवादी साक्षी 1 के रूप में

उपस्थित होते हुए यह स्वीकार किया कि यद्यपि वह वादी के घर गया था किन्तु, उसने अपने पुत्र के उपचार के लिए उससे कभी भी कोई धन देने के लिए नहीं कहा था । उसने विनिर्दिष्टतः, इस बात से भी इनकार किया कि अभि. सा. 3 श्री श्याम लाल या गीता राम उस समय उसके साथ थे । यदि प्रतिवादी सं. 1 को वादी द्वारा 950/- रुपए संदत्त किया गया होता तो निश्चित तौर पर उसे प्राप्ति प्राप्त करनी चाहिए थी, विशिष्टतया तब जब उसे रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख प्राप्त करना था । वाद, करार के निष्पादन के 5 वर्षों की अवधि के पश्चात् फाइल किया गया है । प्रतिवादी सं. 1 ने तारीख 4 मार्च, 1996 को रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख सं. 112 के द्वारा प्रतिवादी सं. 2 से 4 को वाद भूमि का विक्रय किया था । चूंकि, विक्रय करार रजिस्ट्रीकृत नहीं हुआ था, इसलिए, प्रतिवादी सं. 1 को रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख के माध्यम से प्रतिवादी सं. 2 से 4 को वाद भूमि का विक्रय करने का अधिकार था । अभिलेख पर यह आया है कि प्रतिवादी सं. 2 से 4 ने भूमि क्रय करने के पूर्व वाद भूमि का हक सुनिश्चित किया था । नामांतरण भी, विक्रय विलेख सं. 112 के रजिस्ट्रीकरण के पश्चात् प्रतिवादी सं. 2 से 4 के पक्ष में अनुप्रमाणित हुए थे । अभि. सा. 1 श्री मनोहर लाल ने चकबन्दी कार्यवाहियों के दौरान समन प्रदर्श पी-1 के जारी होने को साबित किया है । चकबन्दी कार्यवाहियों के दौरान प्रतिवादी सं. 2 से 4 को भूमि का एक विनिर्दिष्ट भाग प्रदत्त किया गया था । विद्वान् विचारण न्यायालय ने यह सही ही निष्कर्ष निकाला है कि भूमि, वादी के अनन्य कब्जे में नहीं थी और प्रथम अपील न्यायालय ने बिना कोई तर्कपूर्ण कारण दिए कब्जे के बारे में निष्कर्ष उलट दिया था । यह नहीं कहा जा सकता है कि प्रतिवादी सं. 2 से 4, वाद भूमि के सद्भाविक क्रेता नहीं हैं । विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय ने यह गलत निष्कर्ष निकाला है कि वादी ने स्वयं ही प्रतिवादी सं. 1 को 950/- रुपए संदत्त किया था । अभि. सा. 5 श्री लियाक राम, वाद भूमि का खसरा संख्या नहीं जानता था । उसकी भूमि ग्राम दांधू से 3 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है । वह करार के बारे में भी नहीं जानता था । इस प्रकार, वह प्रतिवादी सं. 2 से 4 को इस बारे में मार्गदर्शित नहीं कर सकता था कि क्या प्रतिवादी सं. 1 द्वारा वादी को पहले ही वाद भूमि विक्रीत कर दी गई थी । अभि. सा. 6 श्री नानक चन्द ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया है कि वह तारीख 18 जुलाई, 1991 के विक्रय करार प्रदर्श पी-8 का साक्षी नहीं है । राजस्व अभिलेखों के अनुसार, सीता राम वाद भूमि के कब्जे में था । विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय ने तारीख 18 जुलाई, 1991 के विक्रय करार प्रदर्श पी-8 का

सही तौर पर मूल्यांकन नहीं किया है । वाद, परिसीमा अवधि द्वारा वर्जित है । प्रतिवादी सं. 2 से 4 वाद भूमि के सद्भाविक क्रेता हैं । परिसीमा अवधि का आरम्भ 15 अक्तूबर, 1991 से होता है और उसे परिसीमा अवधि समाप्त होने के पश्चात् अतिशेष रकम 950/- रुपए का संदाय करने से नहीं रोका जा सकता है । (पैरा 16, 17, 18, 19, 20, 21 और 22)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2009]	(2009) 5 एस. सी. सी. 462 : **अहमदसाहब अब्दुल मुल्ला (2)** बनाम **बीबी जान और अन्य ;**	26
[2004]	(2004) 7 एस. सी. सी. 251 : **पुखराज डी. जैन और अन्य** बनाम **जी. गोपालाकृष्णा ;**	25
[1983]	ए. आई. आर. 1983 उड़ीसा 107 : **बरुना गिरी और अन्य** बनाम **राजकिशोर गिरी और अन्य ;**	24
[1980]	ए. आई. आर. 1980 आंध्र प्रदेश 32 : **चेक्का वेंकटा सूर्यनारायण मूर्ति** बनाम **अप्पणा वीराजू और एक अन्य** ।	23

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2006 की नियमित द्वितीय अपील सं. 296.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन द्वितीय अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से	श्री रमाकांत शर्मा, अधिवक्ता
प्रत्यर्थी सं. 1 की ओर से	सर्वश्री जी. डी. वर्मा, ज्येष्ठ अधिवक्ता के साथ वी. सी. वर्मा, अधिवक्ता
प्रत्यर्थी सं. 2 की ओर से	कोई नहीं

न्यायमूर्ति राजीव शर्मा – यह नियमित द्वितीय अपील, विद्वान् जिला न्यायाधीश, सोलन, हिमाचल प्रदेश द्वारा 2005 की सिविल अपील सं. 73-एस./13 में पारित तारीख 24 अप्रैल, 2006 के निर्णय और डिक्री के

विरुद्ध निदेशित है ।

2. इस नियमित द्वितीय अपील का न्यायनिर्णयन करने के लिए आवश्यक मुख्य तथ्य यह हैं कि प्रत्यर्थी सं. 1-वादी (जिसे इसमें इसके पश्चात् "सुविधा के लिए वादी" कहा गया है), ने तारीख 18 जुलाई, 1991 की संविदा, प्रदर्श पी-8 के विनिर्दिष्ट पालन के लिए एक वाद फाइल किया था । विक्रय प्रतिफल 3,000/- रुपए था । वादी ने प्रतिवादी सं. 1 श्री सीता राम (जिसे इसमें इसके पश्चात् सुविधा के लिए "प्रतिवादी" कहा गया है), को करार के निष्पादन के समय पर माननीय साक्षियों की उपस्थिति में अग्रिम धन के रूप में 2,050/- रुपए संदत्त किया था और अतिशेष रकम 950/- रुपए अक्तूबर, 1991 के माह में विक्रय विलेख की रजिस्ट्रीकरण के समय पर संदत्त करने के लिए सहमत हुआ था । वादी ने रजिस्ट्रीकृत डाक द्वारा वादी के पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए प्रतिवादी सं. 1 को तारीख 24 नवम्बर, 1996 को एक नोटिस जारी किया । प्रतिवादी सं. 1 विक्रय विलेख निष्पादित करने में असफल रहा । वादी ने विक्रय विलेख का रजिस्ट्रीकरण कराने के लिए राजस्व कागजातों को तैयार करने के लिए तारीख 30 नवम्बर, 1996 को पटवारी हल्का से मिला । पूछताछ करने पर, यह पाया कि प्रतिवादी सं. 1 ने विवादित भूमि को तारीख 4 मार्च 1996 को विक्रय विलेख सं. 112 के माध्यम से अपीलार्थियों-प्रतिवादियों अर्थात् सत पाल, राकेश कुमार और तिलक राज को पहले ही विक्रय कर चुका है ।

3. वाद का प्रतिवादियों द्वारा विरोध किया गया । प्रतिवादी सं. 1 ने एक पृथक् लिखित कथन फाइल किया । वादपत्र में अन्तर्विष्ट अभिकथनों से इनकार किया । नोटिस जारी करने को भी इनकार किया । एक विनिर्दिष्ट आधार यह लिया कि वाद, करार के निष्पादन के 5 वर्षों पश्चात् फाइल किया गया है और इस प्रकार, यह परिसीमा अवधि द्वारा वर्जित है । प्रतिवादी सं. 2 से 4 द्वारा लिए गए आधारों का सार यह है कि वे तारीख 4 मार्च, 1996 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख सं. 112 के माध्यम से भूमि के सद्भाविक क्रेता हैं ।

4. वादी द्वारा प्रत्युत्तर फाइल किया गया । विद्वान् सिविल न्यायाधीश (ज्येष्ठ खंड), कसौली, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश ने तारीख 25 अगस्त, 1999 को विवाद्यक विरचित किए थे । विद्वान् विचारण न्यायालय ने तारीख 3 सितम्बर, 2005 को वाद खारिज कर दिया ।

5. वादी ने विद्वान् जिला न्यायाधीश, सोलन के समक्ष अपील फाइल

की । उसे तारीख 24 अप्रैल, 2006 को मंजूर कर लिया गया । अतएव, यह नियमित द्वितीय अपील फाइल की गई ।

6. यह नियमित द्वितीय अपील, तारीख 17 मई, 2007 को निम्नलिखित विधि के सारवान् प्रश्नों पर स्वीकार कर ली गई थी :–

> "(1) क्या विद्वान् निचले न्यायालय ने तारीख 18 जुलाई, 1991 के विक्रय करार का गलत परिशीलन के साथ ही गलत अर्थान्वयन किया है ?
>
> (2) क्या आक्षेपित निर्णय और डिक्री, परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 54 के उपबंधों का पूर्णरूपेण गलत परिशीलन, गलत निर्वचन के साथ ही गलत मूल्यांकन का परिणाम है ?
>
> (3) क्या विद्वान् निचला अपील न्यायालय, वाद को परिसीमा अवधि के भीतर होना अभिनिर्धारित करने में सही था, जो वाद, स्वीकृततः, विक्रय विलेख के निष्पादन के लिए करार में नियत तारीख से तीन वर्षों से अधिक के पश्चात् फाइल किया गया है और वाद को तारीख 27 दिसम्बर, 1996 को फाइल किया गया ?
>
> (4) क्या विद्वान् निचला अपील न्यायालय, वादी द्वारा अभि. सा. 2 के रूप में उपस्थित होते हुए, की गई इस स्वीकृति पर विचार नहीं करने में सही था कि विक्रय विलेख तारीख 15 अक्तूबर, 1991 को निष्पादित होना था ?
>
> (5) क्या विद्वान् निचला अपील न्यायालय, यह अभिनिर्धारित करने में सही था कि अपीलार्थी सद्भाविक क्रेता नहीं है, विशिष्टतया तब जब इसे प्रतिवादी साक्षी 2 और एक अन्य साक्षी प्रतिवादी साक्षी 3 आशा राम के साथ ही अभि. सा. 2 की स्वीकृति द्वारा अपीलार्थियों में से एक के साक्ष्य के माध्यम से साबित कर दिया गया है कि समय, संविदा का सार था और अपीलार्थियों को पूर्ववर्ती करार का कोई नोटिस नहीं था ?
>
> (6) क्या आक्षेपित निर्णय और डिक्री, तारीख 4 मार्च, 1996 को अपीलार्थियों के पक्ष में प्रतिवादी सं. 2 द्वारा निष्पादित विक्रय विलेख प्रदर्श पी. एक्स. पर विचार नहीं करने का परिणाम है ?"

7. अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल श्री रमाकान्त शर्मा ने विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित तारीख 3 सितम्बर, 2005 के निर्णय और डिक्री का समर्थन किया है । उन्होंने यह भी दलील दी कि प्रथम अपील

न्यायालय ने तारीख 18 जुलाई, 1991 के विक्रय करार प्रदर्श पी-8 का गलत परिशीलन किया है । उनके अनुसार, वाद परिसीमा अवधि द्वारा वर्जित था । उसके मुवक्किल वाद भूमि के सद्भाविक क्रेता हैं ।

8. विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री जी. डी. वर्मा ने विद्वान् प्रथम अपील द्वारा पारित तारीख 24 अप्रैल, 2006 के निर्णय और डिक्री का समर्थन किया है ।

9. चूंकि, विधि के सभी सारवान् प्रश्न एक-दूसरे से संबंधित और जुड़े हुए हैं इसलिए, साक्ष्य की चर्चा की पुनरावृत्ति को रोकने के लिए, इन्हें अवधारित करने हेतु एक साथ लिया जाता है ।

10. अभि. सा. 1 श्री मनोहर लाल ने चकबन्दी कार्यवाहियों के दौरान जारी समन प्रदर्श पी-1 को साबित किया है । अभि. सा. 2 श्री लक्षी राम ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि वाद भूमि का कभी भी विभाजन नहीं हुआ था । एक करार तैयार किया गया था और उस करार में प्रतिफल 3,000/- रुपए था । 2,050/- रुपए प्रतिवादी श्री सीता राम को संदत्त कर दिए गए थे और शेष रकम अक्तूबर माह में विक्रय विलेख की रजिस्ट्रीकरण के समय संदत्त किया जाना था । तथापि, विक्रय विलेख प्रतिवादी द्वारा रजिस्ट्रीकृत नहीं कराया गया था । वह अक्तूबर माह में सायंकाल उसके घर आया था और यह बताया था कि उसका पुत्र बीमार है । वादी ने उसे 950/- रुपए संदत्त कर दिया था । उसने प्राप्ति तैयार की थी किन्तु प्रतिवादी ने उसे बताया कि वह बाद में इस तैयार प्राप्ति को लेगा । तथापि, इसके बावजूद भी विक्रय विलेख रजिस्ट्रीकृत नहीं हुआ था । प्रदर्श पी-4 के माध्यम से प्रतिवादी पर नोटिस तामील की गई थी ।

11. अभि. सा. 3 श्री श्याम लाल ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि पक्षकारों के बीच एक करार, प्रदर्श पी-8 हुआ था । कुल प्रतिफल रकम 3,000/- रुपए था । सीता राम (प्रतिवादी), वादी के पास गया और उसे बताया कि उसका पुत्र बीमार है । उसे धन की अत्यधिक आवश्यकता थी । वह सीता राम और गीता राम के साथ वादी के घर गया था । वादी ने प्रतिवादी सीता राम को 950/- रुपए संदत्त किया था । उनकी उपस्थिति में, लिखित में कुछ भी लेखबद्ध नहीं किया गया था । तथापि, प्रतिवादी सं. 1 ने उसे बताया कि वह विक्रय विलेख रजिस्ट्रीकृत करा लेगा ।

12. अभि. सा. 4 श्री कौशल चन्द ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि प्रतिवादी कभी भी वाद भूमि के कब्जे में नहीं रहे । अभि. सा. 5 श्री

लियाक राम ने कब्जे के बारे में अभि. सा. 4 के कथन की पुष्टि की है ।

13. प्रतिवादी सं. 1 श्री सीता राम ने एक शपथपत्र प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 1/ए के माध्यम से अपना साक्ष्य प्रस्तुत किया । उसने यह स्वीकार किया कि तारीख 18 जुलाई, 1991 को उसके और वादी के बीच 3,000/- रुपए के प्रतिफल के एवज में एक करार हुआ था । 2,050/- रुपए उसे उसी दिन संदत्त कर दिया था जबकि शेष रकम अर्थात् 950/- रुपए विक्रय विलेख की रजिस्ट्रीकरण के समय संदत्त किया जाना था । विक्रय विलेख 15 अक्तूबर, 1991 तक रजिस्ट्रीकृत किया जाना था । उसने तारीख 4 मार्च, 1996 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख सं. 112 द्वारा प्रतिवादियों को भूमि विक्रय किया था । वह वाद भूमि के कब्जे में था । अपनी प्रतिपरीक्षा में उसने यह स्वीकार किया कि वह वादी से मिलने परवानू और ग्राम थांडू गया था । उसने इस सुझाव से इनकार किया कि उसने वादी को यह बताया था कि उसका पुत्र बीमार है और उसने, उससे 950/- रुपए देने को कहा था । उसने इस बात से इनकार किया कि श्याम लाल और गीता राम उसके साथ थे । उसने कभी भी वादी से विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए नहीं कहा । वादी ने उसे 2,050/- रुपए संदत्त किए थे किन्तु उसने शेष 950/- रुपए परिसीमा अवधि के भीतर संदत्त नहीं किया ।

14. प्रतिवादी साक्षी 2 श्री तिलक राज ने भी एक शपथपत्र प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 2/ए के माध्यम से अपना साक्ष्य प्रस्तुत किया । उसने यह अभिसाक्ष्य दिया कि उसने वर्ष 1996 में अपने भाई के साथ सीता राम से भूमि क्रय की थी । अपनी प्रतिपरीक्षा में उसने यह स्वीकार किया कि भूमि क्रय करने के पूर्व उसने उसकी प्रास्थिति के बारे में सत्यापन किया था । उसने इस सुझाव से इनकार किया कि उसके द्वारा सीता राम को कोई धन संदत्त नहीं किया गया ।

15. प्रतिवादी साक्षी 3 श्री आशा राम ने भी एक शपथपत्र प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 3/ए के माध्यम से अपना साक्ष्य प्रस्तुत किया । उसने यह अभिसाक्ष्य दिया कि वाद भूमि को वर्ष 1996 में सीता राम से सत पाल, राकेश कुमार और तिलक राज द्वारा क्रय किया गया था ।

16. तारीख 18 जुलाई, 1991 के करार, प्रदर्श पी-8 का पैराग्राफ 2 इस प्रकार है :–

> "जबकि प्रथम पक्षकार, भूमि संपत्ति जो ग्राम मंज, परगना बसल, तहसील कसौली, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश में स्थित माप

2 बीघा है, का संयुक्त स्वामी है, जो उसके हिस्से में आता है, को 3,000/- (तीन हजार रुपए मात्र) के विक्रय मूल्य में क्रय करने के लिए सहमत हुआ है जिसमें से अग्रिम धन के रूप में 2,050/- रुपए (दो हजार पचास रुपए मात्र) संदत्त किया है और अतिशेष रकम 950/- रुपए अक्तूबर, 1991 के मध्य तक क्रेता के पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित करने के समय पर संदत्त किया जाएगा ।"

17. पैराग्राफ सं. 2 में समाविष्ट साधारण भाषा के अनुसार, कुल प्रतिफल 3,000/- रुपए था । प्रतिवादी द्वारा 2,050/- रुपए अग्रिम के रूप में संदत्त किया गया था और अतिशेष रकम 950/- रुपए अक्तूबर, 1991 के मध्य तक विक्रय विलेख के निष्पादन के समय संदत्त किया जाना था । वादी द्वारा प्रतिवादी सं. 1 को एक नोटिस तारीख 24 नवम्बर, 1996 को जारी किया गया था । तारीख 18 जुलाई, 1991 के करार का निष्पादन विवादित नहीं है ।

18. अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल श्री रमाकांत शर्मा ने यह जोरदार तर्क दिया कि वाद तारीख 15 अक्तूबर, 1991 से 3 वर्ष की अवधि के भीतर फाइल किया गया है । यद्यपि, वाद तारीख 27 दिसम्बर, 1996 को संस्थित किया गया था ।

19. प्रतिवादी सं. 1 के विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री जी. डी. वर्मा ने यह जोरदार तर्क दिया कि 950/- रुपए प्राप्त करने के पश्चात्, प्रतिवादी सं. 1 विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए सहमत हुआ था, इस प्रकार, परिसीमा अवधि विस्तारित हो गई थी और समय को संविदा का सार नहीं कहा जा सकता है ।

20. अभि. सा. 1 श्री लक्षी राम ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि प्रतिवादी सं. 1 सीता राम उसके घर आया और उसे बताया कि उसका पुत्र बीमार है और इस प्रकार, उसे धन की अत्यधिक आवश्यकता है । उसने उसे 950/- रुपए संदत्त किया । तथापि, उस समय पर कोई प्राप्ति तैयार नहीं थी । इसी प्रकार, अभि. सा. 3 श्री श्याम लाल ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि प्रतिवादी सं. 1 वादी के घर आया था और उसे अपने पुत्र की बीमारी के बारे में बताया था और उसने उसे 950/- रुपए संदत्त किया था । उसने सुस्पष्टतः यह अभिसाक्ष्य दिया कि उसकी उपस्थिति में कुछ भी लेखबद्ध नहीं किया गया था । प्रतिवादी सं. 1 ने प्रतिवादी साक्षी 1 के रूप में उपस्थित होते हुए यह स्वीकार किया कि यद्यपि वह वादी के घर गया था किन्तु, उसने अपने पुत्र के उपचार के लिए उससे कभी भी कोई धन देने

के लिए नहीं कहा था । उसने विनिर्दिष्टतः, इस बात से भी इनकार किया कि अभि. सा. 3 श्री श्याम लाल या गीता राम उस समय उसके साथ थे । यदि प्रतिवादी सं. 1 को वादी द्वारा 950/- रुपए संदत्त किया गया होता तो निश्चित तौर पर उसे प्राप्ति प्राप्त करनी चाहिए थी, विशिष्टतया तब जब उसे रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख प्राप्त करना था । वाद, करार के निष्पादन के 5 वर्षों की अवधि के पश्चात् फाइल किया गया है । प्रतिवादी सं. 1 ने तारीख 4 मार्च, 1996 को रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख सं. 112 के द्वारा प्रतिवादी सं. 2 से 4 को वाद भूमि का विक्रय किया था । चूंकि, विक्रय करार रजिस्ट्रीकृत नहीं हुआ था, इसलिए, प्रतिवादी सं. 1 को रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख के माध्यम से प्रतिवादी सं. 2 से 4 को वाद भूमि का विक्रय करने का अधिकार था । अभिलेख पर यह आया है कि प्रतिवादी सं. 2 से 4 ने भूमि क्रय करने के पूर्व वाद भूमि का हक सुनिश्चित किया था । नामांतरण भी, विक्रय विलेख सं. 112 के रजिस्ट्रीकरण के पश्चात् प्रतिवादी सं. 2 से 4 के पक्ष में अनुप्रमाणित हुए थे ।

21. अभि. सा. 1 श्री मनोहर लाल ने चकबन्दी कार्यवाहियों के दौरान समन प्रदर्श पी-1 के जारी होने को साबित किया है । चकबन्दी कार्यवाहियों के दौरान प्रतिवादी सं. 2 से 4 को भूमि का एक विनिर्दिष्ट भाग प्रदत्त किया गया था । विद्वान् विचारण न्यायालय ने यह सही ही निष्कर्ष निकाला है कि भूमि, वादी के अनन्य कब्जे में नहीं थी और प्रथम अपील न्यायालय ने बिना कोई तर्कपूर्ण कारण दिए कब्जे के बारे में निष्कर्ष उलट दिया था । यह नहीं कहा जा सकता है कि प्रतिवादी सं. 2 से 4, वाद भूमि के सद्भाविक क्रेता नहीं हैं । विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय ने यह गलत निष्कर्ष निकाला है कि वादी ने स्वयं ही प्रतिवादी सं. 1 को 950/- रुपए संदत्त किया था । अभि. सा. 5 श्री लियाक राम, वाद भूमि का खसरा संख्या नहीं जानता था । उसकी भूमि ग्राम दांधू से 3 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है । वह करार के बारे में भी नहीं जानता था । इस प्रकार, वह प्रतिवादी सं. 2 से 4 को इस बारे में मार्गदर्शित नहीं कर सकता था कि क्या प्रतिवादी सं. 1 द्वारा वादी को पहले ही वाद भूमि विक्रीत कर दी गई थी ।

22. अभि. सा. 6 श्री नानक चन्द ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया है कि वह तारीख 18 जुलाई, 1991 के विक्रय करार प्रदर्श पी-8 का साक्षी नहीं है । राजस्व अभिलेखों के अनुसार, सीता राम वाद भूमि के कब्जे में था । विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय ने तारीख 18 जुलाई, 1991 के विक्रय करार प्रदर्श पी-8 का सही तौर पर मूल्यांकन नहीं किया है । वाद,

परिसीमा अवधि द्वारा वर्जित है । प्रतिवादी सं. 2 से 4 वाद भूमि के सद्भाविक क्रेता हैं । परिसीमा अवधि का आरम्भ 15 अक्तूबर, 1991 से होता है और उसे परिसीमा अवधि समाप्त होने के पश्चात् अतिशेष रकम 950/- रुपए का संदाय करने से नहीं रोका जा सकता है ।

23. **चेक्का वेंकटा सूर्यनारायण मूर्ति** बनाम **अप्पणा वीराजू और एक अन्य**[1] वाले मामले में खंड न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया है कि परिसीमा अवधि की संविधि लागू करने में साम्यिक विचार की आवश्यकता होती है, शब्दों का कठोर व्याकरणीय अर्थान्वयन सुरक्षित मार्गदर्शक होते हैं । खंड न्यायपीठ ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

> "10. लार्ड हाबहाउस ने मुस्समात बस्सो कौर **बनाम** लाला धुन सिंह (1887-88) 15 इंडिया अपील 211 पृष्ठ 218 (पी. सी.) वाले मामले में कुछ इसी प्रकार की कहानी प्रतिपादित की है –
>
> > 'यह असुविधाजनक राज्य विधि होगा यदि यह एक व्यक्ति के लिए अपनी सम्पत्ति के खोने के जोखिम के अधीन निश्चित तौर पर व्यर्थ मुकदमा संस्थित करना आवश्यक होता है, यदि वह ऐसा नहीं करता है । और यह दयनीय राज्य विधि होगी यदि यह पाया जाता है कि एक ऋणी, जो वर्षों से इस बात पर जोर दे रहा है कि उसका लेनदार एक विशिष्ट तरीके से संदाय लेगा तो वह जब यह विनिश्चित करता है कि वह इस बात के लिए मजबूर नहीं कर सकता है कि तरीका बदल सकता है और यह कहता है कि समय बीतने के साथ वह सभी प्रकार के संदाय करने से अवमुक्त हो गया ।'
>
> किन्तु, माननीय उच्चतम न्यायालय ने सिराज-उल-हग **बनाम** एस. ए. बोर्ड आफ वक्फ वाले मामले में, इससे कटु मत व्यक्त किया है और नागेन्द्र नाथ डे **बनाम** सुरेश चन्द डे (1932) 59 इंडिया अपील 283 (पी. सी.) वाले मामले में अधिकथित इस युक्ति को अंगीकार किया अर्थात् 'साम्यिक विचार की आवश्यकता होती है, शब्दों का कठोर व्याकरणीय अर्थान्वयन सुरक्षित मार्गदर्शक होते हैं'।"

24. **बरुना गिरी और अन्य** बनाम **राजकिशोर गिरी और अन्य**[2] वाले

---

[1] ए. आई. आर. 1980 आंध्र प्रदेश 32.

[2] ए. आई. आर. 1983 उड़ीसा 107.

मामले में खंड न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया है कि परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 54 के अधीन संविदा के विनिर्दिष्ट पालन की परिसीमा तीन वर्ष है और परिसीमा अवधि की गणना पालन के लिए नियत तारीख से की जाएगी या यदि ऐसी तारीख नियत नहीं है तो इसकी तब से गणना की जाएगी जब वादी को यह सूचना मिली कि पालन करने से इनकार कर दिया गया है । खंड न्यायपीठ ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

> "9. अगली दलील यह दी गई कि प्रतिवादियों का कब्जा उस तारीख से प्रतिकूल हो गया जब संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद फाइल करने का उनका अधिकार परिसीमा अवधि द्वारा वर्जित हो गया था । परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 54 के अधीन संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए परिसीमा अवधि तीन वर्ष है और परिसीमा अवधि की गणना पालन के लिए नियत तारीख से की जाएगी या यदि ऐसी तारीख नियत नहीं है तो इसकी तब से गणना की जाएगी जब वादी को यह सूचना मिली कि पालन करने से इनकार कर दिया गया है । यह अभिकथित है कि सिरोपाणी गिरी के तारीख 16 फरवरी, 1947 की अपनी याचिका में किए गए कथन (प्रदर्श ए-2) संविदा के इनकार की कोटि में आता है और उस तारीख से प्रतिवादियों को संविदा पालन से इनकार करने की जानकारी हुई और विनिर्दिष्ट पालन कराने के लिए वाद फाइल करने का उनका अधिकार तारीख 16 फरवरी, 1947 के पश्चात् तीन वर्ष होने के नाते वर्जित हो गया, अर्थात् तारीख 16 फरवरी, 1950 से कह सकते हैं । यह दलील दी गई कि प्रतिवादियों का कब्जा तारीख 16 फरवरी, 1950 से वादियों के प्रतिकूल हो गया और तारीख 21 दिसम्बर, 1967 को वर्तमान वाद फाइल किया गया, इसलिए, यह अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए कि प्रतिवादियों ने प्रतिकूल कब्जे द्वारा हक अर्जित कर लिया है । शिव कुमार **बनाम** अजोधिया नाथ [ए. आई. आर. 1972 जम्मू एण्ड कश्मीर 125 (एफ. बी.)] वाले मामले का अवलंब लिया गया जिसमें निम्नलिखित मत व्यक्त किया गया था :–
>
> > '.....जहां विक्रय करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए समय समाप्त हो गया हो वहां प्रतिवादी का कब्जा प्रतिकूल हो जाता है और यदि विक्रेता इस तारीख से 12 वर्ष बीतने देगा तो

प्रतिवादी का कब्जा चिरभोग द्वारा हक पक्का हो जाता है ।'

हम, इस दलील को स्वीकार करने में स्वयं को असमर्थ पाते हैं कि प्रतिवादियों का अनुज्ञेय कब्जा प्रतिकूल कब्जे में परिवर्तित हो गया मात्र इस कारण से कि विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद करने का उनका अधिकार वर्जित हो गया । प्रथम प्रक्रम में ही प्रतिवादियों को इसे अभिवाचित करना चाहिए था और यह साबित करना चाहिए था कैसे और कब से उनके कब्जे, जो आरम्भतः अनुज्ञेय था, की प्रकृति परिवर्तित हो गई और प्रतिकूल हो गई । जब तक कि इस अभिवाक् को विनिर्दिष्टतः अभिवचन में उद्भूत नहीं किया जाता है तब तक इसे अपील में प्रथम बार के लिए वादियों को आश्चर्य में डालने के लिए मंजूर नहीं किया जा सकता है । न तो इसका लिखित कथन में कोई प्रकथन किया गया है न ही यह दर्शित करने के लिए कोई साक्ष्य प्रस्तुत किया गया है जब प्रतिवादियों को प्रथम बार यह नोटिस हुआ या महसूस हुआ कि वादी विक्रय विलेख को निष्पादित करने और रजिस्ट्रीकृत करने के लिए रजामन्द नहीं हैं । यह दलील कि तारीख 16 फरवरी, 1997 को प्रतिवादियों को संविदा पालन से इनकार करने की जानकारी हुई, लिखित कथन में अभिवाचित मामले से असंगत है । लिखित कथन के पैराग्राफ 4 और 13 में किए गए अभिकथन इस प्रभाव के थे कि संविदा की तारीख अर्थात् 23 मार्च, 1936 तक प्रतिवादी और उनके पूर्वज वादियों के प्रतिकूल वाद भूमि के कब्जे में थे । द्वितीयतः, प्रतिवादी, संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53-क के अधीन कब्जा बनाए रखने के हकदार थे, यद्यपि कि विनिर्दिष्ट पालन के लिए उनका अधिकार वर्जित था या संविदा अन्यथा अप्रवर्तनीय हो गई थी (देखें – के. वेंकटसुब्बय्या **बनाम** के. रोसय्या [(ए. आई. आर. 1957 आंध्र प्रदेश 58) और जहांगीर बेगम **बनाम** गुलाम अली अहमद (ए. आई. आर. 1955 हैदराबाद 101)]। धारा 53-क के अधीन प्रतिरक्षा का उद्देश्य उस संविदा को प्रवर्तित कराने का अधिकार देता है जो वर्जित हो गया है । प्रतिरक्षा करने की परिसीमा अवधि वर्जित नहीं होती है । जब मौजूदा स्वामी के कब्जा बनाए रखने के अधिकार में किसी प्रक्रम पर चुनौती नहीं दी जाती है तो ऐसा कब्जा अंतिम हो जाता है । अतएव, उसकी मौन सहमति से उसके विरुद्ध चिरभोग उद्भूत नहीं हो सकता है न ही ऐसा कब्जा प्रतिकूल हो सकता है । इस दलील में यह उल्लिखित किया गया है कि संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की

धारा 53-क, जम्मू एण्ड कश्मीर राज्य में लागू नहीं होता है । तृतीयतः, प्रतिवादियों का कब्जा स्पष्टतः अनुज्ञेय है न कि वादियों के प्रतिकूल है, ऐसी उपधारणा तब तक की जाएगी जब तक कि प्रतिकूलता स्पष्ट और विश्वसनीय साक्ष्य द्वारा साबित नहीं हो जाती है । यह दर्शित करने के लिए अभिलेख पर कोई सामग्री नहीं है कि प्रतिवादियों का संविदा के अनुसरण में भूमि पर कब्जा बनाए रखने के विचार का त्यजन कर दिया था और प्रतिकूल हक का प्रत्याख्यान किया था । यह दर्शित करने के लिए कुछ नहीं है कि किसी समय पर उनका कब्जा, कुछ असामान्य कृत्यों, खुले स्वामित्व के प्रत्याख्यान, कुख्यात और पक्षद्रोही आचरण द्वारा समाप्त हो गया था । यह तथ्य की संविदा को प्रवर्तित कराने के उनके अधिकार के पश्चात् भूमि पर निरन्तर कब्जा बनाए रखने से संविदा वर्जित हो गया, यह दर्शित करने के लिए पर्याप्त नहीं है कि उन्हें वादियों के विरुद्ध प्रतिकूल अभिनिर्धारित किया जाए । अनुज्ञेय कब्जा या अनुज्ञेय कब्जे को प्रतिकूल कब्जे में परिवर्तित नहीं किया जा सकता है जब तक कि यह साबित नहीं कर दिया जाता कि कब्जे में रहने वाला व्यक्ति, 12 वर्ष या इससे अधिक की अवधि से स्वामी की जानकारी में संपत्ति में प्रतिकूल हक का प्रत्याख्यान किया है । (देखें – स्टेट बैंक आफ त्रावणकोर **बनाम** ए. के. पणिकर (ए. आई. आर. 1971 एस. सी. 996) ।"

25. **पुखराज डी. जैन और अन्य** बनाम **जी. गोपालाकृष्णा**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों ने यह अभिनिर्धारित किया है कि परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 54 के अधीन तीन वर्षों की अवधि की गणना पालन के लिए नियत तारीख से की जाएगी या यदि ऐसी तारीख नियत नहीं है तो उस तारीख से की जाएगी जब वादी को यह जानकारी हुई कि पालन से इनकार कर दिया गया है । माननीय न्यायाधीशों ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

"5. वर्तमान मामले के तथ्य स्वयमेव ही अपनी कहानी कहते हैं । प्रश्नगत करार को अपीलार्थी सं. 6 से 10 (मूल स्वामी) द्वारा जी. गोपालाकृष्णा (प्रत्यर्थी सं. 1) के पक्ष में तारीख 5 दिसम्बर, 1979 को निष्पादित किया गया था । उसने स्वयं ही संविदा रद्द करते हुए, विधिक नोटिस जारी किया था और संदत्त अग्रिम रकम

[1] (2004) 7 एस. सी. सी. 251.

वापस करने का दावा किया था । इसके पश्चात्, तारीख 7 नवम्बर, 1977 को उसने स्वयं द्वारा संदत्त अग्रिम धन की वसूली के लिए एक वाद फाइल किया । यह स्पष्टतः दर्शित करता है कि उसने अपने पक्ष में संपत्ति का विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए संविदा के अधीन अपने अधिकार को छोड़ दिया था । विचारणीय अवधि व्यतीत होने के पश्चात् उसने वाद को विक्रय करार के विनिर्दिष्ट पालन में परिवर्तित करने की ईप्सा करते हुए, संशोधन करने के लिए एक आवेदन फाइल किया, किन्तु उक्त आवेदन को विचारण न्यायालय ने परिसीमा अवधि द्वारा वर्जित होने के कारण तारीख 3 दिसम्बर, 1984 को खारिज कर दिया था । उक्त आदेश के विरुद्ध प्रस्तुत पुनरीक्षण को उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया था और इसलिए, विचारण न्यायालय का यह निष्कर्ष कि विक्रय करार के विनिर्दिष्ट पालन की ईप्सा करने का अनुतोष परिसीमा अवधि द्वारा वर्जित हो गया था इसलिए अंतिमता प्राप्त कर लिया । रकम की वसूली के लिए वाद को विचारण न्यायालय द्वारा तारीख 24 जुलाई, 1985 को डिक्री कर दिया गया था किन्तु, प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा अत्यधिक चालाकी के कारण विधिक नोटिस की लागत के बारे में 125/- रुपए की अतिरिक्त रकम और इसके पश्चात् बढ़ोत्तरी दावे पर 12.50 रुपए की अपेक्षित अतिरिक्त न्यायालय शुल्क संदाय नहीं करने के लिए उसके द्वारा फाइल पुनरीक्षण आवेदन में रकम वापस करने की डिक्री को उच्च न्यायालय ने अपास्त कर दिया और वाद पत्र नामंजूर कर दिया था । इससे व्यथित होकर प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा तारीख 2 अप्रैल, 1988 को वर्तमान अपील संस्थित की गई थी जिसमें उसने पुनः तारीख 5 दिसम्बर, 1974 के विक्रय करार के विनिर्दिष्ट पालन की ईप्सा की थी । विचारण न्यायालय की यह राय थी कि वर्तमान वाद लगभग 14 वर्षों पश्चात् फाइल किया गया था । प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा ईप्सित पूर्ववर्ती वाद (1977 की मूल वाद सं. 801) जिसमें उसने अपने वाद को विक्रय करार के विनिर्दिष्ट पालन में परिवर्तित करने की ईप्सा की थी, को नामंजूर कर दिया गया था और यह निष्कर्ष अभिलिखित किया गया था कि विनिर्दिष्ट पालन के लिए अनुतोष पहले ही परिसीमा अवधि द्वारा वर्जित हो गया था और इस निष्कर्ष की उच्च न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण में पुष्टि कर दी गई थी । परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 54, संविदा के

विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद संस्थित करने के लिए तीन वर्षों की परिसीमा अवधि का उपबंध करता है । तीन वर्षों की इस अवधि की गणना पालन के लिए नियत तारीख से की जाती है या यदि ऐसी तारीख नियत नहीं है तो तब से जब वादी को उसके पालन करने से इनकार करने की जानकारी हुई । अपीलार्थी सं. 6 से 10 (संपत्ति के मूल स्वामी) ने प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा करार के विनिर्दिष्ट पालन के अनुतोष की ईप्सा करते हुए पूर्ववर्ती वाद में संशोधन के लिए फाइल आवेदन का परिसीमा अवधि के अधार पर विरोध किया और उनके अभिवाक् को स्वीकार कर लिया गया था । इस प्रकार, यह पूर्णतः स्पष्ट है कि प्रत्यर्थी सं. 1 के वर्तमान वाद फाइल करने के पूर्व इस तथ्य की जानकारी होते हुए भी मूल स्वामी उसके पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए तैयार नहीं थे । मूल स्वामियों (अपीलार्थी सं. 6 से 10) ने तारीख 18 अप्रैल, 1985 को अपीलार्थी सं. 1 से 5 के पक्ष में विवादित संपत्ति का विक्रय कर दिया था जब विचारण न्यायालय द्वारा संशोधन आवेदन नामंजूर कर दिया गया था, यह निष्कर्ष निकालते हुए कि विनिर्दिष्ट पालन के लिए अनुतोष परिसीमा अवधि द्वारा वर्जित हो गया है । इन तथ्यों के आधार पर कोई अन्य निष्कर्ष निकालना संभाव्य नहीं था और विचारण न्यायालय, यह अभिनिर्धारित करने में निश्चित तौर पर न्यायानुमत था कि वाद (1988 की मूल वाद सं. 1629) परिसीमा अवधि द्वारा वर्जित था ।"

26. **अहमदसाहब अब्दुल मुल्ला (2)** बनाम **बीबी जान और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों ने यह अभिनिर्धारित किया है कि अभिव्यक्ति "पालन के लिए नियत तारीख" एक निश्चित धारणा है । जब तारीख नियत है, इसका अभिप्राय यह है कि एक विशिष्ट कार्य करने के लिए एक सुनिश्चित तारीख नियत है । यहां पुनः, एक सुनिश्चित समय है जब वादी को इनकार करने की जानकारी हुई । माननीय न्यायाधीशों ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

"10. 'नियत' का सारतः अभिप्राय अंतिम या सुनिश्चित प्ररूप या चरित्र से है जो परिवर्तन या अस्थिरता के अध्यधीन नहीं होता है ।

11. अपरिहार्य निष्कर्ष यह है कि अभिव्यक्ति 'पालन के लिए

---

[1] (2009) 5 एस. एस. सी. 462.

नियत तारीख' एक निश्चित धारणा है । यह इस तथ्य से स्पष्ट है कि द्वितीय भाग 'समय जिससे अवधि आरम्भ होती है' ऐसे मामले के प्रति निर्दिष्ट करती है जहां ऐसी कोई तारीख नियत नहीं होती है । इससे भिन्न तौर पर, जब तारीख नियत होती है तब इसका अभिप्राय यह होता है कि विशिष्ट कार्य करने के लिए एक सुनिश्चित तारीख नियत है । द्वितीय भाग में भी इस बात पर जोर दिया गया है कि जब वादी को पालन करने से इनकार करने की जानकारी हुई । यहां पुनः, एक सुनिश्चित समय है जब वादी को इनकार करने की जानकारी हुई । उस अभिप्राय में, दोनों ही भाग, सुनिश्चित तारीख को ही निर्दिष्ट करते हैं । इसलिए, इस बात का कोई प्रश्न ही नहीं उठता है कि अन्य परिस्थितियों से कोई अन्य आशय निकाला जाए ।

12. क्या तारीख नियत थी या वादी को यह जानकारी नहीं थी कि पालन करने से इनकार कर दिया गया है और उसकी तारीख अभिलेख पर लाए गए सामग्रियों और साक्ष्यों के संदर्भ में सिद्ध किया जाना है । अधिनियम, 1963 की धारा 54 में प्रयुक्त अभिव्यक्ति तारीख, सुनिश्चित तौर पर कलैण्डर में विनिर्दिष्ट तारीख को दर्शाता है । हम, निर्देश का तद्नुसार उत्तर देते हैं । अब, मामले को, गुणागुणों पर विवाद्यक विनिश्चित करने के लिए खंड न्यायपीठ के समक्ष प्रस्तुत किया जाए ।"

27. तद्नुसार, नियमित द्वितीय अपील मंजूर की जाती है और विद्वान् जिला न्यायाधीश, सोलन, हिमाचल प्रदेश द्वारा 2005 की सिविल अपील सं. 73-एस./13 में पारित तारीख 24 अप्रैल, 2006 के निर्णय और डिक्री को अपास्त किया जाता है और विद्वान् सिविल न्यायाधीश (ज्येष्ठ खंड) कसौली द्वारा 1999/1996 की सिविल वाद सं. 722/1 में पारित तारीख 3 सितम्बर, 2005 के निर्णय और डिक्री को बहाल (पुनः स्थापित) किया जाता है । प्रकीर्ण आवेदन/आवेदनों, यदि कोई हों, को भी निपटाया जाता है । खर्चे का कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

द्वितीय अपील मंजूर की गई ।

क.

बसोली (श्रीमती) (मृत) मार्फत **इसके विधिक प्रतिनिधिगण श्री विजय कुमार और अन्य**

बनाम

भगतू राम और अन्य

तारीख 24 जुलाई, 2015

न्यायमूर्ति तारलोक सिंह चौहान

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 100 – द्वितीय अपील में विधि और तथ्य के विवाद्यक प्रश्न – दोनों प्रकार के प्रश्नों पर विचार करना – विधि के प्रश्न पर विचार करने की अधिकारिता को चुनौती देना – चुनौती मंजूर होना – यदि द्वितीय अपील में विवाद्यक प्रश्न दोनों तथ्य और विधि विषयक प्रश्न हैं तो विधि के प्रश्नों पर तभी विचार किया जा सकता है जब कि वह सारवान् प्रकृति के प्रश्न हों अन्यथा नहीं ।

वर्तमान मामले में, वादियों-प्रत्यर्थियों ने श्री सेतू राम, प्रोफार्मा प्रत्यर्थी के साथ एक वाद फाइल किया, यह दावा करते हुए कि वे प्रतिवादियों के कब्जे में पुराना खसरा सं. 571, माप 36 कनाल, 4 मरला भूमि के संयुक्त स्वामी हैं । उन्होंने यह अभिवाक् किया कि वर्ष 1983 की चकबंदी में नए खसरा सं. 565, माप 8 कनाल, 6 मरला भूमि टीका भरोली भागौर, तप्पा हथोल, तहसील नादौन, जिला हमीरपुर, हिमाचल प्रदेश (वाद भूमि) में स्थित भूमि के इस भाग को दान द्वारा वादियों को आबंटित किया गया था । तभी से, उसके बाद वाद भूमि वादियों के कब्जे में आ गई थी और वर्ष 1985-86 के जमाबंदी में अभिलिखित की गई थी । किन्तु, प्रतिवादियों ने वर्ष 1993 में चकबंदी प्राधिकारियों के साथ मौन सहमति दे रखी थी । तारीख 12 जुलाई, 1993 के नामांतरण सं. 362 द्वारा अभिधृति के आधार पर उनके पक्ष में वाद भूमि के 3 कनाल, 2 मरला तक की भूमि आबंटित की गई थी । प्रतिवादी, चकबन्दी कार्यवाहियों के पूर्व या पश्चात् कभी भी वादियों के किराएदार नहीं रहे । इसलिए, प्रतिवादियों के पक्ष में तारीख 12 जुलाई 1993 का नामांतरण सं. 362, अवैध, अकृत और शून्य है । गलत प्रविष्टियों का असम्यक् लाभ उठाते हुए, प्रतिवादियों ने वादियों को वाद भूमि से बेकब्जा करने का प्रयास कर रहे हैं और इस प्रकार, वे ऐसा करने से प्रतिषिद्ध किए जाने के लिए दायी हैं । प्रत्यर्थियों-अपीलार्थियों ने संयुक्त

लिखित कथन फाइल करते हुए यह दावा किया कि वाद भूमि में से 3 कनाल, 2 मरला भूमि को चकबन्दी अधिकारी, हमीरपुर द्वारा विनिश्चित रिमांड मामला सं. 28/89 में पारित तारीख 19 अप्रैल, 1993 के आदेश द्वारा उन्हें आबंटित किया गया था और जिसके आधार पर, 12 जुलाई 1993 का नामांतरण सं. 362 की सही ही मंजूरी दी गई थी । यह जमाबन्दी वर्ष 1990-91 में प्रलक्षित है जिसमें दान द्वारा खसरा सं. 365/1 की 3 कनाल, 2 मरला भूमि के स्वामी के रूप में उनका कब्जा दर्शित है । इस भूमि के बदले में, वादियों ने रिमांड मामला सं. 28/89 में चकबन्दी अधिकारी के द्वारा पारित तारीख 19 अप्रैल, 1993 के आदेश द्वारा प्रतिवादियों की भूमि प्राप्त की थी । आदेश अंतिम हो गया था । इसलिए, वादियों को उसे चुनौती देते हुए, सुने जाने का अधिकार नहीं है । अभिधृति के मामले के रूप में, इसका सक्षम न्यायालय द्वारा अधिनिर्णय किया गया है, इसलिए, इस न्यायालय को विचारण करने की कोई अधिकारिता नहीं है । चकबन्दी अधिकारी का आदेश गुणागुणों पर पारित किया गया था और यह अंतिम हो गया है, आक्षेपों के साथ ही इसे बनाए रखने, सुने जाने के अधिकार, वाद-हेतुक और परिसीमा अवधि भी उद्भूत किए गए । वादियों ने प्रत्युत्तर द्वारा अपने मामले का पुनः प्रत्याख्यान किया और प्रतिवादियों के प्रतिकूल अभिवाकों का विरोध किया । विद्वान् विचारण न्यायालय ने साक्ष्य अभिलिखित करने और उनका मूल्यांकन करने के पश्चात् वाद खारिज कर दिया और उसके विरुद्ध प्रस्तुत अपील में, विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री अपास्त कर दिया गया, जिसके परिणामस्वरूप वादी का वाद डिक्री कर दिया गया और प्रतिवादियों-अपीलार्थियों को वाद भूमि किसी भी तरीके से हस्तक्षेप कारित करने से अवरुद्ध कर दिया गया । इससे व्यथित होकर वर्तमान द्वितीय अपील फाइल की गई । न्यायालय द्वारा द्वितीय अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – यद्यपि, विद्वान् निचले अपील न्यायालय ने विद्वान् विचारण न्यायालय के निष्कर्षों को उलट दिया था किन्तु, विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए कारणों का कोई भी उल्लेख नहीं किया गया और इसलिए, अपील न्यायालय ने विधि द्वारा उस पर अधिरोपित अपने कर्तव्यों का निर्वहन नहीं किया । विद्वान् निचले अपील न्यायालय को विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा समनुदेशित कारणों की क्रमवार सूक्ष्म संवीक्षा करना अपेक्षित था और उसके पश्चात्, भिन्न निष्कर्षों पर पहुंचने के लिए स्वयं अपने कारण समनुदेशित करना चाहिए था । अधिकारिता का प्रश्न, मामले की

जड़ तक जाता है और जब तक न्यायालय यह निष्कर्ष नहीं निकालता है कि वस्तुतः अधिकारिता है, इसमें कोई अन्य कार्यवाही नहीं की जा सकती है । विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय से ऐसे कर्तव्य का निर्वहन करने की प्रत्याशा की जाती है न केवल अंतिम न्यायालय होने के नाते, जिसके निष्कर्ष इस न्यायालय में चुनौती से उन्मुक्त होते हैं अपितु, विधि का अंतिम न्यायालय होने के नाते भी, क्योंकि द्वितीय अपील में इस न्यायालय के समक्ष त्रुटिपूर्ण विनिश्चय भी दोषपूर्ण नहीं हो सकते हैं । यह अत्यधिक सुस्थिर है कि सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते समय, इस न्यायालय की अधिकारिता विधि के प्रश्नों पर भी प्रथम अपील न्यायालय के दोषपूर्ण निष्कर्षों या विधि की गलतियों को सुधारने के संबंध में अब समाप्त हो गई है जब तक ऐसा विधि का प्रश्न सारवान् न हो । चूंकि, विद्वान् निचले अपील न्यायालय ने अधिकारिता के प्रश्न पर कोई उल्लेख नहीं किया है, इसलिए, इसके निष्कर्ष दोषपूर्ण हैं और कायम नहीं रखे जा सकते हैं । (पैरा 12, 13, 14 और 15)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2015]	2015 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 777 : **शशिधर और अन्य** बनाम **श्रीमती अश्वनी ऊमा माथड़ और एक अन्य** ;	9
[2001]	[2001] 4 उम. नि. प. 33 = (2001) 3 एस. सी. सी. 179 : **संतोष हजारी** बनाम **पुरुषोत्तम तिवारी (मृत),** मार्फत **इसके विधिक प्रतिनिधिगण** ।	14

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2005 की नियमित द्वितीय अपील सं. 30.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से	श्री आर. के. गौतम, ज्येष्ठ अधिवक्ता के साथ सुश्री मेधा कपूर गौतम, अधिवक्ता
प्रत्यर्थी सं. 1, 2(क) से 2(ग) की ओर से	श्री अश्वनी कुंदल, अधिवक्ता

न्यायमूर्ति तारलोक सिंह चौहान – यह नियमित द्वितीय अपील, विद्वान् जिला न्यायाधीश, हमीरपुर द्वारा 2004 की सिविल अपील सं. 39 में पारित तारीख 10 जनवरी, 2005 के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध निर्देशित है, जिसके द्वारा उन्होंने विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित तारीख 31 दिसम्बर, 2003 के निर्णय और डिक्री तथा वादियों-प्रत्यर्थियों के वाद में डिक्री को उलट दिया था ।

2. वादपत्र में अधिकथित तथ्य यह हैं कि वादियों-प्रत्यर्थियों ने श्री सेतू राम, प्रोफार्मा प्रत्यर्थी के साथ एक वाद फाइल किया, यह दावा करते हुए कि वे प्रतिवादियों के कब्जे में पुराना खसरा सं. 571, माप 36 कनाल, 4 मरला भूमि के संयुक्त स्वामी हैं । उन्होंने यह अभिवाक् किया कि वर्ष 1983 की चकबंदी में नए खसरा सं. 565, माप 8 कनाल, 6 मरला भूमि टीका भरोली भागौर, तप्पा हथोल, तहसील नादौन, जिला हमीरपुर, हिमाचल प्रदेश (वाद भूमि) में स्थित भूमि के इस भाग को दान द्वारा वादियों को आबंटित किया गया था । तभी से, उसके बाद वाद भूमि वादियों के कब्जे में आ गई थी और वर्ष 1985-86 के जमाबंदी में अभिलिखित की गई थी । किन्तु, प्रतिवादियों ने वर्ष 1993 में चकबंदी प्राधिकारियों के साथ मौन सहमति दे रखी थी । तारीख 12 जुलाई, 1993 के नामांतरण सं. 362 द्वारा अभिधृति के आधार पर उनके पक्ष में वाद भूमि के 3 कनाल, 2 मरला तक की भूमि को आबंटित किया गया था । प्रतिवादी, चकबन्दी कार्यवाहियों के पूर्व या पश्चात् कभी भी वादियों के किराएदार नहीं रहे । इसलिए, प्रतिवादियों के पक्ष में तारीख 12 जुलाई, 1993 का नामांतरण सं. 362, अवैध, अकृत और शून्य है । गलत प्रविष्टियों का असम्यक् लाभ उठाते हुए, प्रतिवादियों ने वादियों को वाद भूमि से बेकब्जा करने का प्रयास कर रहे हैं और इस प्रकार, वे ऐसा करने से प्रतिषिद्ध किए जाने के लिए दायी हैं ।

3. प्रत्यर्थियों-अपीलार्थियों ने संयुक्त लिखित कथन फाइल करते हुए यह दावा किया कि वाद भूमि में से 3 कनाल, 2 मरला भूमि को चकबन्दी अधिकारी, हमीरपुर द्वारा विनिश्चित रिमांड मामला सं. 28/89 में पारित तारीख 19 अप्रैल, 1993 के आदेश द्वारा उन्हें आबंटित किया गया था और जिसके आधार पर, 12 जुलाई, 1993 का नामांतरण सं. 362 की सही ही मंजूरी दी गई थी । यह जमाबन्दी वर्ष 1990-91 में प्रलक्षित है जिसमें दान द्वारा खसरा सं. 365/1 की 3 कनाल, 2 मरला भूमि के स्वामी के रूप में उनका कब्जा दर्शित है । इस भूमि के बदले में, वादियों ने रिमांड मामला

सं. 28/89 में चकबन्दी अधिकारी के द्वारा पारित तारीख 19 अप्रैल, 1993 के आदेश द्वारा प्रतिवादियों की भूमि प्राप्त की थी । आदेश अंतिम हो गया था । इसलिए, वादियों को उसे चुनौती देते हुए, सुने जाने का अधिकार नहीं है । अभिधृति के मामले के रूप में, इसका सक्षम न्यायालय द्वारा अधिनिर्णय किया गया है, इसलिए, इस न्यायालय को विचारण करने की कोई अधिकारिता नहीं है । चकबन्दी अधिकारी का आदेश गुणागुणों पर पारित किया गया था और यह अंतिम हो गया है, आक्षेपों के साथ ही इसे बनाए रखने, सुने जाने के अधिकार, वाद-हेतुक और परिसीमा अवधि भी उद्भूत किए गए ।

4. वादियों ने प्रत्युत्तर द्वारा अपने मामले का पुनः प्रत्याख्यान किया और प्रतिवादियों के प्रतिकूल अभिवाकों का विरोध किया । विद्वान् विचारण न्यायालय ने तारीख 10 मई, 2000 को निम्नलिखित विवाद्यक विरचित किए :–

> "1. क्या वादी वाद भूमि के कब्जे सहित स्वामी हैं और क्या राजस्व अभिलेखों में कोई परिवर्तन तथा चकबन्दी अधिकारी, हमीरपुर द्वारा अभिधृति के आधार पर प्रतिवादियों को 3 कनाल, 2 मरला भूमि का आबंटन अवैध, तथ्यों के परे है और इसलिए, वादियों के विधि में निहित हित को देखते हुए, यह अकृत और शून्य है और वादियों पर आबद्धकारी नहीं है ?
>
> 2. यदि विवाद्यक सं. 1 साबित कर दिया जाता है तो क्या वादी, व्यादेश का अनुतोष पाने के हकदार हैं, जैसी कि प्रार्थना की गई है ?
>
> 3. क्या वाद, वर्तमान प्ररूप में कायम रखे जाने योग्य नहीं है ?
>
> 4. क्या वादियों को वाद फाइल करने के लिए सुने जाने का अधिकार नहीं है ?
>
> 5. क्या वादियों के पास वाद फाइल करने के लिए कोई वाद हेतुक नहीं है ?
>
> 6. क्या इस न्यायालय को वाद का विचारण करने की अधिकारिता नहीं है ?
>
> 7. क्या वाद, परिसीमा अवधि द्वारा वर्जित है ?

8. क्या प्रतिवादी, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 35क के अधीन विशेष खर्चे पाने की हकदार हैं ?

9. अनुतोष ।"

5. विद्वान् विचारण न्यायालय ने साक्ष्य अभिलिखित करने और उनका मूल्यांकन करने के पश्चात् वाद खारिज कर दिया और उसके विरुद्ध प्रस्तुत अपील में, विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री अपास्त कर दिया गया, जिसके परिणामस्वरूप वादी का वाद डिक्री कर दिया गया और प्रतिवादियों-अपीलार्थियों को वाद भूमि किसी भी तरीके से हस्तक्षेप कारित करने से अवरुद्ध कर दिया गया ।

6. तारीख 2 मई, 2005 को अपील, निम्नलिखित विधि के सारवान् प्रश्नों पर स्वीकार कर लिया गया था :–

"1. क्या विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय के निष्कर्ष अभिलेख पर के साक्ष्यों से असंबद्ध हैं और कायम रखे जाने योग्य नहीं है ?

2. क्या विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय के निष्कर्ष पक्षकारों के अभिवचनों के परे हैं ?

3. क्या सिविल न्यायालय को इस वाद का विचारण करने की अधिकारिता नहीं है ?"

मैंने, अपीलार्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल के साथ ही प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल को सुना और मामले के अभिलेखों का परिशीलन किया ।

7. चूंकि, विधि के सभी सारवान् प्रश्न किसी न किसी प्रकार से एक दूसरे से जुड़े हुए और संबद्ध हैं, इसलिए, मैं उनका संयुक्त रूप से उत्तर देने की कार्यवाही करता हूं ।

8. इसे विवादित नहीं किया जा सकता है कि प्रथम अपील, तथ्यों के साथ ही विधि के प्रश्नों पर विनिश्चित की जाती है । प्रथम अपील में, पक्षकारों को विधि और तथ्यों के प्रश्नों पर सुने जाने का अधिकार होता है और प्रथम अपील न्यायालय से सभी विवाद्यकों पर स्वयं विचार करना और कारणों सहित मामले पर विनिश्चय करना अपेक्षित होता है ।

9. प्रथम अपील विनिश्चित करते समय, प्रथम अपील न्यायालय के क्षेत्र, परिधि और शक्तियां विभिन्न न्यायिक उद्घोषणाओं की विषय-वस्तु रही हैं और मैं, मात्र **शशिधर और अन्य** बनाम **श्रीमती अश्वनी ऊमा माथड़**

और एक अन्य[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा की गई नवीनतम उद्घोषणा को निर्दिष्ट करना आवश्यक समझता हूं, जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

> "11. पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुनने और मामले के अभिलेखों का परिशीलन करने और इस अपील में उद्भूत विवाद्यक की परीक्षा करने के पश्चात् हमारा यह निष्कर्ष है कि अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल के निवेदन में बल है ।
>
> 12. सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 96 के साथ पठित आदेश 41, नियम 41 के अधीन प्रथम अपील का विनिश्चय करते समय प्रथम अपील न्यायालय की शक्तियां, वस्तुतः इस न्यायालय के विभिन्न न्यायिक उद्घोषणाओं में अच्छी तरह परिभाषित की गई हैं और इसलिए यह अब अनिर्णीत विषय नहीं रहा है ।
>
> 13. वर्ष 1969 से पहले विद्वान् न्यायाधीश वी. आर. कृष्णा अय्यर (केरल उच्च न्यायालय के तत्कालीन न्यायाधीश) ने कूरियन चाको **बनाम** वर्की ओसेफ (ए. आई. आर. 1969 केरल 316) वाले मामले में सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 96 के अधीन प्रथम अपील का विनिश्चय करते समय, प्रथम अपील न्यायालय को उसकी ड्यूटी को दोहराया कि किस प्रकार प्रथम अपील न्यायालय को धारा 96 के अधीन प्रथम अपील का विनिश्चय करना चाहिए । अपने सुस्पष्ट लेखन शैली और विलक्षण अभिव्यक्ति की शक्ति का प्रयोग करते हुए, विद्वान् न्यायाधीश ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है –
>
> > '(1) वादी, दो न्यायालयों में असफल होने के पश्चात् अपने वाद को खारिज किए जाने से व्यथित होकर यहां आया है जिसमें उसने हक की घोषणा और कब्जे की बहाली का निवेदन किया है । प्रतिवादी ने विवादित संपत्ति में वादी के हक के साथ ही उसके कब्जे को भी विवादित किया है और इन दोनों के लिए स्वयं का दावा किया है । विद्वान् मुंसिफ न्यायालय, जिन्होंने वाद का विचारण किया, ने दोनों हक और कब्जे के बारे में वादी के विरुद्ध निष्कर्ष अभिलिखित किया । किन्तु, अपील में, विद्वान् अधीनस्थ न्यायाधीश ने कुछ ही वाक्यों में सम्पूर्ण

---

[1] 2015 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 777.

मामले को आसानी से और संक्षिप्त रूप में निपटा दिया ।

(2) साधारणतया, एक अपील न्यायालय अंतिम न्यायालय होता है और इसलिए, मुकदमेबाज, अपीली प्रक्रम पर साक्ष्यों पर विचार करते हुए, पूर्ण और ऋजु तथा स्वतंत्र न्याय प्राप्त करने का हकदार होता है । इससे कुछ भी कम उसके लिए अन्यायोचित होता है और मुझे इस बारे में कोई संदेह नहीं है कि वर्तमान मामले में, विद्वान् अधीनस्थ न्यायाधीश ने एक अपील न्यायालय के रूप में कुछ गलती की है जो उनसे अपेक्षित नहीं था । यद्यपि, अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेलों के बीच तुच्छ विरोध था, वे इस मताभिव्यक्ति के साथ मेरे समक्ष उपस्थित होने के लिए सहमत हुए हैं .....।'

14. इस न्यायालय ने कई मामलों में, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 96 के अधीन प्रथम अपील न्यायालय के क्षेत्र और शक्तियों के बारे में अधिकथित पूर्वोक्त सिद्धांत की पुष्टि की है और बाद में उन्हें दोहराया है ।

15. हम, इन पर विचार करने के लिए कुछ अन्य विनिश्चयों को निर्दिष्ट करना उपयुक्त समझते हैं ।

16. इस न्यायालय ने संतोष हजारी **बनाम** पुरुषोत्तम तिवारी (मृत), **मार्फत** इसके विधिक प्रतिनिधिगण (2001) 3 एस. सी. सी. 179 (पृष्ठ सं. 188-189) वाले मामले में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है –

'.....अपील न्यायालय के पास विचारण न्यायालय के निष्कर्षों को उलटने या पुष्टि करने की अधिकारिता होती है । प्रथम अपील, पक्षकारों का एक मूल्यवान अधिकार होता है जब तक कि इसे विधि द्वारा निर्बंधित नहीं कर दिया जाता है, सम्पूर्ण मामला, विधि और तथ्य दोनों तरह के प्रश्नों पर पुनः सुनवाई के लिए खुला होता है । इसलिए, अपील न्यायालय का निर्णय स्वयं में संचेतन विवेक और प्रस्तुत दलीलों के साथ उद्भूत सभी विवाद्यकों पर कारणों द्वारा समर्थित निष्कर्ष अभिलिखित करना चाहिए और अपील न्यायालय का विनिश्चय पक्षकारों पर आबद्धकारी होना चाहिए ..... अपील न्यायालय द्वारा तथ्य के

निष्कर्ष को उलटते समय विचारण न्यायालय द्वारा समनुदेशित कारणों की सूक्ष्म संवीक्षा करनी चाहिए और उसके बाद, भिन्न निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए स्वयं अपने कारण समनुदेशित करने चाहिए । यह आगे अपील की सुनवाई में न्यायालय का इस बारे में समाधान होता है कि प्रथम अपील न्यायालय ने स्वयं से प्रत्याशित अपने कर्तव्यों का निर्वहन किया है ..... ।'

17. उपर्युक्त मत का अनुसरण, इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा मधुकर और अन्य **बनाम** संग्राम और अन्य (2001) 4 एस. सी. सी. 756 वाले मामले में किया गया, जिसमें यह दोहराया गया कि प्रथम अपील न्यायालय के रूप में, उच्च न्यायालय का यह कर्तव्य होता है कि वह अपना निष्कर्ष अभिलिखित करने के पूर्व सभी विवाद्यकों और पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य पर विचार करें ।

18. एच. के. एन. स्वामी **बनाम** इरशाद वासित (2005) 10 एस. सी. सी. 243, (पृष्ठ 244) वाले मामले में, इस न्यायालय द्वारा निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है –

'(3) प्रथम अपील, तथ्यों के साथ ही विधि पर विनिश्चित किया जाना चाहिए । प्रथम अपील में पक्षकारों को विधि के साथ ही तथ्यों के प्रश्नों पर भी सुने जाने का अधिकार होता है और प्रथम अपील न्यायालय से सभी विवाद्यकों पर विचार करना तथा कारणों सहित मामले का विनिश्चय किया जाना अपेक्षित होता है । दुर्भाग्यपूर्ण रूप से उच्च न्यायालय ने वर्तमान मामले में या तो तथ्यों पर या विधि पर कोई निष्कर्ष अभिलिखित नहीं किया है । प्रथम अपील न्यायालय के रूप में, उच्च न्यायालय का यह कर्तव्य होता है कि वह हक के बारे में निष्कर्ष अभिलिखित करने के पूर्व सभी विवाद्यकों और पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य पर विचार करें ।'

19. इस न्यायालय द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 96 के क्षेत्र पर विचार करते समय, पुनः जगन्नाथ **बनाम** अरुलप्पा और एक अन्य (2005) 12 एस. सी. सी. 303, (पृष्ठ 303-304) वाले मामले में निम्नलिखित मत व्यक्त किया गया –

'2. प्रथम अपील न्यायालय, सम्पूर्ण साक्ष्य का पुनः मूल्यांकन कर सकता है और भिन्न निष्कर्ष निकाल सकता है .....।'

20. पुनः, बी. वी. नागेश और एक अन्य **बनाम** एच. वी. श्रीनिवास मूर्ति (2010) 13 एस. सी. सी. 530 वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा पूर्ववर्ती सभी निर्णयों का उल्लेख करते हुए, पूर्वोक्त उल्लिखित सिद्धांत को इन शब्दों में पुनः दोहराया गया है –

'3. अपील न्यायालय/उच्च न्यायालय द्वारा नियमित प्रथम अपील को किस प्रकार निपटाया जाना चाहिए, इस न्यायालय द्वारा विभिन्न विनिश्चयों में विचार किया गया है । सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 का आदेश 41, मूल डिक्रियों से अपील के बारे में उपबंध करता है । विभिन्न नियमों में से नियम 31 का यह समादेश है कि अपील न्यायालय के निर्णय में निम्नलिखित कथित होगा –

'(क) अवधार्य प्रश्न;

(ख) उन पर विनिश्चय;

(ग) विनिश्चय के लिए कारण; तथा

(घ) जहां वह डिक्री जिसकी अपील की गई है उलट दी जाती है या उसमें फेरफार किया जाता है वहां वह अनुतोष जिसका अपीलार्थी हकदार है, ...।'

4. अपील न्यायालय को विचारण न्यायालय के निष्कर्षों को उलटने या पुष्टि करने की अधिकारिता होती है । प्रथम अपील, पक्षकारों का एक मूल्यवान अधिकार होता है और जब तक कि विधि द्वारा निर्बंधित न हो, सम्पूर्ण मामला, दोनों तथ्य और विधि के प्रश्नों पर पुनः सुनवाई के लिए खुला होता है, इसलिए, अपील न्यायालय के निर्णय में, सचेतन विवेक प्रलक्षित होना चाहिए और प्रस्तुत दलीलों से उद्भूत सभी विवाद्यकों पर अभिलिखित निष्कर्ष कारणों सहित होने चाहिए और अपील न्यायालय का विनिश्चय पक्षकारों पर आबद्धकारी होना चाहिए । प्रथम अपील न्यायालय के रूप में, उच्च न्यायालय का यह कर्तव्य होता है कि वह अपना निष्कर्ष अभिलिखित करने के पूर्व

सभी विवाद्यकों और पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य पर विचार करे । प्रथम अपील एक मूल्यवान अधिकार होता है और पक्षकारों को दोनों विधि और तथ्यों के प्रश्नों पर सुनवाई का अधिकार होता है और निष्कर्षों से समर्थित कारणों द्वारा इसका विनिश्चय होना चाहिए । [देखें – संतोष हजारी **बनाम** पुरुषोत्तम तिवारी (2001) 3 एस. सी. सी. 179, (पृष्ठ 188, पैरा 15) और मधुकर **बनाम** संग्राम (2001) 4 एस. सी. सी. 756, (पृष्ठ 758, पैरा 5)]

5. उपर्युक्त कानूनी सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, आक्षेपित निर्णय का परिशीलन करने पर, हमें यह महसूस होता है कि उच्च न्यायालय, प्रथम अपील न्यायालय के रूप में अपनी आबद्धताओं का निर्वहन करने में असफल रहा है । हमारे मत में, अपील के अधीन निर्णय, गूढ़ निर्णय होता है और इसमें सुसंगत पहलुओं में से किसी का भी उल्लेख नहीं किया गया है । अपील को असंतोषप्रद तरीके से विनिश्चित किया गया है । नियमित प्रथम अपील के निर्णय का ध्यानपूर्वक परिशीलन करने से यह दर्शित होता है कि न्यायालय उन बातों पर विचार करने में असफल रहा है जिनकी प्रथम अपील न्यायालय से प्रत्याशा की जाती है । तद्नुसार, दोनों पक्षकारों के दावों पर गुणागुणों के आधार पर विचार किए बिना, हम, उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय और डिक्री को अपास्त करते हैं और विधि के अनुसरण में, इसका नए सिरे से निपटारा करने के लिए, इस नियमित प्रथम अपील को उच्च न्यायालय के पास वापस भेजते हैं ।'

21. इस न्यायालय द्वारा स्टेट बैंक आफ इंडिया और एक अन्य **बनाम** इम्मसंस इंटरनेशनल लिमिटेड और एक अन्य (2011) 12 एस. सी. सी. 174 वाले मामले में इसी प्रकार के सिद्धांत को दोहराते हुए, पूर्वोक्त उल्लिखित मामलों को अवलंब लिया गया । इस न्यायालय द्वारा विनोद कुमार **बनाम** गंगाधर [2014 (12) स्केल 171] वाले नवीनतम मामले में उद्भूत इसी प्रकार के तथ्यों पर, इसी प्रकार का मत अपनाया गया ।"

10. वर्तमान मामले के तथ्यों में, पूर्वोक्त सिद्धांत को लागू करते हुए, मेरा यह निष्कर्ष है कि विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय, प्रथम अपील का विनिश्चय करते समय, पूर्वोक्त सिद्धांतों को विचार में लेने में असफल रहा और आक्षेपित विनिश्चय पारित किया । यह विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के मूल परिशीलन से प्रकट होता है जहां अन्य आधारों के अलावा, अधिकारिता के आधार पर वाद खारिज कर दिया गया था, जैसा कि इसके निष्कर्षों के पैरा 25 से प्रकट होता है, जो इस प्रकार है :–

> "वर्तमान मामले में, हिमाचल प्रदेश अभिधृति (चकबन्दी और खंडकरण निवारण) अधिनियम, 1971 की स्कीम में, चकबन्दी अधिकारी द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध समान रूप से प्रभावी उपचारों का उपबंध किया गया है और इस प्रकार, यह नहीं कहा जा सकता है कि पर्याप्त और समुचित उपचार, उक्त अधिनियम के अधीन उपबंधित नहीं है । आगे, अभिलेख पर यह भी सिद्ध नहीं किया गया है कि चकबन्दी प्राधिकारी ने वर्तमान मामले पर विचार करते समय नैसर्गिक न्याय के आधारभूत सिद्धांतों और उक्त अधिनियम के उपबंधों का अतिक्रमण किया है । मेरा यह मत है कि यद्यपि, ऐसे मामलों में सिविल न्यायालय की अधिकारिता सम्पूर्णतः वर्जित नहीं होती है किन्तु सिविल न्यायालय की अधिकारिता वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में वर्जित है ।"

11. किन्तु, आश्चर्यजनक तौर पर, विद्वान् अपील न्यायालय ने मामले के इस पहलू को छुआ तक नहीं और निम्नलिखित मुद्दों को विरचित किया जो उसके अनुसार, अपील में अवधारण के लिए उद्भूत हुआ है :–

> "1. क्या वादी खसरा सं. 565 की सम्पूर्ण वाद भूमि के ऊपर अपना कब्जा साबित करने में समर्थ रहे हैं और इसके प्रतिकूल निष्कर्ष, अपील स्वीकार करने के पश्चात् अपास्त किए जाने योग्य हैं ?
>
> 2. अनुतोष ।"

12. इसके पश्चात्, न्यायालय ने प्रत्यर्थियों के पक्ष में मुद्दा सं. 1 का उत्तर दिया और अपील मंजूर कर ली । यद्यपि, विद्वान् निचले अपील न्यायालय ने विद्वान् विचारण न्यायालय के निष्कर्षों को उलट दिया था किन्तु, विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए कारणों का कोई भी

उल्लेख नहीं किया और इसलिए, अपील न्यायालय ने विधि द्वारा उस पर अधिरोपित अपने कर्तव्यों का निर्वहन नहीं किया ।

13. विद्वान् निचले अपील न्यायालय को विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा समनुदेशित कारणों की क्रमवार सूक्ष्म संवीक्षा करना अपेक्षित था और उसके पश्चात्, भिन्न निष्कर्षों पर पहुंचने के लिए स्वयं अपने कारण समनुदेशित करना चाहिए था । अधिकारिता का प्रश्न, मामले की जड़ तक जाता है और जब तक न्यायालय यह निष्कर्ष नहीं निकालता है कि वस्तुतः अधिकारिता है, इसमें कोई अन्य कार्यवाही नहीं की जा सकती है । विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय से ऐसे कर्तव्य का निर्वहन करने की प्रत्याशा की जाती है न केवल अंतिम न्यायालय होने के नाते, जिसके निष्कर्ष इस न्यायालय में चुनौती से उन्मुक्त होते हैं अपितु, विधि का अंतिम न्यायालय होने के नाते भी, क्योंकि द्वितीय अपील में इस न्यायालय के समक्ष त्रुटिपूर्ण विनिश्चय भी दोषपूर्ण नहीं हो सकते हैं ।

14. यह अत्यधिक सुस्थिर है कि सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते समय, इस न्यायालय की अधिकारिता विधि के प्रश्नों पर भी प्रथम अपील न्यायालय के दोषपूर्ण निष्कर्षों या विधि की गलतियों को सुधारने के संबंध में अब समाप्त हो गई है जब तक ऐसा विधि का प्रश्न सारवान् न हो । इसी प्रकार की मताभिव्यक्ति माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **संतोष हजारी** बनाम **पुरुषोत्तम तिवारी (मृत)**, मार्फत **इसके विधिक प्रतिनिधिगण**[1] वाले मामले में व्यक्त किया गया है, जो इस प्रकार है :–

> "15. विचारण न्यायालय के निर्णय के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि इसने उन विवाद्यकों, जिन पर पक्षकारों ने विचारण की ईप्सा की थी, को विनिश्चित करने के लिए पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य पर व्यापक रूप से विचार किया है । उसने यह भी निष्कर्ष निकाला कि विवादित भूमि पर प्रतिकूल कब्जे के अपने अभिवाक् के समर्थन में प्रतिवादी ने कोई दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया जबकि प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत मौखिक साक्ष्य विरोधी प्रकृति का था और इसलिए उस पर विश्वास नहीं किया जा सकता

---

[1] [2001] 4 उम. नि. प. 33 = (2001) 3 एस. सी. सी. 179.

है । प्रथम अपील न्यायालय ने कब्जे और बेकब्जा करने के प्रश्न पर जैसाकि वादी द्वारा अभिकथित किया गया और प्रतिकूल कब्जे के प्रश्न पर प्रतिवादी द्वारा भी अभिवाक् किया गया बहुत ही अस्पष्ट रीति में निर्णय को उलट दिया । अपील न्यायालय को विचारण न्यायालय के निर्णय को उलटने अथवा पुष्टि करने की अधिकारिता है । प्रथम अपील करना पक्षकारों का महत्वपूर्ण अधिकार है और जब तक विधि द्वारा निर्बंधित न हो, इस दृष्टि से पूरे मामले में तथ्य और विधि के प्रश्नों पर पुनः सुनवाई की जा सकती है । अतः, अपील न्यायालय के निर्णय से उसके द्वारा सचेतन विवेक का प्रयोग करना दर्शित होना चाहिए और पक्षकारों द्वारा अपील न्यायालय के विनिश्चय के लिए बल दिए गए तर्कों के साथ उद्भूत सभी विवाद्यकों के संबंध में अपने निष्कर्ष कारण सहित अभिलिखित करने चाहिए अपील न्यायालय के लिए विचारण न्यायालय के निर्णय की पुष्टि करना आसान है । यदि अपील न्यायालय, विचारण न्यायालय के मत से सहमत है तो उसे विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए कारणों को दोहराने अथवा साक्ष्य के प्रभाव को बताने की आवश्यकता नहीं है, न्यायालय द्वारा दिए गए कारण के साथ-साथ जिसका विनिश्चय अपीलाधीन है, सामान्य सहमति की अभिव्यक्ति साधारणतः पर्याप्त होगी । [गिरिजा नन्दनी देवी और अन्य **बनाम** ब्रिजेन्द्र नारायण चौधरी (ए. आई. आर. 1167 एस. सी. 1124) वाले मामले को देखें] । तथापि, हम सावधान करते हैं । अपीलाधीन निर्णय में अभिलिखित निष्कर्षों के साथ साधारण सहमति की अभिव्यक्ति अपील न्यायालय द्वारा उसे सौंपे गए कर्तव्य से बचने के लिए अंगीकृत युक्ति या छल के रूप में नहीं होनी चाहिए । अपील न्यायालय को निर्णय उलटते समय दो सिद्धांतों के प्रति सावधान रहना होगा । प्रथमतः, अपील न्यायालय को भी विचारण न्यायालय द्वारा विरोधी साक्ष्य के आधार पर दिए गए तथ्य के निष्कर्षों को अधिक महत्व दिया जाना चाहिए, इससे भी अधिक तब जब उसी पीठासीन न्यायाधीश जो निर्णय का लेखक था, द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष मौखिक साक्ष्य पर आधारित हो । निश्चित तौर पर इसका यह अर्थ नहीं होना चाहिए कि जब कोई अपील तथ्यों के आधार पर की जाती है तो अपील न्यायालय, विचारण न्यायाधीश द्वारा निकाले गए तथ्य के निष्कर्षों को उलटने के लिए सक्षम नहीं होगा । यदि

विचारण न्यायालय द्वारा साक्ष्य का आकलन विधि की दृष्टि से तात्विक अनियमितताओं से ग्रस्त है अथवा अग्राह्य साक्ष्य पर आधारित है अथवा निराधार कल्पनाओं और अनुमानों पर आधारित है तो अपील न्यायालय तथ्य संबंधी निष्कर्ष में हस्तक्षेप करने का हकदार होगा । मधुसूदन दास **बनाम** श्रीमती नारायणी बाई और अन्य [1983] 2 उम. नि. प. 588 = ए. आई. आर. 1983 एस. सी. 214 वाला मामला देखें । नियम यह है और यह व्यवहार नियम से अधिक कुछ नहीं है कि जब किसी मामले में किसी विवाद्यक पर पक्षकारों द्वारा दिए गए मौखिक साक्ष्य में विरोधाभास है और इसका विनिश्चय साक्षियों की विश्वसनीयता पर निर्भर है तो जब तक विशिष्ट साक्षी के साक्ष्य की कोई ऐसी विशेषता न हो, जिस पर विचारण न्यायाधीश का ध्यान न गया हो अथवा वह कैसे विश्वसनीय होगा इस संबंध में, उसका मत निरस्त करने का पर्याप्त असंभाव्यता है तब तक अपील न्यायालय तथ्य के प्रश्न पर विचारण न्यायाधीश के निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं करेगा । सरजू प्रसाद रामदेव साहू **बनाम** ज्वलेश्वरी प्रताप नारायण सिंह और अन्य (ए. आई. आर. 1951 एस. सी. 120) वाला मामला देखें । द्वितीयतः, तथ्य के निष्कर्ष को उलटते समय अपील न्यायालय को विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए तर्कों पर ध्यान देना होगा और तत्पश्चात् भिन्न निष्कर्ष के संबंध में अपने तर्क देने होंगे । इससे न्यायालय अगली अपील की सुनवाई करने वाले न्यायालय का समाधान हो जाएगा कि प्रथम अपील न्यायालय ने अपने उन कर्तव्यों का निर्वहन किया था जिसकी उससे प्रत्याशा की गई थी । हमें, केवल प्रथम अपील न्यायालयों को संहिता में प्रतिस्थापित वर्तमान धारा 100 की स्कीम द्वारा उन पर डाली गई अतिरिक्त बाध्यताओं को स्मरण करवाने की आवश्यकता है । प्रथम अपील न्यायालय पहले की भांति तथ्य संबंधी अंतिम न्यायालय होगा; तथ्य के विशुद्ध निष्कर्ष को द्वितीय अपील में उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती नहीं दी जा सकती है । अब प्रथम अपील न्यायालय इस अर्थ में भी अंतिम न्यायालय है कि विधि के प्रश्न पर, इसका विनिश्चय भले ही यदि गलत हो तो भी द्वितीय अपील में उच्च न्यायालय के समक्ष आलोच्य नहीं हो सकता है क्योंकि उच्च न्यायालय की अधिकारिता विधि के प्रश्नों पर भी प्रथम अपील न्यायालय के दोषपूर्ण निष्कर्षों या विधि की गलतियों को

सुधारने के संबंध में अब समाप्त हो गई है जब तक ऐसा विधि का प्रश्न सारवान् न हो ।"

15. चूंकि, विद्वान् निचले अपील न्यायालय ने अधिकारिता के प्रश्न पर कोई उल्लेख नहीं किया है, इसलिए, इसके निष्कर्ष दोषपूर्ण हैं और कायम नहीं रखे जा सकते हैं ।

16. तद्नुसार, विधि के सारवान् प्रश्नों का उत्तर अपीलार्थियों के पक्ष में दिया जाता है ।

17. परिणामतः, अपील सफल होती है और विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री अपास्त की जाती है और मामले को सभी प्रश्नों, जिसमें अधिकारिता के प्रश्न सम्मिलित हैं, पर नए सिरे से विनिश्चय करने के लिए उक्त न्यायालय के पास वापस भेजा जाता है । चूंकि, वाद वर्ष 1996 में संस्थित किया गया था, इसलिए, विद्वान् निचला अपील न्यायालय यथासंभव शीघ्रता से इसका विनिश्चय करने का प्रयास करेगा और अधिक से अधिक तारीख 31 दिसम्बर, 2015 तक इसका विनिश्चय करेगा । पक्षकारों को अपने विद्वान् काउंसेल के माध्यम से, तारीख 5 अगस्त 2015 को विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने का निर्देश दिया जाता है । अभिलेखों को तुरन्त वापस किया जाए ताकि यह नियत तारीख के पूर्व संबंधित न्यायालय को मिल सकें । खर्चे का कोई आदेश नहीं दिया जाता है ।

अपील मंजूर की गई ।

क.

कुन्दन सिंह और अन्य

बनाम

धेरु और अन्य

तारीख 3 अगस्त, 2015

न्यायमूर्ति सुरेश्वर ठाकुर

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 100 और आदेश 39 – द्वितीय अपील – वाद भूमि पर कब्जे सहित हक साबित होना – वाद भूमि में हस्तक्षेप करने से अवरुद्ध करने के लिए व्यादेश की डिक्री पारित होना – डिक्री की विधिमान्यता को चुनौती देना – यदि अभिलेखों पर के मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्यों द्वारा वाद भूमि पर कब्जे सहित हक साबित कर दिया जाता है तो विरोधी पक्षकार को उस भूमि में हस्तक्षेप करने से अवरुद्ध करते हुए पारित स्थायी व्यादेश की डिक्री विधिमान्य और युक्तिसंगत होगी और ऐसी डिक्री की विधिमान्यता के बारे में चुनौती अमान्य होगी ।

वर्तमान मामले में, अपीलार्थी धेरु ने वाद भूमि में हस्तक्षेप करने से प्रतिवादियों को अवरुद्ध करते हुए, स्थायी व्यादेश के लिए एक वाद फाइल किया था । वाद पत्र में यह प्रकथन किया गया था कि वाद भूमि, वादी द्वारा कब्जा और धारित है । वाद भूमि, वर्ष 1976 में हिमाचल प्रदेश राज्य द्वारा आबंटित किया गया था और इसके पश्चात् वादी ने भूमि पर सुधार किया और उस पर सुधार करते हुए, एक बड़ी रकम खर्च किया । अब, प्रतिवादी वाद भूमि में हस्तक्षेप करते हुए, धमकी देना प्रारंभ कर दिया है, अतएव, वर्तमान वाद फाइल किया गया । प्रतिवादियों/अपीलार्थियों ने वाद का विरोध किया और लिखित कथन फाइल किया । प्रतिवादियों ने अपने लिखित कथन में प्रारम्भिक आक्षेप करते हुए, वाद को वैधतः कायम रखने के बारे में किया । यह अभिकथित किया गया कि वाद भूमि, पुराना खसरा सं. 971, माप 6 कनाल 17 मरला को वर्ष 1976 में वादी को आबंटित किया गया था किन्तु वादी ने कभी भी उस पर भौतिक कब्जा नहीं किया । वादी, स्वामी और कब्जाधारी होने के नाते खसरा सं. 980 और 982 के कब्जे में था । वादी ने राजस्व स्टाफ को यह बताया था कि उसे खसरा सं. 972 में समाविष्ट भूमि आबंटित हुई थी जो स्वयं उसकी भूमि से सटे हुए

हैं । उक्त खसरा संख्या, खसरा सं. 971 से भी सटे हुए हैं जो पिछले 30 वर्षों से मृतक फान्डी के भौतिक कब्जे में था और उसकी मृत्यु के पश्चात् वह प्रतिवादियों के कब्जे में है । खसरा सं. 972 में समाविष्ट भूमि, चिन्ट राम को आबंटित हुआ था किन्तु वह वादी के भौतिक कब्जे में था । तारीख 12 दिसम्बर, 1991 को सीमांकन किया गया तब पक्षकारों को गलत कब्जे के बारे में जानकारी हुई । इसके पश्चात्, वादी ने सुधार के लिए डी. सी. के समक्ष एक आवेदन फाइल किया, जिसके आधार पर जांच कराई गई थी । वादी ने फान्डी का कब्जा स्वीकार करते हुए, तारीख 23 नवम्बर, 1992 को एक कथन किया था । प्रतिवादियों ने वाद पत्र में किए गए अन्य प्रकथनों से इनकार किया । वादी/प्रत्यर्थी ने प्रतिवादियों द्वारा फाइल लिखित कथन का एक प्रत्युत्तर फाइल किया और वाद पत्र में लिए गए आधारों का पुनः प्रत्याख्यान किया । विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायालय ने वादी/प्रत्यर्थी द्वारा फाइल वाद को डिक्री कर दिया था । विद्वान् विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध, विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय के समक्ष प्रतिवादियों/अपीलार्थियों द्वारा फाइल अपील को विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय ने खारिज कर दिया और विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्षों की पुष्टि कर दी । अब, प्रतिवादियों/अपीलार्थियों ने विद्वान् निचले न्यायालय द्वारा अपने आक्षेपित निर्णयों और डिक्रियों में अभिलिखित निष्कर्षों को आक्षेपित करते हुए, इस न्यायालय के समक्ष वर्तमान नियमित द्वितीय अपील संस्थित की है । न्यायालय द्वारा यह द्वितीय अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – वादी का वाद जो वाद भूमि में हस्तक्षेप करने से प्रतिवादियों/ अपीलार्थियों को अवरुद्ध करते हुए, स्थायी व्यादेश के लिए था, उसे दोनों निचले न्यायालयों द्वारा डिक्री कर दिया गया था । वादी/प्रत्यर्थी के पक्ष में दिया गया व्यादेश की डिक्री मात्र तभी न्यायसंगत होता जब वाद भूमि के कब्जे में होने के लिए वादी/प्रत्यर्थी के अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य में इसका प्रकट वर्णन होता । वाद पत्र में यह प्रकथन किया गया है कि वाद संपत्ति, वर्ष 1976 में हिमाचल प्रदेश सरकार द्वारा वादी/प्रत्यर्थी के पक्ष में आबंटित किया गया था । अविवादित तौर पर, पुराना खसरा सं. 971 माप 6 कनाल, 17 मरला वाद भूमि मुसीबत बना । तथापि, इससे सटी भूमि जो खसरा सं. 980 और 982 में समाविष्ट थी, भी वादी/प्रत्यर्थी द्वारा धारित और कब्जे में थी । मुख्य दलील जो प्रतिवादियों द्वारा अपने लिखित

कथन में दी गई थी, वह खसरा सं. 971 के बारे में थी, जो वादी/प्रत्यर्थी के पक्ष में आबंटित हुई थी, मृतक प्रतिवादी सं. 2 फान्डी के भौतिक कब्जे में रही थी । पूर्वोक्त खसरा संख्या में, प्रतिकूल कब्जे द्वारा हक अर्जित करने वाले उसके प्रत्याख्यान का सुदृढ़ आधार, पिछले 30 वर्षों से निरन्तर उस पर भौतिक कब्जे में रहते हुए, कब्जे के आशय से परिलक्षित होता है । तथापि, मृतक फान्डी का प्रतिकूल कब्जे द्वारा वाद भूमि में हक अर्जित करने वाले प्रत्याख्यान को, तारीख 4 मार्च, 2002 को अभिलिखित कथन में वापस ले लिया गया था । प्रतिवादी फान्डी द्वारा प्रतिकूल कब्जे द्वारा वाद भूमि में हक अर्जित करने वाले अपने अभिवाक् के त्यजन का प्रभाव सहवर्ती रूप में वादी/प्रत्यर्थी द्वारा धारित पुराने खसरा सं. 971, खसरा सं. 973, जो प्रतिवादियों/अपीलार्थियों सं. 1 और 2 के हित-पूर्वाधिकारी द्वारा धारित था, के अलावा, के बारे में उद्घोषणाओं, प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए से विनिर्दिष्टतः यह निष्कर्ष जबकि डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए में यथाउद्घोषित पूर्वोक्त तथ्यों के बारे में संसूचनाएं, तर्कपूर्ण साक्ष्य द्वारा प्रस्तुत त्यजन से ग्रसित नहीं है अथवा उसमें उपर्युक्त प्रभाव की उद्घोषणाएं उस खसरा सं. 971 से हटाई नहीं गईं थीं, जो वादी/प्रत्यर्थी द्वारा धारित थीं, जबकि पुराना खसरा सं. 973 प्रतिवादियों/अपीलार्थियों द्वारा धारित थीं । वादी/प्रत्यर्थी द्वारा धारित खसरा सं. 971 के बारे में प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए में की निश्चित उद्घोषणाओं जबकि प्रतिवादी फान्डी द्वारा धारित खसरा सं. 973 के बारे में निश्चित उद्घोषणाओं से इस बारे में कोई संविवाद नहीं रह जाता है कि क्या वादी/प्रत्यर्थी मान्य तौर पर व्यादेश की डिक्री पाने का हकदार था । यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि व्यादेश की डिक्री के लिए पुराना खसरा सं. 971 के कब्जे में होने के लिए वादी/प्रत्यर्थी को अभिलेख पर मौजूदा साक्ष्यों द्वारा इंगित विधिक बल या प्रबल आवश्यकताओं और खुली उद्घोषणाओं द्वारा साबित करना था । दोनों विद्वान् निचले न्यायालयों ने यह निष्कर्ष निकाला था कि पुराना खसरा सं. 971, वादी/प्रत्यर्थी के कब्जे में था । दोनों निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए इन निष्कर्षों के आधार पर कि पुराना खसरा सं. 971 के कब्जे में होने के नाते वादी/प्रत्यर्थी के पक्ष में व्यादेश की डिक्री जारी करने के लिए कार्यवाही की थी । इस न्यायालय के समक्ष चुनौती के अधीन डिक्री की विधिसम्मतता सम्मिलित थी जिसे इस न्यायालय के पदधारी को अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर यह देखना था कि क्या दोनों निचले न्यायालयों द्वारा

वादी/प्रत्यर्थी के बारे में अभिलिखित इन निष्कर्षों के आधार पर कि पुराना खसरा सं. 971 उनके कब्जे में था, अतएव, वे अपराजय के पूर्वाभास या विधिक कठिनाइयों के बावजूद व्यादेश की डिक्री पाने के हकदार थे । सुसंगतता, ग्राह्यता और बेहतर साक्ष्य, जो आवश्यक हैं, वे समुचित मूल्यांकन के अतिरिक्त प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए गठित करते हैं । दोनों विद्वान् निचले न्यायालयों ने दोनों प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए की प्रमाणित क्षमता और विश्वास को विधिमान्य तौर पर अप्रमाणिक और कमजोर कारणों से त्यक्त किया था । दोनों निचले न्यायालयों द्वारा पूर्वोक्त प्रदर्शों का अमान्य नामंजूरी, इस विवादास्पद और सुसंगत तथ्य के त्रुटिपूर्ण निष्कर्षों की व्याख्या का परिणाम है कि वादी-प्रत्यर्थी को पुराना खसरा सं. 971 के कब्जे में अभिनिर्धारित किया गया था, इस प्रकार, वह व्यादेश की डिक्री पाने का हकदार था । इसमें इसके पश्चात् वर्णित कारणों से दोनों प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए क्रमशः अपने इस तथ्य की उद्घोषणा में विधिमान्य पवित्रता का बल रखते हैं कि खसरा सं. 971 का कब्जा, प्रतिवादियों/अपीलार्थियों संख्या 1 और 2 के हित-पूर्वाधिकारी द्वारा धारित था । मुख्य कारण जो इस न्यायालय द्वारा ऐसा निष्कर्ष निकालने के लिए प्रेरित किया वह यह है कि दोनों प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए पुराना खसरा सं. 971 के कब्जे के तथ्य की ओर बलपूर्वक संकेत करते हैं, प्रतिवादियों/अपीलार्थियों सं 1 और 2 के हित-पूर्वाधिकारी होने के नाते वादी/प्रत्यर्थी द्वारा, जिसके बारे में व्यादेश की डिक्री ईप्सित की गई है । दोनों प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए को क्रमशः प्रतिवादी साक्षी 7 और प्रतिवादी साक्षी 5 द्वारा साबित किया गया है । अभि. सा. 5 के अभिलिखित परिसाक्ष्य के परिशीलन से यह तथ्य रेखांकित होता है कि वह लड़ने वाले पक्षकारों की भूमि की माप करने के लिए घटनास्थल पर गया था । प्रतिवादी साक्षी 7, जिसने प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए को साबित किया है, के अभिसाक्ष्य के परिशीलन से भी यह तथ्य नहीं सुलझता है कि पूर्वोक्त प्रतिवादी सं. 1 और 2 के हित-पूर्वाधिकारी द्वारा धारित होने के नाते पुराना खसरा सं. 971 के कब्जे का उसमें वर्णन के साथ पूर्वोक्त प्रदर्शों को अपेक्षित मापों/सीमांकनों को किए बिना तैयार किया गया है । परिणामतः, जब दोनों समवर्ती प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए के तैयार करने के बारे में सामंजस्य में अभिसाक्ष्य के अतिरिक्त मापों/सीमांकनों को करने की कार्यवाही की गई तो यह सुसंगत निष्कर्ष, जो इस न्यायालय द्वारा सांपार्श्विक रूप से निष्कर्ष निकाला जा सकता है

वह यह है कि पुराने खसरा सं. 971 के कब्जे के बारे में क्रमशः प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए में अभिलिखित वर्णन प्रतिवादियों/अपीलार्थियों के अलावा वादी/प्रत्यर्थी द्वारा धारित नहीं होने के नाते अत्यधिक विधिमान्य बल अपेक्षित है । पूर्वोक्त निष्कर्ष के बल को बढ़ावा देने के लिए वादी के विद्वान् काउंसेल को उनकी प्रतिपरीक्षा करते समय यह तथ्य एकत्रित करने चाहिए थे कि उसके विरुद्ध सुझावों का विरोध हो सके इस बाबत कि उपयुक्त निष्कर्ष निकालने के लिए इस तथ्य की ओर संकेत करते हैं कि लड़ने वाले पक्षकारों की भूमियों का मापन/सीमांकन, जो क्रमशः प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए उनकी प्रेरणा पर तैयार करने का परिणाम था, हिमाचल प्रदेश भूमि अभिलेख मैनुअल में समाविष्ट उपबंधों के अनुसार नहीं किए गए थे । वादी के विद्वान् काउंसेल की ओर से लोप या अभाव, इस तथ्य के बारे में उनसे यह निष्कर्ष निकालने की ईप्सा करने के लिए दोनों प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए के समुचित सुझाव रखने थे कि लड़ने वाले पक्षकारों की भूमियों का मापन/सीमांकन, हिमाचल प्रदेश भूमि अभिलेख मैनुअल में समाविष्ट समादेश के अनुसरण में नहीं किए गए थे । यह निष्कर्ष निकालने में कि वादी/प्रत्यर्थी की प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए को तैयार करने के तथ्य की मौन स्वीकृति से ही लड़ने वाले पक्षकारों की भूमियों का विधिमान्य सीमांकन/मापन की कार्यवाही की गई । अतएव, वादी/प्रत्यर्थी की दोनों प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए को तैयार करने की मौन स्वीकृति का प्रभाव लड़ने वाले पक्षकारों की भूमियों का विधिमान्य सीमांकन/मापन के आशय को समाविष्ट करते हैं, सुस्पष्टतः, यह कि दोनों प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए के बारे में अभिलिखित निष्कर्षों को आरोपित करना निष्कर्ष रूप से उसकी अंतिमता और एकांतता को चुनौती देना है । इसके अतिरिक्त, वादी/प्रत्यर्थी की प्रतिपरीक्षा में परिसाक्ष्य, जिसके अधीन उसने इस तथ्य को स्वीकार किया है कि उसे बंदोबस्त कार्यवाहियों के दौरान वाद भूमि के कब्जे के तथ्य के बारे में जानकारी थी, इसके अतिरिक्त, उसमें यह संसूचना दी थी कि उसने वाद भूमि के बारे में कब्जे की प्रविष्टियों में सुधार करने के लिए उपायुक्त के समक्ष एक आवेदन फाइल किया था, साथ ही अपनी प्रतिपरीक्षा में उसने इस तथ्य का भी कथन किया है कि वह पूर्व में इस तथ्य से अनभिज्ञ था कि वह स्वयं को आबंटित भूमि का कब्जा धारित नहीं करता था जिसकी उसे उसकी भूमि के मापन/सीमांकन करने के प्रक्रम पर ही जानकारी हुई साथ ही प्रतिवादियों/अपीलार्थियों की भूमि के बारे में

वादी/प्रत्यर्थी की स्वीकृतियां गठित करते हुए कि वे पुराना खसरा सं. 971 का कब्जा धारित नहीं करते हैं, वादी/प्रत्यर्थी की प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए में उद्घोषणाओं की पवित्रता पर विस्तृत आरोप लगाया है कि वे पुराना खसरा सं. 971 का कब्जा धारित नहीं करते थे । दोनों विद्वान् निचले न्यायालयों ने साक्ष्य के पूर्वोक्त तथ्यों की संभाव्य बल को आरोपित नहीं करते हुए, पथ से विचलित होने के साथ ही निरंकुश तरीका अपनाया । यद्यपि, इसमें उपर्युक्त वर्णित कारणों से पूर्वोक्त दोनों साक्ष्य क्रमबद्ध, विधिक प्रबलता के साथ ही दृढ़ हैं और तुच्छ कारणों से दोनों निचले न्यायालयों ने उनकी अनदेखी करते हुए, साक्ष्य के तात्विक भाग को त्यक्त करने के साथ ही अभिलेख पर के साक्ष्यों का गलत मूल्यांकन किया, अतएव, भ्रामक निष्कर्ष निकाले गए । दोनों निचले न्यायालयों द्वारा साक्ष्य के गलत मूल्यांकन के कारण ही उनके द्वारा यह भ्रामक निष्कर्ष निकाला गया कि वादी/प्रत्यर्थी पुराना खसरा सं. 971 के कब्जे में होने के नाते समवर्ती रूप से दोनों निचले न्यायालयों ने यह त्रुटिपूर्ण निष्कर्ष निकाला कि वादी, पुराना खसरा सं. 971 के बारे में यथाप्रार्थित व्यादेश की डिक्री पाने का हकदार था । पुराना खसरा सं. 971 के दोनों दस्तावेज प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए में वर्णित उपर्युक्त के अलावा यह उल्लिखित है कि वादी/प्रत्यर्थी के पक्ष में आबंटन हुआ था, इसके अतिरिक्त, प्रतिवादी सं. 1 और 2 के हित-पूर्वाधिकारी द्वारा त्यजन का तथ्य दिया गया है जिसमें प्रतिकूल कब्जे द्वारा वाद भूमि के बारे में हक अर्जित करने की बात कही गई है अतएव, वादी/प्रत्यर्थी की स्वीकृति को आदर्श मानते हुए, पुराना खसरा सं. 971 में हक विद्यमान तौर पर कायम रखे जाने योग्य है, जो इस न्यायालय को इस बात के लिए प्रेरित करता है कि पुराना खसरा सं. 971 के कब्जे के लिए ईप्सित डिक्री को वैकल्पिक तौर पर उसके पक्ष में पुराना खसरा सं. 971 के कब्जे के लिए डिक्री पारित करें । (पैरा 8 और 9)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2003 की नियमित द्वितीय अपील सं. 474.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन द्वितीय अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से सर्वश्री भूपेन्दर गुप्ता, ज्येष्ठ अधिवक्ता के साथ नीरज गुप्ता, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी सं. 1 की ओर से सर्वश्री एन. के. ठाकुर, ज्येष्ठ अधिवक्ता के साथ राहुल, अधिवक्ता

न्यायमूर्ति सुरेश्वर ठाकुर – वर्तमान अपील, विद्वान् जिला न्यायाधीश, ऊना द्वारा 2002 की सिविल अपील सं. 81 में पारित तारीख 7 अक्तूबर, 2003 के आक्षेपित निर्णय और डिक्री के विरुद्ध निर्देशित है जिसके द्वारा उन्होंने विद्वान् ज्येष्ठ उप-न्यायाधीश, ऊना द्वारा 1992 की सिविल वाद सं. 2010 में पारित तारीख 24 अगस्त, 2002 के निर्णय और डिक्री की पुष्टि करते हुए, प्रतिवादियों/अपीलार्थियों द्वारा उनके समक्ष प्रस्तुत अपील को खारिज कर दिया था ।

2. मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि अपीलार्थी धेरु ने वाद भूमि में हस्तक्षेप करने से प्रतिवादियों को अवरुद्ध करते हुए, स्थायी व्यादेश के लिए एक वाद फाइल किया था । वाद पत्र में यह प्रकथन किया गया था कि वाद भूमि, वादी द्वारा कब्जा और धारित है । वाद भूमि, वर्ष 1976 में हिमाचल प्रदेश राज्य द्वारा आबंटित किया गया था और इसके पश्चात् वादी ने भूमि पर सुधार किया और उस पर सुधार करते हुए, एक बड़ी रकम खर्च किया । अब, प्रतिवादी वाद भूमि में हस्तक्षेप करते हुए, धमकी देना प्रारंभ कर दिया है, अतएव, वर्तमान वाद फाइल किया गया ।

3. प्रतिवादियों/अपीलार्थियों ने वाद का विरोध किया और लिखित कथन फाइल किया । प्रतिवादियों ने अपने लिखित कथन में प्रारम्भिक आक्षेप करते हुए, वाद को वैधतः कायम रखने के बारे में किया । यह अभिकथित किया गया कि वाद भूमि, पुराना खसरा सं. 971, माप 6 कनाल 17 मरला को वर्ष 1976 में वादी को आबंटित किया गया था किन्तु वादी ने कभी भी उस पर भौतिक कब्जा नहीं किया । वादी, स्वामी और कब्जाधारी होने के नाते खसरा सं. 980 और 982 के कब्जे में था । वादी ने राजस्व स्टाफ को यह बताया था कि उसे खसरा सं. 972 में समाविष्ट भूमि आबंटित हुई थी जो स्वयं उसकी भूमि से सटे हुए हैं । उक्त खसरा संख्या, खसरा सं. 971 से भी सटे हुए हैं जो पिछले 30 वर्षों से मृतक फान्डी के भौतिक कब्जे में था और उसकी मृत्यु के पश्चात् वह प्रतिवादियों के कब्जे में है । खसरा सं. 972 में समाविष्ट भूमि, चिन्ट राम को आबंटित हुआ था किन्तु वह वादी के भौतिक कब्जे में था । तारीख 12 दिसम्बर, 1991 को सीमांकन किया गया तब पक्षकारों को गलत कब्जे के बारे में जानकारी हुई । इसके पश्चात्, वादी ने सुधार के लिए डी. सी. के समक्ष

एक आवेदन फाइल किया, जिसके आधार पर जांच कराई गई थी । वादी ने फान्डी का कब्जा स्वीकार करते हुए, तारीख 23 नवम्बर, 1992 को एक कथन किया था । प्रतिवादियों ने वाद पत्र में किए गए अन्य प्रकथनों से इनकार किया ।

4. वादी/प्रत्यर्थी ने प्रतिवादियों द्वारा फाइल लिखित कथन का एक प्रत्युत्तर फाइल किया और वादपत्र में लिए गए आधारों का पुनः प्रत्याख्यान किया ।

5. पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर, विद्वान् विचारण न्यायालय ने पक्षकारों के बीच विवादित निम्नलिखित विवाद्यकों को विरचित किया :–

"(1) क्या वादी व्यादेश का अनुतोष पाने का हकदार है, जैसी कि प्रार्थना की गई है ?

(2) क्या वाद, वर्तमान प्ररूप में कायम रखे जाने योग्य नहीं है ?

(3) क्या प्रतिवादी, प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से वाद भूमि के स्वामी हो गए हैं ?

(4) अनुतोष ।"

6. विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायालय ने वादी/प्रत्यर्थी द्वारा फाइल वाद को डिक्री कर दिया था । विद्वान् विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध, विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय के समक्ष प्रतिवादियों/अपीलार्थियों द्वारा फाइल अपील को विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय ने खारिज कर दिया और विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्षों की पुष्टि कर दी ।

7. अब, प्रतिवादियों/अपीलार्थियों ने विद्वान् निचले न्यायालय द्वारा अपने आक्षेपित निर्णयों और डिक्रियों में अभिलिखित निष्कर्षों को आक्षेपित करते हुए, इस न्यायालय के समक्ष वर्तमान नियमित द्वितीय अपील संस्थित की है । जब तारीख 11 अक्तूबर, 2004 को अपील स्वीकृति के लिए आया तब इस न्यायालय ने इसमें इसके पश्चात् उद्धृत विधि के सारवान् प्रश्नों के आधार पर प्रतिवादियों/अपीलार्थियों द्वारा संस्थित अपील को स्वीकार कर लिया :–

"(1) क्या दोनों निचले न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित करने में विधि का त्रुटिपूर्ण मत अपनाया कि वादी/प्रत्यर्थी का वाद, मात्र

राजस्व प्रविष्टियों का अवलंब लेते हुए और तात्विक दस्तावेजों अर्थात् प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए, डी. डब्ल्यू.-5/सी, डी. डब्ल्यू.-6/ए जो वाद संस्थित होने के पूर्व वाद भूमि पर प्रतिवादियों-अपीलार्थियों के कब्जे को साबित करते हैं, की अवहेलना करते हुए, कायम रखे जाने योग्य हैं ? क्या दोनों निचले न्यायालयों ने वादी-प्रत्यर्थी, जिन्होंने वाद भूमि के कब्जे में होने को साबित नहीं किया था, के पक्ष में व्यादेश की डिक्री मंजूर करने में अपनी अधिकारिता के बाहर कार्य नहीं किया है ?

(2) क्या विचारण न्यायालय ने तात्विक साक्ष्य अर्थात् प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, श्री प्रीतम चन्द की रिपोर्ट को मात्र इस आधार पर अवहेलना की है कि उसकी प्रतिवादियों/अपीलार्थियों द्वारा परीक्षा नहीं की गई थी, जबकि उक्त साक्षियों के कथन डी. डब्ल्यू.-7 के रूप में अभिलिखित हुए थे, विचारण न्यायालय का निष्कर्ष, ऐसे तात्विक साक्ष्य, जिस पर यदि विचार किया गया होता तो हक का फैसला हो गया होता, की अवहेलना द्वारा प्रतिकूल रूप से प्रभावित नहीं है ?

(3) क्या दोनों निचले न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित करने में विधि का गलत मत अपनाया कि वादी/प्रत्यर्थी, वाद में दावाकृत अनुतोष पाने के हकदार हैं जबकि वादी-प्रत्यर्थी वाद लम्बित रहने के दौरान अपने कब्जे का अभिवाक् करने और साबित करने में या अन्यथा असफल रहे हैं ?"

विधि के सारवान् प्रश्न सं. 1, 2 और 3

8. वादी का वाद जो वाद भूमि में हस्तक्षेप करने से प्रतिवादियों/अपीलार्थियों को अवरुद्ध करते हुए, स्थायी व्यादेश के लिए था, उसे दोनों निचले न्यायालयों द्वारा डिक्री कर दिया गया था । वादी/प्रत्यर्थी के पक्ष में दिया गया व्यादेश की डिक्री मात्र तभी न्यायसंगत होता जब वाद भूमि के कब्जे में होने के लिए वादी/प्रत्यर्थी के अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य में इसका प्रकट वर्णन होता । वाद पत्र में यह प्रकथन किया गया है कि वाद संपत्ति, वर्ष 1976 में हिमाचल प्रदेश सरकार द्वारा वादी/प्रत्यर्थी के पक्ष में आबंटित किया गया था । अविवादित तौर पर, पुराना खसरा सं. 971 माप 6 कनाल, 17 मरला वाद भूमि मुसीबत बना । तथापि, इससे सटी भूमि जो खसरा सं. 980 और 982 में समाविष्ट थी, भी वादी/प्रत्यर्थी द्वारा धारित और कब्जे में थी । मुख्य दलील जो प्रतिवादियों द्वारा अपने लिखित कथन में दी गई थी, वह खसरा सं. 971 के बारे में थी, जो वादी/प्रत्यर्थी के पक्ष

में आबंटित हुई थी, मृतक प्रतिवादी सं. 2 फान्डी के भौतिक कब्जे में रही थी । पूर्वोक्त खसरा संख्या में, प्रतिकूल कब्जे द्वारा हक अर्जित करने वाले उसके प्रत्याख्यान का सुदृढ़ आधार, पिछले 30 वर्षों से निरन्तर उस पर भौतिक कब्जे में रहते हुए, कब्जे के आशय से परिलक्षित होता है । तथापि, मृतक फान्डी का प्रतिकूल कब्जे द्वारा वाद भूमि में हक अर्जित करने वाले प्रत्याख्यान को, तारीख 4 मार्च, 2002 को अभिलिखित कथन में वापस ले लिया गया था । प्रतिवादी फान्डी द्वारा प्रतिकूल कब्जे द्वारा वाद भूमि में हक अर्जित करने वाले अपने अभिवाक् के त्यजन का प्रभाव सहवर्ती रूप में वादी/प्रत्यर्थी द्वारा धारित पुराने खसरा सं. 971, खसरा सं. 973, जो प्रतिवादियों/अपीलार्थियों सं. 1 और 2 के हित-पूर्वाधिकारी द्वारा धारित था, के अलावा, के बारे में उद्घोषणाओं, प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए से विनिर्दिष्टतः यह निष्कर्ष जबकि डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए में यथाउद्घोषित पूर्वोक्त तथ्यों के बारे में संसूचनाएं, तर्कपूर्ण साक्ष्य द्वारा प्रस्तुत त्यजन से ग्रसित नहीं है अथवा उसमें उपर्युक्त प्रभाव की उद्घोषणाएं उस खसरा सं. 971 से हटाई नहीं गईं थीं, जो वादी/प्रत्यर्थी द्वारा धारित थीं, जबकि पुराना खसरा सं. 973 प्रतिवादियों/अपीलार्थियों द्वारा धारित थीं । वादी/प्रत्यर्थी द्वारा धारित खसरा सं. 971 के बारे में प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए में की निश्चित उद्घोषणाओं जबकि प्रतिवादी फान्डी द्वारा धारित खसरा सं. 973 के बारे निश्चित उद्घोषणाओं से इस बारे में कोई संविवाद नहीं रह जाता है कि क्या वादी/प्रत्यर्थी मान्य तौर पर व्यादेश की डिक्री पाने का हकदार था । यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि व्यादेश की डिक्री के लिए पुराना खसरा सं. 971 के कब्जे में होने के लिए वादी/प्रत्यर्थी को अभिलेख पर मौजूदा साक्ष्यों द्वारा इंगित विधिक बल या प्रबल आवश्यकताओं और खुली उद्घोषणाओं द्वारा साबित करना था । दोनों विद्वान् निचले न्यायालयों ने यह निष्कर्ष निकाला था कि पुराना खसरा सं. 971, वादी/प्रत्यर्थी के कब्जे में था । दोनों निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए इन निष्कर्षों के आधार पर कि पुराना खसरा सं. 971 के कब्जे में होने के नाते वादी/प्रत्यर्थी के पक्ष में व्यादेश की डिक्री जारी करने के लिए कार्यवाही की थी । इस न्यायालय के समक्ष चुनौती के अधीन डिक्री की विधिसम्मतता सम्मिलित थी जिसे इस न्यायालय के पदधारी को अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर यह देखना था कि क्या दोनों निचले न्यायालयों द्वारा वादी/प्रत्यर्थी के बारे में अभिलिखित इन निष्कर्षों के आधार पर कि पुराना खसरा सं. 971 उनके कब्जे में था, अतएव, वे अपराज्य के पूर्वाभास या विधिक कठिनाइयों के बावजूद व्यादेश की डिक्री

पाने के हकदार थे । सुसंगतता, ग्राह्यता और बेहतर साक्ष्य, जो आवश्यक हैं, वे समुचित मूल्यांकन के अतिरिक्त प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए गठित करते हैं । दोनों विद्वान् निचले न्यायालयों ने दोनों प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए की प्रमाणित क्षमता और विश्वास को विधिमान्य तौर पर अप्रमाणिक और कमजोर कारणों से त्यक्त किया था । दोनों निचले न्यायालयों द्वारा पूर्वोक्त प्रदर्शों का अमान्य नामंजूरी, इस विवादास्पद और सुसंगत तथ्य के त्रुटिपूर्ण निष्कर्षों की व्याख्या का परिणाम है कि वादी-प्रत्यर्थी को पुराना खसरा सं. 971 के कब्जे में अभिनिर्धारित किया गया था, इस प्रकार, वह व्यादेश की डिक्री पाने का हकदार था । इसमें इसके पश्चात् वर्णित कारणों से दोनों प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए क्रमशः अपने इस तथ्य की उद्घोषणा में विधिमान्य पवित्रता का बल रखते हैं कि खसरा सं. 971 का कब्जा, प्रतिवादियों/अपीलार्थियों संख्या 1 और 2 के हित-पूर्वाधिकारी द्वारा धारित था । मुख्य कारण जो इस न्यायालय द्वारा ऐसा निष्कर्ष निकालने के लिए प्रेरित किया वह यह है कि दोनों प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए पुराना खसरा सं. 971 के कब्जे के तथ्य की ओर बलपूर्वक संकेत करते हैं, प्रतिवादियों/अपीलार्थियों सं 1 और 2 के हित-पूर्वाधिकारी होने के नाते वादी/प्रत्यर्थी द्वारा, जिसके बारे में व्यादेश की डिक्री ईप्सित की गई है । दोनों प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए को क्रमशः प्रतिवादी साक्षी 7 और प्रतिवादी साक्षी 5 द्वारा साबित किया गया है । अभि. सा. 5 के अभिलिखित परिसाक्ष्य के परिशीलन से यह तथ्य रेखांकित होता है कि वह लड़ने वाले पक्षकारों की भूमि की माप करने के लिए घटनास्थल पर गया था । प्रतिवादी साक्षी 7, जिसने प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए को साबित किया है, के अभिसाक्ष्य के परिशीलन से भी यह तथ्य नहीं सुलझता है कि पूर्वोक्त प्रतिवादी सं. 1 और 2 के हित-पूर्वाधिकारी द्वारा धारित होने के नाते पुराना खसरा सं. 971 के कब्जे का उसमें वर्णन के साथ पूर्वोक्त प्रदर्शों को अपेक्षित मापों/सीमांकनों को किए बिना तैयार किया गया है । परिणामतः, जब दोनों समवर्ती प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए के तैयार करने के बारे में सामंजस्य में अभिसाक्ष्य के अतिरिक्त मापों/सीमांकनों को करने की कार्यवाही की गई तो यह सुसंगत निष्कर्ष, जो इस न्यायालय द्वारा सांपार्श्विक रूप से निष्कर्ष निकाला जा सकता है वह यह है कि पुराने खसरा सं. 971 के कब्जे के बारे में क्रमशः प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए में अभिलिखित वर्णन प्रतिवादियों/अपीलार्थियों के अलावा वादी/प्रत्यर्थी द्वारा धारित नहीं होने के नाते अत्यधिक विधिमान्य बल अपेक्षित है । पूर्वोक्त निष्कर्ष के बल को

बढ़ावा देने के लिए वादी के विद्वान् काउंसेल को उनकी प्रतिपरीक्षा करते समय यह तथ्य एकत्रित करने चाहिए थे कि उसके विरुद्ध सुझावों का विरोध हो सके इस बाबत कि उपयुक्त निष्कर्ष निकालने के लिए इस तथ्य की ओर संकेत करते हैं कि लड़ने वाले पक्षकारों की भूमियों का मापन/सीमांकन, जो क्रमशः प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए उनकी प्रेरणा पर तैयार करने का परिणाम था, हिमाचल प्रदेश भूमि अभिलेख मैनुअल में समाविष्ट उपबंधों के अनुसार नहीं किए गए थे । वादी के विद्वान् काउंसेल की ओर से लोप या अभाव, इस तथ्य के बारे में उनसे यह निष्कर्ष निकालने की ईप्सा करने के लिए दोनों प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए के समुचित सुझाव रखने थे कि लड़ने वाले पक्षकारों की भूमियों का मापन/सीमांकन, हिमाचल प्रदेश भूमि अभिलेख मैनुअल में समाविष्ट समादेश के अनुसरण में नहीं किए गए थे । यह निष्कर्ष निकालने में कि वादी/प्रत्यर्थी की प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए को तैयार करने के तथ्य की मौन स्वीकृति से ही लड़ने वाले पक्षकारों की भूमियों का विधिमान्य सीमांकन/मापन की कार्यवाही की गई । अतएव, वादी/प्रत्यर्थी की दोनों प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए को तैयार करने की मौन स्वीकृति का प्रभाव लड़ने वाले पक्षकारों की भूमियों का विधिमान्य सीमांकन/मापन के आशय को समाविष्ट करते हैं, सुस्पष्टतः, यह कि दोनों प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए के बारे में अभिलिखित निष्कर्षों को आरोपित करना निष्कर्ष रूप से उसकी अंतिमता और एकांतता को चुनौती देना है ।

9. इसके अतिरिक्त, वादी/प्रत्यर्थी की प्रतिपरीक्षा में परिसाक्ष्य, जिसके अधीन उसने इस तथ्य को स्वीकार किया है कि उसे बंदोबस्त कार्यवाहियों के दौरान वाद भूमि के कब्जे के तथ्य के बारे में जानकारी थी, इसके अतिरिक्त, उसमें यह संसूचना दी थी कि उसने वाद भूमि के बारे में कब्जे की प्रविष्टियों में सुधार करने के लिए उपायुक्त के समक्ष एक आवेदन फाइल किया था, साथ ही अपनी प्रतिपरीक्षा में उसने इस तथ्य का भी कथन किया है कि वह पूर्व में इस तथ्य से अनभिज्ञ था कि वह स्वयं को आबंटित भूमि का कब्जा धारित नहीं करता था जिसकी उसे उसकी भूमि के मापन/सीमांकन करने के प्रक्रम पर ही जानकारी हुई साथ ही प्रतिवादियों/अपीलार्थियों की भूमि के बारे में वादी/प्रत्यर्थी की स्वीकृतियां गठित करते हुए कि वे पुराना खसरा सं. 971 का कब्जा धारित नहीं करते हैं, वादी/प्रत्यर्थी की प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए में उद्घोषणाओं की पवित्रता पर विस्तृत आरोप लगाया है कि वे पुराना खसरा सं. 971 का कब्जा धारित नहीं करते थे । दोनों विद्वान् निचले न्यायालयों ने साक्ष्य के

पूर्वोक्त तथ्यों की संभाव्य बल को आरोपित नहीं करते हुए, पथ से विचलित होने के साथ ही निरंकुश तरीका अपनाया । यद्यपि, इसमें उपर्युक्त वर्णित कारणों से पूर्वोक्त दोनों साक्ष्य क्रमबद्ध, विधिक प्रबलता के साथ ही दृढ़ हैं और तुच्छ कारणों से दोनों निचले न्यायालयों ने उनकी अनदेखी करते हुए, साक्ष्य के तात्विक भाग को त्यक्त करने के साथ ही अभिलेख पर के साक्ष्यों का गलत मूल्यांकन किया, अतएव, भ्रामक निष्कर्ष निकाले गए । दोनों निचले न्यायालयों द्वारा साक्ष्य के गलत मूल्यांकन के कारण ही उनके द्वारा यह भ्रामक निष्कर्ष निकाला गया कि वादी/प्रत्यर्थी पुराना खसरा सं. 971 के कब्जे में होने के नाते समवर्ती रूप से दोनों निचले न्यायालयों ने यह त्रुटिपूर्ण निष्कर्ष निकाला कि वादी, पुराना खसरा सं. 971 के बारे में यथाप्रार्थित व्यादेश की डिक्री पाने का हकदार था । पुराना खसरा सं. 971 के दोनों दस्तावेज प्रदर्श डी. डब्ल्यू.-4/ए, डी. डब्ल्यू.-5/ए में वर्णित उपर्युक्त के अलावा यह उल्लिखित है कि वादी/प्रत्यर्थी के पक्ष में आबंटन हुआ था, इसके अतिरिक्त, प्रतिवादी सं. 1 और 2 के हित-पूर्वाधिकारी द्वारा त्यजन का तथ्य दिया गया है जिसमें प्रतिकूल कब्जे द्वारा वाद भूमि के बारे में हक अर्जित करने की बात कही गई है अतएव, वादी/प्रत्यर्थी की स्वीकृति को आदर्श मानते हुए, पुराना खसरा सं. 971 में हक विद्यमान तौर पर कायम रखे जाने योग्य है, जो इस न्यायालय को इस बात के लिए प्रेरित करता है कि पुराना खसरा सं. 971 के कब्जे के लिए ईप्सित डिक्री को वैकल्पिक तौर पर उसके पक्ष में पुराना खसरा सं. 971 के कब्जे के लिए डिक्री पारित करें ।

10. उपर्युक्त चर्चा का सार यह है कि विवाद्यक सं. 1 पर दोनों निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष उलटे जाते हैं । परिणामतः, अपील मंजूर की जाती है और आक्षेपित निर्णय और डिक्री अपास्त किए जाते हैं । इसमें उपर्युक्त कथित कारणों से वादी/प्रत्यर्थी कभी भी पुराना खसरा सं. 971 के कब्जे के लिए अपने हक के आधार पर डिक्री पाने के हकदार थे, तथापि, वादी/प्रत्यर्थी, वाद भूमि के बाजार मूल्य/भूमि राजस्व के बराबर न्यायालय शुल्क का संदाय करते हुए, वादपत्र में एक माह के भीतर इसका उल्लेख करें । तद्नुसार, विधि के सारवान् प्रश्नों के उत्तर दिए जाते हैं । अभिलेखों को वापस भेजा जाए ।

द्वितीय अपील मंजूर की गई ।

क.

इफको टोकियो जनरल इंश्योरेंस कंपनी

बनाम

अजय ठाकुर और अन्य

तारीख 7 अगस्त, 2015

मुख्य न्यायमूर्ति मंसूर अहमद मीर

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 173 – प्रतिकर – दावेदारों द्वारा बीमाकर्ता/अपीलार्थी-इफको टोकिया जनरल इंश्योरेंस कंपनी से प्रतिकर की ईप्सा किया जाना – यदि बीमाकर्ता/अपीलार्थी कंपनी ने यह साबित नहीं किया है कि दुर्घटना के समय पर यान बीमाकृत नहीं था और ड्राइवर का ड्राइविंग लाइसेंस विधिमान्य नहीं था तो बीमाकर्ता/अपीलार्थी-कंपनी दावेदारों के पक्ष में प्रतिकर की रकम उन्मुक्त किए जाने के लिए दायी है ।

यह अपील 2005/2004 के मोटर दुर्घटना दावा सं. 32-एस/2, श्री अजय ठाकुर और एक अन्य बनाम जसविंदर सिंह और एक अन्य वाले मामले में मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण, त्वरित निपटान न्यायालय, शिमला (जिसे संक्षेप में "अधिकरण" कहा गया है) द्वारा तारीख 23 मई, 2008 को पारित किए निर्णय और अधिनिर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है, जिसके द्वारा दावेदारों के पक्ष में प्रतिवर्ष नौ प्रतिशत ब्याज सहित सात लाख पचानवे हजार रुपए की राशि का प्रतिकर अधिनिर्णीत किया गया था और इसमें बीमाकर्ता/अपीलार्थी को इस दायित्व को निभाने के लिए आबद्ध किया गया । अपीलार्थी/बीमाकर्ता-इफको टोकियो जनरल इंश्योरेंस कंपनी द्वारा अधिनिर्णीत प्रतिकर की रकम के विरुद्ध अपील की गई । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – अपीलार्थी ने बीमाकर्ता के विद्वान् काउंसेल के कथन पर प्रश्न नहीं उठाया है जिसने अधिकरण के समक्ष ऐसा कथन किया था और जहां तक विवाद्यक सं. 4 का संबंध है, उस बारे में आक्षेपित निर्णय पर कोई प्रश्न नहीं उठाया गया था । तथापि, ड्राइविंग लाइसेंस का परिशीलन करने पर यह प्रतीत होता है कि ड्राइविंग लाइसेंस तारीख 15 जून, 1989 से तारीख 14 जून, 1992 तक विधिमान्य था । यह तारीख 14 जून, 2001

और तारीख 5 मई, 2005 से तारीख 21 मई, 2008 तक विधिमान्य था । नवीनीकरण आदेश फाइल पर नहीं था । इस बारे में जानकारी नहीं थी कि किस तारीख से पुनः नवीनीकरण आदेश प्रभाव में था । बीमाकर्ता का यह कर्तव्य था कि वह इस बात को साबित करे कि ड्राइविंग लाइसेंस तारीख 14 जून, 2001 से तारीख 5 मई, 2005 को प्रभाव में नहीं था । बीमाकर्ता को अभिलेख भेजना चाहिए था परन्तु उसने कोई साक्ष्य नहीं दिया कि इस बात की पुनरावृत्ति न हो कि उक्त विवाद्यक पर बल न दिया गया हो । (पैरा 10)

बीमाकर्ता ने यह अभिवाक् नहीं किया और यह भी साबित नहीं किया कि स्वामी बीमाकृत ने कोई स्वेच्छयापूर्वक कोई व्यतिक्रम किया हो । उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए अपीलार्थी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा लिया गया आधार विफल है । तद्नुसार, अपील खारिज की जाती है और आक्षेपित अधिनिर्णय कायम रखा जाता है । कार्यालय को यह निर्देश दिया जाता है कि दावेदारों के पक्ष में कड़ाई के साथ पूरी रकम को निर्मुक्त किया जाए । आक्षेपित अधिनिर्णय में अन्तर्विष्ट शर्तों के निबंधनों में देय चैक लेखा के माध्यम से उक्त रकम को दावेदारों के पक्ष में उन्मुक्त किया जाए । (पैरा 11, 12 और 13)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2008 का एफ. ए. ओ. (एम. बी. ए.) सं. 539.

यह अपील मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण, त्वरित निपटान न्यायालय, शिमला द्वारा 2005/2004 के मोटर दुर्घटना दावा सं. 32-एस/2, श्री अजय ठाकुर और एक अन्य बनाम जसविंदर सिंह और एक अन्य वाले मामले में तारीख 23 मई, 2008 को पारित किए गए निर्णय और अधिनिर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री बी. एस. चौहान, ज्येष्ठ अधिवक्ता और वैभव तनवर, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी की ओर से श्री वाई. पी. सूद, अधिवक्ता (प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 की ओर से)

श्री दलीप के. शर्मा, अधिवक्ता (प्रत्यर्थी सं. 3 की ओर से)

मुख्य न्यायमूर्ति मंसूर अहमद मीर – यह अपील 2005/2004 के मोटर दुर्घटना दावा सं. 32-एस/2, श्री अजय ठाकुर और एक अन्य बनाम जसविंदर सिंह और एक अन्य वाले मामले में मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण, त्वरित निपटान न्यायालय, शिमला (जिसे संक्षेप में "अधिकरण" कहा गया है) द्वारा तारीख 23 मई, 2008 को पारित किए निर्णय और अधिनिर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है, जिसके द्वारा दावेदारों के पक्ष में प्रतिवर्ष नौ प्रतिशत ब्याज सहित सात लाख पचानवे हजार रुपए की राशि का प्रतिकर अधिनिर्णीत किया गया था और इसमें बीमाकर्ता/अपीलार्थी को इस दायित्व को निभाने के लिए आबद्ध किया गया, जिसमें इसके पश्चात् आक्षेपित अधिनिर्णय के रूप में इसका उल्लेख किया गया है और इसमें संक्षेप में अपील के ज्ञापन में निम्न आधारों को लिया गया है ।

2. स्वामी, ड्राइवर और दावेदार ने किसी भी आधार पर आक्षेपित अधिनिर्णय को प्रश्नगत नहीं किया है । इस प्रकार यह अधिनिर्णय जहां तक उनसे संबंधित है वह अन्तिम हो गया है ।

3. अपीलार्थी/बीमाकर्ता ने अपील के ज्ञापन में आक्षेपित अधिनिर्णय को इन आधारों पर प्रश्नगत किया है ।

4. अपीलार्थी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह दलील दी है कि अधिनिर्णय निम्नलिखित दो आधारों पर गलत और अवैध है :–

(i) कि ड्राइवर के पास कोई विधिमान्य ड्राइविंग लाइसेंस दुर्घटना के समय पर नहीं था ।

(ii) कि दुर्घटना के समय पर तीसरे पक्षकार का जोखिम बीमा पालिसी के अन्तर्गत नहीं आता था ।

5. मैंने आक्षेपित अधिनिर्णय पर विचार किया और सम्पूर्ण अभिलेख का परिशीलन किया ।

6. आधार सं. (i) पर विचार किए जाने के पूर्व मैं आधार सं. (ii) पर विचार करना उचित समझता हूं ।

7. अधिकरण के समक्ष फाइल किए गए अभिलेख के पृष्ठ 171 में बीमा पालिसी का उल्लेख किया गया है जिसमें यह प्रकट किया गया है कि यान तारीख 25 मार्च, 2004 से तारीख 24 मार्च, 2005 तक बीमाकृत

था । अपीलार्थी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल के अनुसार कि दुर्घटना के समय पर अर्थात् तारीख 24 अक्तूबर, 2003 को जोखिम इसमें सम्मिलित नहीं होता है । यह दलील इन कारणों से बल रहित है कि स्वामी-बीमाकृत ने इफको टोकियो जनरल इंश्योरेंस कंपनी को मोटर यान अधिनियम (जिसे संक्षेप में "अधिकरण" कहा गया है), के आज्ञापक निबंधनों में यान को बीमाकृत किया गया था अर्थात् इसमें अपीलार्थी से उसने यान को क्रय किया था । अधिकरण में फाइल किए गए अभिलेख के पृष्ठ 50 में यह नोट उपलब्ध है जिसमें यह कथन किया गया कि यान तारीख 21 जनवरी, 2003 से तारीख 30 जनवरी, 2004 तक बीमाकृत था ।

8. यह कह सकते हैं कि यान बीमाकृत था और इसमें जोखिम सम्मिलित है । तद्नुसार, अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा लिए गए आधार को उलट दिया गया ।

9. अब हम प्रथम आधार पर विचार करते हैं और खासतौर पर अधिकरण के समक्ष इसको लिया गया है और विवाद्यक सं. 4 विरचित किया गया था तथा बीमाकर्ता/अपीलार्थी पर इसके सबूत के भार को प्रकट करने का दायित्व है । बीमाकर्ता/अपीलार्थी की ओर से ऐसा साक्ष्य दिया जाना चाहिए लेकिन वह ऐसा करने में विफल रहा । इस प्रकार, सबूत के भार का निर्वहन करने में विफल रहा है । इतना ही नहीं कि वह सबूत के भार का निर्वहन करने में विफल रहा बल्कि उसने अधिकरण के समक्ष उक्त विवाद्यक पर भी बल नहीं दिया तथा अधिकरण ने यह अभिलिखित किया कि बीमाकर्ता ने विवाद्यक सं. 4 पर बल नहीं दिया है । तद्नुसार, दावेदारों, स्वामी, ड्राइवर के पक्ष में और बीमाकर्ता के विरुद्ध यह विनिश्चय किया गया था क्योंकि दबाव नहीं दिया गया ।

10. अपीलार्थी ने बीमाकर्ता के विद्वान् काउंसेल के कथन पर प्रश्न नहीं उठाया है जिसने अधिकरण के समक्ष ऐसा कथन किया था और जहां तक विवाद्यक सं. 4 का संबंध है, उस बारे में आक्षेपित निर्णय पर कोई प्रश्न नहीं उठाया गया था । तथापि, ड्राइविंग लाइसेंस का परिशीलन करने पर यह प्रतीत होता है कि ड्राइविंग लाइसेंस तारीख 15 जून, 1989 से तारीख 14 जून, 1992 तक विधिमान्य था । यह तारीख 14 जून, 2001 और तारीख 5 मई, 2005 से तारीख 21 मई, 2008 तक विधिमान्य था ।

नवीनीकरण आदेश फाइल पर नहीं था । इस बारे में जानकारी नहीं थी कि किस तारीख से पुनः नवीनीकरण आदेश प्रभाव में था । बीमाकर्ता का यह कर्तव्य था कि वह इस बात को साबित करे कि ड्राइविंग लाइसेंस तारीख 14 जून, 2001 से तारीख 5 मई, 2005 को प्रभाव में नहीं था । बीमाकर्ता को अभिलेख भेजना चाहिए था परन्तु उसने कोई साक्ष्य नहीं दिया कि इस बात की पुनरावृत्ति न हो कि उक्त विवाद्यक पर बल न दिया गया हो।

11. बीमाकर्ता ने यह अभिवाक् नहीं किया और यह भी साबित नहीं किया कि स्वामी बीमाकृत ने कोई स्वेच्छयापूर्वक कोई व्यतिक्रम किया हो ।

12. उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए अपीलार्थी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा लिया गया आधार विफल है । तद्नुसार, अपील खारिज की जाती है और आक्षेपित अधिनिर्णय कायम रखा जाता है ।

13. कार्यालय को यह निर्देश दिया जाता है कि दावेदारों के पक्ष में कड़ाई के साथ पूरी रकम को निर्मुक्त किया जाए । आक्षेपित अधिनिर्णय में अन्तर्विष्ट शर्तों के निबंधनों में देय चैक लेखा के माध्यम से उक्त रकम को दावेदारों के पक्ष में उन्मुक्त किया जाए ।

14. इस निर्णय की प्रति को इसके पश्चात् तत्काल अभिलेख पर वापस भेजा जाए ।

अपील खारिज की गई ।

आर्य

श्री राकेश कश्यप पुत्र श्री हरि दास और अन्य

बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य

तारीख 3 दिसंबर, 2015

न्यायमूर्ति पी. एस. राणा

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 11 [सपठित कंटूनमेंट निधि सेवक नियम, 1937 – नियम 5ख(1) और 5ख(2)] – पूर्व न्याय – जहां किसी रिट याचिका का निपटान उन्हीं आधारों पर पहले किया जा चुका हो, वहां याची द्वारा उन्हीं तथ्यों और परिस्थितियों पर रिट याचिका उच्च न्यायालय के समक्ष फाइल नहीं की जा सकती क्योंकि दूसरी रिट याचिका पूर्व न्याय की अवधारणा द्वारा वर्जित है ।

तारीख 17 जून, 2004 को याची सं. 1 ने पेट में अपना डिप्लोमा उत्तीर्ण किया । पी. टी. आई. का पद कंटूनमेंट बोर्ड मिडिल स्कूल, कसौली, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश में रिक्त था और याची सं. 1 का नाम सम्यक् रूप से रोजगार कार्यालय द्वारा प्रायोजित था । याची सं. 1 का सम्यक् साक्षात्कार किया गया और वर्ष 2006 में कंटूनमेंट बोर्ड मिडिल स्कूल, कसौली में संविदा आधार पर पी. टी. आई. के रूप में नियुक्त किया गया । याची सं. 1 संविदा आधार पर तब से पी. टी. आई. के रूप में कार्य करता है । याची सं. 2 ने वर्ष 2006 में कला और शिल्प में अपनी डिप्लोमा पूरी की है । कंटूनमेंट बोर्ड मिडिल स्कूल, कसौली, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश में कला और शिल्प अध्यापक के पद का विज्ञापन किया गया और याची सं. 2 का नाम रोजगार कार्यालय द्वारा सम्यक् रूप से प्रायोजित किया गया । याची सं. 2 का सम्यक् रूप से साक्षात्कार किया गया और संविदा आधार पर कला और शिल्प अध्यापक के रूप में नियुक्त किया गया । याची सं. 2 संविदा आधार पर आज की तारीख तक कला और शिल्प अध्यापक के रूप में कार्य कर रहा है । याची सं. 3 ने मई, 2003 में संस्कृत में अपनी स्नातक शिक्षा उत्तीर्ण की और कंटूनमेंट बोर्ड मिडिल स्कूल में संस्कृत अध्यापक का पद रिक्त था और याची सं. 3 का नाम सम्यक् रूप से रोजगार कार्यालय द्वारा प्रायोजित किया गया । याची सं. 3 का सम्यक् रूप से साक्षात्कार किया गया और वर्ष 2006 में कंटूनमेंट बोर्ड मिडिल स्कूल, कसौली में संविदा आधार पर नियुक्त किया गया तथा याची

सं. 3 आज की तारीख तक संविदा आधार पर कार्य कर रहा है । तारीख 14 जुलाई, 2010 को याचियों को प्रत्येक सत्र की समाप्ति पर कल्पनात्मक अंतराल दिया गया और उसके पश्चात् याचियों को पुनः लगाया गया । यह अभिवचन किया गया कि याची वर्ष 2006 से अध्यापक के रूप में कार्य कर रहे हैं और अब उन लोगों ने राज्य सरकार द्वारा नियत नियुक्ति की आयु पार कर ली है । आगे यह अभिवचन किया गया कि कंटूनमेंट बोर्ड के कर्मचारी राज्य सरकार द्वारा लागू संदाय और भत्ते के हकदार हैं । आगे यह भी अभिवचन किया गया कि याचियों की सेवाओं को आज तक नियमित नहीं किया गया है और उन लोगों ने छह वर्ष की सेवाएं पूरी कर ली हैं । रिट याचिका की स्वीकृति का अनुरोध किया गया । उच्च न्यायालय द्वारा रिट याचिका का निपटान करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभिलेख से यह साबित होता है कि उसके पश्चात् 2013ख की एक अन्य सिविल रिट याचिका सं. 4615, राकेश कश्यप और अन्य बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य याचियों द्वारा फाइल की गई थी और इसका निपटान इस मताभिव्यक्ति के साथ माननीय उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा 24 सितंबर, 2013 को किया गया था कि राज्य सरकार की नीति याचियों को लागू नहीं होगी क्योंकि याची केंद्रीय विधान द्वारा शासित हैं । 2013ख की सिविल रिट याचिका सं. 4615 में हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय की माननीय खंड न्यायपीठ ने यह मत व्यक्त किया था कि कंटूनमेंट निधि सेवक नियम, 1937 के नियम 5ख(1) और 5ख(2) के अनुसार 18 वर्ष से कम और 25 वर्ष से अधिक आयु के किसी व्यक्ति को बोर्ड के अधीन किसी पद पर नियुक्त नहीं किया जाएगा । उच्च न्यायालय की माननीय खंड न्यायपीठ ने आगे यह भी अभिनिर्धारित किया कि मुख्य कार्यपालक अधिकारी, कंटूनमेंट बोर्ड मिडिल स्कूल, कसौली और जी. ओ. सी. इन चीफ, पश्चिमी कमान, चंडी मंदिर, पंचकुला, हरियाणा कंटूनमेंट निधि सेवक नियम, 1937 के नियम 5ख(1) और 5ख(2) में वर्णित अनुबंध द्वारा आबद्ध हैं । माननीय खंड न्यायपीठ ने आगे यह अभिनिर्धारित किया कि याची नियम, 1937 के नियम 5ख(2) में विनिर्दिष्ट आयु सीमा के शिथिलीकरण के लिए आवेदन करें और यदि ऐसा अभ्यावेदन किया जाता है तो समुचित प्राधिकारी इसका यथाशीघ्र विनिश्चय करेंगे और यदि शिथिलीकरण मंजूर किया जाता है तो याची चयन प्रक्रिया में भाग लेंगे । इसके पश्चात् याचियों ने पुनः 2013 की सिविल रिट याचिका सं. 9535 राकेश कश्यप और अन्य बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य फाइल की जिसका विनिश्चय माननीय उच्च न्यायालय की खंड

न्यायपीठ द्वारा 12 दिसंबर, 2013 को किया गया । खंड न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया कि याचियों के पास अनुमोदित पदों पर नियमितीकरण के लिए विचार किए जाने का कोई अधिकार नहीं है । माननीय खंड न्यायपीठ ने आगे यह अभिनिर्धारित किया कि 2013ख की सिविल रिट याचिका सं. 4615 में माननीय खंड न्यायपीठ ने याची को आयु की शिथिलीकरण के लिए गैर याची सं. 3 और 4 को आवेदन करने का निदेश दिया था किंतु गैर याचियों को आवेदन देने के बजाय, याचियों ने उनके नियमितीकरण के लिए नीति विरचित करने के अनुरोध के साथ 2013 की सिविल रिट याचिका सं. 9535 फाइल की । उच्च न्यायालय की माननीय खंड न्यायपीठ ने 2013 की सिविल रिट याचिका सं. 9535 में यह अभिनिर्धारित किया कि याचियों के पास किसी हस्तक्षेप की अपेक्षा करने का कोई विधिक प्रवर्तनीय अधिकार नहीं है और 10,000/- रुपए (दस हजार रुपए) खर्चे के साथ रिट याचिका खारिज कर दी । इसके पश्चात् पुनः याचियों ने उन्हीं आधारों पर 2015एफ की वर्तमान रिट याचिका सं. 1453 फाइल की । यह अभिनिर्धारित किया गया कि 24 सितंबर, 2013 को विनिश्चित, 2013ख की सिविल रिट याचिका सं. 4615, राकेश कश्यप और अन्य बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य वाले मामले में माननीय उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ के निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए और तारीख 12 दिसंबर, 2013 को विनिश्चित 2013 की सिविल रिट याचिका सं. 9535, राकेश कश्यप और अन्य बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य वाले मामले में माननीय खंड न्यायपीठ के निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए यह रिट याचिका प्राङन्याय की अवधारणा द्वारा बाधित है । यह सुस्थिर विधि है कि प्राङन्याय की अवधारणा रिट न्यायालयों को लागू होती है । उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए बिंदु सं. 1 का विनिश्चय याचियों के विरुद्ध विनिश्चित किया जाता है । (पैरा 10, 11 और 12)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2013]	2013ख की सिविल रिट याचिका सं. 4615 : **राकेश कश्यप और अन्य** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य** ।	12

रिट (सिविल) अधिकारिता : 2015 की सिविल रिट याचिका सं. 1453.

संविधान, 1950 के अनच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याचियों की ओर से	श्री एस. डी. गिल, अधिवक्ता
गैर याची सं. 1 और 2 की ओर से	श्री एम. एल. चौहान और श्री रुपेन्दर सिंह ठाकुर, अपर महाधिवक्ता
गैर याची सं. 3 और 4 की ओर से	श्री अशोक शर्मा, भारत के सहायक सालिसिटर जनरल

आदेश

यह सिविल रिट याचिका यह अनुरोध करते हुए भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन फाइल की गई है कि गैर याचियों को राज्य सरकार की नियुक्ति के अनुसार सभी पारिणामिक फायदों के साथ छह वर्ष सेवा पूरा करने के पश्चात् याचियों की सेवाएं नियमित करने का निदेश दिया जाए । याचियों को परीक्षण/साक्षात्कार में बैठने की अनुज्ञा देने की अतिरिक्त अनुतोष की मांग की गई है यदि कोई नियमित पद आयु की शिथिलता द्वारा भरा जाता है ।

मामले का संक्षिप्त तथ्य :

2. तारीख 17 जून, 2004 को याची सं. 1 ने पेट में अपना डिप्लोमा उत्तीर्ण किया । पी. टी. आई. का पद कंटूनमेंट बोर्ड मिडिल स्कूल, कसौली, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश में रिक्त था और याची सं. 1 का नाम सम्यक् रूप से रोजगार कार्यालय द्वारा प्रायोजित था । याची सं. 1 का सम्यक् साक्षात्कार किया गया और वर्ष 2006 में कंटूनमेंट बोर्ड मिडिल स्कूल, कसौली में संविदा आधार पर पी. टी. आई. के रूप में नियुक्त किया गया । याची सं. 1 संविदा आधार पर तब से पी. टी. आई. के रूप में कार्य करता है ।

3. याची सं. 2 ने वर्ष 2006 में कला और शिल्प में अपनी डिप्लोमा पूरी की है । कंटूनमेंट बोर्ड मिडिल स्कूल, कसौली, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश में कला और शिल्प अध्यापक के पद का विज्ञापन किया गया और याची सं. 2 का नाम रोजगार कार्यालय द्वारा सम्यक् रूप से प्रायोजित किया गया । याची सं. 2 का सम्यक् रूप से साक्षात्कार किया गया और संविदा आधार पर कला और शिल्प अध्यापक के रूप में नियुक्त किया गया । याची सं. 2 संविदा आधार पर आज की तारीख तक कला और शिल्प अध्यापक के रूप में कार्य कर रहा है ।

4. याची सं. 3 ने मई, 2003 में संस्कृत में अपनी स्नातक शिक्षा उत्तीर्ण की और कंटूनमेंट बोर्ड मिडिल स्कूल में संस्कृत अध्यापक का पद रिक्त था और याची सं. 3 का नाम सम्यक् रूप से रोजगार कार्यालय द्वारा प्रायोजित किया गया । याची सं. 3 का सम्यक् रूप से साक्षात्कार किया गया और वर्ष 2006 में कंटूनमेंट बोर्ड मिडिल स्कूल, कसौली में संविदा आधार पर नियुक्त किया गया तथा याची सं. 3 आज की तारीख तक संविदा आधार पर कार्य कर रहा है ।

5. तारीख 14 जुलाई, 2010 को याचियों को प्रत्येक सत्र की समाप्ति पर कल्पनात्मक अंतराल दिया गया और उसके पश्चात् याचियों को पुनः लगाया गया । यह अभिवचन किया गया कि याची वर्ष 2006 से अध्यापक के रूप में कार्य कर रहे हैं और अब उन लोगों ने राज्य सरकार द्वारा नियत नियुक्ति की आयु पार कर ली है । आगे यह अभिवचन किया गया कि कंटूनमेंट बोर्ड के कर्मचारी राज्य सरकार द्वारा लागू संदाय और भत्ते के हकदार हैं । आगे यह भी अभिवचन किया गया कि याचियों की सेवाओं को आज तक नियमित नहीं किया गया है और उन लोगों ने छह वर्ष की सेवाएं पूरी कर ली हैं । रिट याचिका की स्वीकृति का अनुरोध किया गया ।

6. समानांतर स्तंभ में गैर याची सं. 1 और 2 अर्थात् हिमाचल प्रदेश राज्य और प्रारंभिक शिक्षा निदेशक, हिमाचल प्रदेश की ओर से फाइल उत्तर में यह अभिवचन किया गया है कि कंटूनमेंड बोर्ड मिडिल स्कूल, कसौली, जिला सोलन गैर याची सं. 1 और 2 के नियंत्रणाधीन नहीं है । आगे यह अभिवचन किया गया कि याचियों की शिकायतों पर गैर याची सं. 3 और 4 अर्थात् मुख्य कार्यपालक अधिकारी, कसौली कंटूनमेंट बोर्ड मिडिल स्कूल, कसौली, जिला सोलन और जी. ओ. सी. इन चीफ पश्चिमी कमान चंडी मंदिर, पंचकुला, हरियाणा द्वारा पुनर्विचार किया जाए ।

7. समानांतर स्तंभ में गैर याची सं. 3 और 4 अर्थात् मुख्य कार्यपालक अधिकारी, कसौली कंटूनमेंट बोर्ड मिडिल स्कूल, कसौली, जिला सोलन और जी. ओ. सी. इन चीफ पश्चिमी कमान चंडी मंदिर, पंचकुला, हरियाणा की ओर से फाइल पृथक् उत्तर में यह अभिवचन किया गया है कि याचियों के पदों को कंटूनमेंट निजी सेवक नियम, 1937 के नियम 5ख(1) के अधीन यथा उपबंधित सीधी भर्ती के माध्यम से भरा जाए । आगे यह अभिवचन किया गया कि याचियों ने 2013ख की सिविल रिट

याचिका सं. 4615 फाइल की जिसका निपटान तारीख 24 सितंबर, 2013 के आदेश द्वारा हिमाचल प्रदेश के माननीय उच्च न्यायालय द्वारा किया गया । आगे यह अभिवचन किया गया कि 2013 की एक अन्य सिविल रिट याचिका सं. 9535 याचियों द्वारा उसी वाद हेतुक के लिए फाइल की गई थी जिसको भी 10,000/- रुपए के खर्चे सहित तारीख 12 दिसंबर, 2013 के आदेश द्वारा हिमाचल प्रदेश के माननीय उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया था । आगे यह अभिवचन किया गया कि याची न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग कर रहे हैं और यह भी अभिवचन किया गया कि वर्तमान रिट याचिका संधार्य नहीं है । रिट याचिका को खारिज करने का अनुरोध किया गया ।

8. न्यायालय ने याचियों और गैर याचियों की ओर से उपस्थित विद्वान् अधिवक्ताओं को सुना और सावधानीपूर्वक संपूर्ण अभिलेख का परिशीलन भी किया । अवधारणार्थ निम्नलिखित बिंदु उद्भूत हुए :–

(1) क्या भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन फाइल सिविल रिट याचिका के आधार ज्ञापन में वर्णित के रूप में स्वीकार्य किए जाने योग्य है ?

(2) अनुतोष ।

कारणों सहित बिंदु सं. 1 का निष्कर्ष :

9. अभिलेख से यह साबित होता है कि 2010 की लेटर्स पेटेंट अपील सं. 178, मुख्य कार्यपालक अधिकारी, कसौली बनाम राकेश कश्यप और अन्य फाइल की गई थी । अभिलेख से यह भी साबित होता है कि 2010 की लेटर्स पेटेंट अपील सं. 178 इस निदेश के साथ 17 जून, 2013 को हिमाचल प्रदेश के माननीय उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा निपटाई गई थी कि कथित विद्यालयों में सृजित नियमित पद यदि कोई है को विधि के अनुसार भरा जाए ।

10. अभिलेख से यह साबित होता है कि उसके पश्चात् 2013ख की एक अन्य सिविल रिट याचिका सं. 4615, राकेश कश्यप और अन्य बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य याचियों द्वारा फाइल की गई थी और इसका निपटान इस मताभिव्यक्ति के साथ माननीय उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा 24 सितंबर, 2013 को किया गया था कि राज्य सरकार की नीति याचियों को लागू नहीं होगी क्योंकि याची केंद्रीय विधान

द्वारा शासित हैं । 2013ख की सिविल रिट याचिका सं. 4615 में हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय की माननीय खंड न्यायपीठ ने यह मत व्यक्त किया था कि कंटूनमेंट निधि सेवक नियम, 1937 के नियम 5ख(1) और 5ख(2) के अनुसार 18 वर्ष से कम और 25 वर्ष से अधिक आयु के किसी व्यक्ति को बोर्ड के अधीन किसी पद पर नियुक्त नहीं किया जाएगा । उच्च न्यायालय की माननीय खंड न्यायपीठ ने आगे यह भी अभिनिर्धारित किया कि मुख्य कार्यपालक अधिकारी, कंटूनमेंट बोर्ड मिडिल स्कूल, कसौली और जी. ओ. सी. इन चीफ, पश्चिमी कमान, चंडी मंदिर, पंचकुला, हरियाणा कंटूनमेंट निधि सेवक नियम, 1937 के नियम 5ख(1) और 5ख(2) में वर्णित अनुबंध द्वारा आबद्ध हैं । माननीय खंड न्यायपीठ ने आगे यह अभिनिर्धारित किया कि याची नियम, 1937 के नियम 5ख(2) में विनिर्दिष्ट आयु सीमा के शिथिलीकरण के लिए आवेदन करें और यदि ऐसा अभ्यावेदन किया जाता है तो समुचित प्राधिकारी इसका यथाशीघ्र विनिश्चय करेंगे और यदि शिथिलीकरण मंजूर किया जाता है तो याची चयन प्रक्रिया में भाग लेंगे ।

11. इसके पश्चात् याचियों ने पुनः 2013 की सिविल रिट याचिका सं. 9535 राकेश कश्यप और अन्य बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य फाइल की जिसका विनिश्चय माननीय उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा 12 दिसंबर, 2013 को किया गया । खंड न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया कि याचियों के पास अनुमोदित पदों पर नियमितीकरण के लिए विचार किए जाने का कोई अधिकार नहीं है । माननीय खंड न्यायपीठ ने आगे यह अभिनिर्धारित किया कि 2013ख की सिविल रिट याचिका सं. 4615 में माननीय खंड न्यायपीठ ने याची को आयु की शिथिलीकरण के लिए गैर याची सं. 3 और 4 को आवेदन करने का निदेश दिया था किंतु गैर याचियों को आवेदन देने के बजाय, याचियों ने उनके नियमितीकरण के लिए नीति विरचित करने के अनुरोध के साथ 2013 की सिविल रिट याचिका सं. 9535 फाइल की । उच्च न्यायालय की माननीय खंड न्यायपीठ ने 2013 की सिविल रिट याचिका सं. 9535 में यह अभिनिर्धारित किया कि याचियों के पास किसी हस्तक्षेप की अपेक्षा करने का कोई विधिक प्रवर्तनीय अधिकार नहीं है और 10,000/- रुपए (दस हजार रुपए) खर्चे के साथ रिट याचिका खारिज कर दी ।

12. इसके पश्चात् पुनः याचियों ने उन्हीं आधारों पर 2015एफ की

वर्तमान रिट याचिका सं. 1453 फाइल की । यह अभिनिर्धारित किया गया कि 24 सितंबर, 2013 को विनिश्चित, **राकेश कश्यप और अन्य** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ के निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए और तारीख 12 दिसंबर, 2013 को विनिश्चित 2013 की सिविल रिट याचिका सं. 9535, राकेश कश्यप और अन्य बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य वाले मामले में माननीय खंड न्यायपीठ के निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए यह रिट याचिका पूर्व न्याय की अवधारणा द्वारा बाधित है । यह सुस्थिर विधि है कि पूर्व न्याय की अवधारणा रिट न्यायालयों को लागू होती है । उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए बिंदु सं. 1 का विनिश्चय याचियों के विरुद्ध विनिश्चित किया जाता है ।

बिंदु सं. 2 (अनुतोष) :

13. उपरोक्त बिंदु सं. 1 के निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए 2015 की सिविल रिट याचिका सं. 1453, राकेश कश्यप और अन्य बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य वाले मामले को खारिज किया जाता है । तथापि, यदि आयु सीमा के शिथिलीकरण का याचियों का कोई आवेदन गैर याची सं. 3 और 4 के समक्ष 1937 के नियमों के नियम, 5ख(2) के अधीन लंबित है तो इसका निपटान विधि के अनुसार एक मास के भीतर किया जाए । खर्चे के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया जाता । लंबित आवेदन यदि कोई है को भी निपटाया जाता है । याचिका निपटाई जाती है ।

रिट याचिका का निपटान किया गया ।

पा.

---

[1] 2013ख की सिविल रिट याचिका सं. 4615.

हिमाचल सड़क परिवहन निगम

बनाम

निशा देवी (श्रीमती)

तारीख 4 दिसम्बर, 2015

मुख्य न्यायमूर्ति मंसूर अहमद मीर

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 173 – अपील – दो वाहनों के टक्कर से कारित दुर्घटना – दोनों वाहनों के चालकों की अंशदायी उपेक्षा साबित होना – चालकों के पास वाहन चालन के समय वैध चालन अनुज्ञप्ति होना – बीमा कम्पनी का दायित्व अभिनिर्धारित होना – प्रतिकर की रकम कम होने के आधार पर चुनौती देना – चुनौती खारिज होना – यदि यह साबित हो जाता है कि दुर्घटना, दो वाहनों के टक्कर से कारित हुई थी और उसमें दोनों वाहनों के चालक की उपेक्षा थी, तो अंशदायी उपेक्षा के आधार पर दोनों चालकों को दोषी मानते हुए निर्धारित युक्तियुक्त प्रतिकर को इस आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती है कि प्रतिकर अल्प या कम है यदि प्रतिकर निर्धारित करने के सभी मानकों को कठोरतः पालन किया गया है ।

वर्तमान मामले में, की विषयवस्तु मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण-II, कांगड़ा, धर्मशाला (हिमाचल प्रदेश) (संक्षेप में अधिकरण) द्वारा 2006 की एम. ए. सी. पी. सं. 13-एन, शीर्षक निशा देवी और अन्य बनाम हिमाचल सड़क परिवहन निगम और अन्य में पारित तारीख 22 मार्च, 2011 के निर्णय और अधिनिर्णय हैं, जिसके द्वारा दावेदारों के पक्ष में याचिका फाइल किए जाने की तारीख से इसके उद्ग्रहण होने तक 9 प्रतिशत वार्षिक ब्याज के साथ 19,72,100/- रुपए का प्रतिकर अधिनिर्णीत किया गया था और इसमें के अपीलार्थियों तथा अपराध करने वाले ट्रक के बीमाकर्ता पर बराबर हिस्सों में दायित्व डाला गया था । दावेदारों, अपराध करने वाले बस का चालक, स्वामियों और अपराध करने वाले ट्रक के बीमाकर्ता ने किसी भी आधार पर आक्षेपित अधिनिर्णय को प्रश्नगत नहीं किया है, इस प्रकार, जहां तक यह (अधिनिर्णय) उनसे संबंधित है, अंतिम हो गया है । यहां यह अभिलिखित करना समुचित है कि अधिकरण ने अपीलार्थियों अर्थात् अपराध करने वाले स्वामी-बीमाकृत और अपराध करने वाले ट्रक के बीमाकर्ता

अर्थात् नेशनल इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड को बराबर हिस्सों में आक्षेपित अधिनिर्णय का समाधान करने का निर्देश दिया है । अपराध करने वाले ट्रक के बीमाकर्ता ने आक्षेपित निर्णय को प्रश्नगत नहीं किया है । अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल ने यह तर्क दिया कि हिमाचल सड़क परिवहन निगम बस के चालक की कोई उपेक्षा नहीं थी और सम्पूर्ण दायित्व अपराध करने वाले ट्रक के बीमाकर्ता पर डाला गया था । अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल के तर्क में निम्नलिखित कारणों से कोई बल नहीं है । दावेदारों ने दावा याचिका में दिए गए विवरणों के अनुसार, 20 लाख रुपए का प्रतिकर मंजूर करने के लिए अधिकरण के समक्ष दावा याचिका फाइल की थी जिसका उत्तर देते हुए सभी प्रत्यर्थियों द्वारा विरोध किया गया था । अधिकरण ने साक्ष्यों, मौखिक के साथ ही दस्तावेजी की समीक्षा करने के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया कि कमल किशोर, जो बस संख्या एच पी 38ए 6060 में यात्रा कर रहा था, उस यानीय दुर्घटना का आहत है, जो बस संख्या एच पी 38ए 6060 और ट्रक संख्या आर जे 07 जी 3331 के चालकों के अंशदायी उपेक्षा के कारण घटित हुई थी । इससे व्यथित होकर वर्तमान अपील फाइल की गई । न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – अधिकरण ने साक्ष्यों पर चर्चा करने के पश्चात्, यह अभिनिर्धारित किया है कि दावेदारों ने यह साबित कर दिया है कि मृतक की मृत्यु, अपराध करने वाले दोनों यानों के चालकों की अंशदायी उपेक्षा के कारण हुई थी, जिसमें हस्तक्षेप करने की कोई आवश्यकता नहीं है । न्यायालय ने अधिकरण द्वारा किए गए निर्धारण का परिशीलन किया है । अधिनिर्णीत रकम पर्याप्त है, इसे किसी भी प्रकार से अत्यधिक नहीं कहा जा सकता है । अधिकरण ने यह सही ही अभिनिर्धारित किया है कि दुर्घटना, अपराध करने वाले यानों के दोनों चालकों की अंशदायी उपेक्षा के कारण घटित हुई थी और अपीलार्थियों तथा अपराध करने वाले ट्रक के बीमाकर्ता को बराबर हिस्सों में अधिनिर्णय की तुष्टि करने का निर्देश दिया था । (पैरा 12, 15 और 16)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2011 की एफ. ए. ओ. सं. 224.

मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से श्री जगदीश ठाकुर, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी सं. 1 से 4 की ओर से श्री राकेश भारती, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी सं. 5 की ओर से श्री नरेश कौल, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी सं. 6 और 8 से 10 की ओर से कोई नहीं

प्रत्यर्थी सं. 7 की ओर से सुश्री देवियानी शर्मा, अधिवक्ता

मुख्य न्यायमूर्ति मंसूर अहमद मीर – इस अपील की विषयवस्तु मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण-II, कांगड़ा, धर्मशाला (हिमाचल प्रदेश) (संक्षेप में अधिकरण) द्वारा 2006 की एम. ए. सी. पी. सं. 13-एन, शीर्षक निशा देवी और अन्य बनाम हिमाचल सड़क परिवहन निगम और अन्य में पारित तारीख 22 मार्च, 2011 के निर्णय और अधिनिर्णय है, जिसके द्वारा दावेदारों के पक्ष में याचिका फाइल किए जाने की तारीख से इसके उद्ग्रहण होने तक 9 प्रतिशत वार्षिक ब्याज के साथ 19,72,100/- रुपए का प्रतिकर अधिनिर्णित किया गया था और इसमें के अपीलार्थियों तथा अपराध करने वाले ट्रक के बीमाकर्ता पर बराबर हिस्सों में दायित्व डाला गया था (जिसे संक्षेप में "आक्षेपित अधिनिर्णय" कहा गया है) ।

2. दावेदारों, अपराध करने वाले बस का चालक, स्वामियों और अपराध करने वाले ट्रक के बीमाकर्ता ने किसी भी आधार पर आक्षेपित अधिनिर्णय को प्रश्नगत नहीं किया है, इस प्रकार, जहां तक यह (अधिनिर्णय) उनसे संबंधित है, अंतिम हो गया है ।

3. यहां यह अभिलिखित करना समुचित है कि अधिकरण ने अपीलार्थियों अर्थात् अपराध करने वाले स्वामी-बीमाकृत और अपराध करने वाले ट्रक के बीमाकर्ता अर्थात् नेशनल इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड को बराबर हिस्सों में आक्षेपित अधिनिर्णय का समाधान करने का निर्देश दिया है । अपराध करने वाले ट्रक के बीमाकर्ता ने आक्षेपित निर्णय को प्रश्नगत नहीं किया है ।

4. अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल ने यह तर्क दिया कि हिमाचल सड़क परिवहन निगम बस के चालक की कोई उपेक्षा नहीं थी और सम्पूर्ण दायित्व अपराध करने वाले ट्रक के बीमाकर्ता पर डाला गया था । अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल के तर्क में निम्नलिखित कारणों से कोई बल नहीं है ।

5. दावेदारों ने दावा याचिका में दिए गए विवरणों के अनुसार, 20 लाख रुपए का प्रतिकर मंजूर करने के लिए अधिकरण के समक्ष दावा

याचिका फाइल की थी जिसका उत्तर देते हुए सभी प्रत्यर्थियों द्वारा विरोध किया गया था ।

6. अधिकरण द्वारा तारीख 7 जून, 2008 को निम्नलिखित विवाद्यक विरचित किए गए थे :–

"1. क्या मृतक कमल किशोर, प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 द्वारा धारित अपराध करने वाली बस संख्या एच पी 38ए 6060 में यात्रा कर रहा था और प्रत्यर्थी सं. 3 द्वारा बस को उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक से चलाया जा रहा था और उसने प्रत्यर्थी सं. 4 और प्रत्यर्थी सं. 6 से 8 के हित-पूर्वाधिकारी रामेश्वर द्वारा धारित ट्रक संख्या आर जे 07 जी 3331 को टक्कर मार दी थी और तद्द्वारा, मृतक कमल किशोर की मृत्यु कारित हुई थी ?

2. यदि विवाद्यक सं. 1 सकारात्मक साबित हो जाता है तो क्या याची, मृतक के विधिक उत्तराधिकारी होने के नाते प्रत्यर्थियों से प्रतिकर पाने के हकदार हैं ? यदि ऐसा है तो कितनी रकम और कौन उसे याचियों को संदाय करने के लिए दायी है ?

3. क्या याचिका वर्तमान प्ररूप में कायम रखे जाने योग्य नहीं है, जैसा कि अभिकथित है ?

4. क्या याचियों का कृत्य और आचरण, वर्तमान याचिका को वर्जित करता है, जैसा कि अभिकथित है ?

5. क्या दुर्घटना ट्रक संख्या आर जे 07 जी 3331 के चालक मृतक रामेश्वर के गलत कृत्य और आचरण के कारण गठित हुई थी ? यदि ऐसा है तो इसका प्रभाव ?

6. क्या प्रत्यर्थी सं. 5 को इस याचिका में पक्षकार के रूप में गलत संयोजन किया गया है, जैसा कि अभिकथित है ?

7. क्या याचिका, याचियों और प्रत्यर्थी सं. 1 से 3, 4 और 6 से 8 के बीच दुरभिसंधि का परिणाम है, जैसा कि अभिकथित है ?

8. क्या ट्रक संख्या आर जे 07 जी 3331 का चालक मृतक रामेश्वर के पास दुर्घटना के दिन यान चलाने के लिए समुचित और विधिमान्य अनुज्ञप्ति नहीं थी और उसने बीमा पालिसी के निबंधनों और शर्तों का अतिक्रमण किया है, जैसा कि अभिकथित है ? यदि ऐसा है तो इसका प्रभाव ?

9. क्या अपराध करने वाले ट्रक संख्या आर जे 07 जी 3331 को इसके स्वामी द्वारा मोटर यान अधिनियम, 1988 के उपबंधों के अतिक्रमण में चलाया जा रहा था और इस अधिकरण को याचिका ग्रहण करने की कोई अधिकारिता नहीं है, जैसा कि अभिकथित है ?

10. अनुतोष ।"

7. पक्षकारों ने साक्ष्य प्रस्तुत किया है ।

8. अधिकरण ने साक्ष्यों, मौखिक के साथ ही दस्तावेजी की समीक्षा करने के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया कि कमल किशोर, जो बस संख्या एच पी 38ए 6060 में यात्रा कर रहा था, उस यानीय दुर्घटना का आहत है, जो बस संख्या एच पी 38ए 6060 और ट्रक संख्या आर जे 07 जी 3331 के चालकों के अंशदायी उपेक्षा के कारण घटित हुई थी ।

विवाद्यक सं. 1 और 5

9. इस प्रकार, ये दोनों विवाद्यक एक दूसरे से जुड़े हुए हैं, इसलिए इनका अवधारण एक साथ किया जाना है ।

10. प्रत्यर्थियों ने दावा याचिका में कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है । अपराध करने वाले बस का चालक अर्थात् श्री करनैल सिंह, प्रत्यर्थी साक्षी 2 के रूप में साक्षी कठघरे में उपस्थित हुआ, जो यह साबित करने में समर्थ नहीं हुआ है कि वह दुर्घटना के समय पर अपराध करने वाले बस को उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक नहीं चला रहा था ।

11. अपराध करने वाले ट्रक का सह-स्वामी-किशन लाल भी प्रत्यर्थी साक्षी 1 के रूप में साक्षी कठघरे में उपस्थित हुआ और अपने दायित्व से बचने की कोशिश की किन्तु इसमें सफल नहीं रहा ।

12. अधिकरण ने साक्ष्यों पर चर्चा करने के पश्चात्, विवाद्यक सं. 1 और 5 को सही ही विनिश्चित किया है और यह अभिनिर्धारित किया है कि दावेदारों ने यह साबित कर दिया है कि मृतक की मृत्यु, अपराध करने वाले दोनों यानों के चालकों की अंशदायी उपेक्षा के कारण हुई थी, जिसमें हस्तक्षेप करने की कोई आवश्यकता नहीं है । तद्नुसार, अधिकरण द्वारा विवाद्यक सं. 1 और 5 पर निकाले गए निष्कर्ष कायम रखे जाते हैं ।

13. मैं, विवाद्यक सं. 2 पर विचार करने के पूर्व मैं विवाद्यक सं. 3, 4 और 6 से 9 को अवधारित करना समुचित समझता हूं ।

विवाद्यक सं. 3, 4 और 6 से 9

14. प्रत्यर्थियों का यह दायित्व था कि वे दावा याचिका में सबूत के भार का निर्वहन करें किन्तु उन्होंने इसके निर्वहन में कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया । अन्यथा भी, उक्त विवाद्यकों पर अधिकरण द्वारा निकाले गए निष्कर्ष को प्रश्नगत नहीं किया गया है । तद्नुसार, अधिकरण द्वारा विवाद्यक सं. 3, 4 और 6 से 9 पर निकाले गए निष्कर्ष कायम रखे जाते हैं ।

विवाद्यक सं. 2

15. मैंने, अधिकरण द्वारा किए गए निर्धारण का परिशीलन किया है । अधिनिर्णीत रकम पर्याप्त है, इसे किसी भी प्रकार से अत्यधिक नहीं कहा जा सकता है ।

16. अधिकरण ने यह सही ही अभिनिर्धारित किया है कि दुर्घटना, अपराध करने वाले यानों के दोनों चालकों की अंशदायी उपेक्षा के कारण कारित हुआ था और अपीलार्थियों तथा अपराध करने वाले ट्रक के बीमाकर्ता को बराबर हिस्सों में अधिनिर्णय की तुष्टि करने का निर्देश दिया था । इस प्रकार, विवाद्यक सं. 2 पर निकाले गए निष्कर्ष भी कायम रखे जाते हैं ।

17. यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थियों ने दावेदारों, जो पीड़ित है, का प्रतिकर संदाय करने में विलम्ब करने के आशय से यह अपील फाइल की है ।

18. उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए, यह स्पष्ट है कि अपीलार्थी हस्तक्षेप करने के लिए कोई भी पक्षकथन करने में समर्थ नहीं रहे हैं । इस प्रकार के मत को ध्यान में रखते हुए, आक्षेपित अधिनिर्णय को गुणागुण के रूप में कायम रखा जाता है और अपील खारिज किए जाने योग्य है । तद्नुसार, आक्षेपित अधिनिर्णय कायम रखा जाता है और अपील खारिज की जाती है ।

19. रजिस्ट्री को यह निर्देश दिया जाता है कि वह समुचित शनाख्त करने के पश्चात्, आक्षेपित अधिनिर्णय में अन्तर्विष्ट निबंधनों और शर्तों के अनुसार, कठोरतः दावेदारों के पक्ष में अधिनिर्णीत रकम अवमुक्त करें ।

20. अधिकरण की फाइल पर निर्णय की प्रतिलिपि प्रस्तुत करने के पश्चात् अभिलेख को नीचे भेजा जाए ।

अपील खारिज की गई ।

क.

स्वर्णा देवी (श्रीमती)

बनाम

रुको देवी (श्रीमती) और अन्य

तारीख 4 मई, 2016

न्यायमूर्ति अजय मोहन गोयल

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 151 तथा आदेश 6 का नियम 17 और आदेश 22 का नियम 3 और 4 – मृत वादी के विधिक प्रतिनिधियों द्वारा अभिवचनों का संशोधन – विचारण न्यायालय द्वारा संशोधन को मंजूर करना और प्रथम अपील न्यायालय द्वारा अभिपुष्टि किया जाना – द्वितीय अपील – कोई व्यक्ति जिसे मृत पक्षकार के विधिक प्रतिनिधि के रूप में पक्षकार बनाया जाता है वह केवल ऐसे आक्षेप कर सकता है जो स्वयं मृत पक्षकार कर सकता था और चूंकि मृत वादी के विधिक प्रतिनिधियों (प्रत्यर्थियों) द्वारा ईप्सित वादपत्र में संशोधन ऐसा नहीं था जिसकी स्वयं मृत वादी मांग नहीं कर सकता था, इसलिए दोनों निचले न्यायालयों द्वारा अनुज्ञात संशोधन को गलत या अवैध नहीं कहा जा सकता है ।

मामले के तथ्यों के अनुसार, प्रत्यर्थियों के हित-पूर्वाधिकारी ज्ञान चंद ने तारीख 16 जनवरी, 1988 को इस आशय की घोषणा करने के लिए एक वाद फाइल किया कि वह मुहल उचर मौजा आम्ब, तहसील देहरा, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश में स्थित 3-39-48 हेक्टेयर माप की वादांतर्गत भूमि में एक-तिहाई हिस्से का स्वामी है और उसका संयुक्त कब्जा है तथा तारीख 16 फरवरी, 1981 की विल, जो वादी के मृत पिता श्री संत राम द्वारा प्रतिवादी सं. 1 के पक्ष में बनाई गई तात्पर्यित है, मिथ्या है और गढ़ी गई है तथा दुर्व्यपदेशन और प्रपीड़न के परिणामस्वरूप बनाई गई है तथा यह उत्तराधिकार के नैसर्गिक ढंग और कांगड़ा की रूढ़ि के भी विरुद्ध है तथा इससे मृतक की एक-तिहाई हिस्से की सीमा तक संपदा का उत्तरवर्ती होने का वादी का अधिकार प्रभावित नहीं होता है । वादी का यह पक्षकथन था कि वादांतर्गत भूमि वादी और प्रतिवादियों के पिता स्वर्गीय संत राम, जिसकी तारीख 17 नवम्बर, 1987 को मृत्यु हो गई थी, के स्वामित्व और कब्जे में थी और वादी (पुत्र) तथा प्रतिवादी (पुत्रियां) उत्तरजीवी हैं और

सभी तीनों उत्तराधिकारी समान हिस्से में मृतक की संपत्ति के उत्तरवर्ती होने के हकदार हैं । दोनों प्रतिवादियों ने वाद में लिखित कथन फाइल किया । प्रतिवादी सं. 1 ने वाद का विरोध किया, जबकि प्रतिवादी सं. 2 ने वादपत्र की अंतर्वस्तुओं को स्वीकार किया । मामला लंबित रहने के दौरान मूल वादी ज्ञान चंद की तारीख 22 जून, 1999 को मृत्यु हो गई । उसकी मृत्यु के पश्चात् ज्ञान चंद की दोनों विधवाओं रुको देवी और बाम्बी को वादियों के रूप में प्रतिस्थापित किया गया । उसके पश्चात् प्रतिस्थापित वादियों ने तारीख 22 फरवरी, 1999 को वादपत्र में संशोधन के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 151 के साथ पठित आदेश 6, नियम 17 के अधीन एक आवेदन फाइल किया । प्रस्थापित संशोधन यह था कि पैरा सं. 4-क द्वारा वादियों को यह बात जोड़ने के लिए अनुज्ञात किया जाए कि यदि वादी यह साबित करने में असफल रहते हैं कि पक्षकार अन्यसंक्रामण और उत्तराधिकार के विषय में कांगड़ा रूढ़ि द्वारा शासित हैं, तब उस दशा में पक्षकार हिंदू विधि (मिताक्षर) द्वारा शासित हैं और वादांतर्गत संपत्ति मृत संत राम के हाथ में पैतृक/सहदायिकी संपत्ति होने के कारण ज्ञान चंद पुत्र संत राम (जिसकी मृत्यु हो गई है) का वादांतर्गत भूमि में उसके जन्म से ही एक-तिहाई हिस्सा था और संत राम को ज्ञान चंद के हिस्से का विल या अन्यथा द्वारा उसका पुत्र होने के कारण अन्यसंक्रामण करने का कोई अधिकार नहीं था और यदि विल संत राम द्वारा निष्पादित की गई साबित की जाती है, तब भी ज्ञान चंद के अधिकारों पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता है और अब उसकी विधवाएं वादांतर्गत भूमि में सहदायिकी संपत्ति होने के कारण एक-तिहाई हिस्से की उत्तरवर्ती होंगी । प्रतिवादियों द्वारा इस आवेदन का उत्तर फाइल किया गया और प्रस्थापित संशोधन का इस आधार पर विरोध किया गया कि संशोधन अनुकल्पी अभिवाक् नहीं अपितु दावे का आधार-स्तंभ है, जिसका 11 वर्ष की अवधि के पश्चात् प्राख्यान किया जा रहा है और इसकी अनुज्ञा नहीं दी जा सकती है । तथापि, विचारण न्यायालय द्वारा यह संशोधन मंजूर किया गया । इस संशोधन को उच्च न्यायालय में पुनरीक्षण अर्जी फाइल करके चुनौती दी गई । तथापि, यह अर्जी वापस लेने के तौर पर खारिज कर दी गई । इसके पश्चात् प्रतिवादियों ने संशोधित वादपत्र के उत्तर में लिखित कथन फाइल किया । पुनः प्रतिवादी सं. 2 ने वादी का दावा स्वीकार किया, जबकि प्रतिवादी सं. 1 ने इसका गुणागुण के आधार पर विरोध किया । प्रतिवादी सं. 1 ने वादपत्र के संशोधित पैरा सं. 4-क के उत्तर में अपने लिखित

कथन में यह उल्लेख किया कि वादियों को, जिन्होंने स्वर्गीय ज्ञान चंद की विधवाएं होने का दावा किया है, विल को चुनौती देने या हिंदू विधि के आधार पर उत्तराधिकार का दावा करने के लिए कोई सुने जाने का अधिकार नहीं है क्योंकि दोनों ही विधवाओं का विवाह अवैध है चूंकि हिंदू विधि दो विवाहों को अनुज्ञा नहीं देती है । यह भी उल्लेख किया गया कि वादी ऐसा अभिवाक् और कोई नया पक्षकथन नहीं कर सकती है, जिसका उनके पूर्वाधिकारी अर्थात् मूल वादी ने गठन नहीं किया था । विचारण न्यायालय द्वारा वाद को वादी के पक्ष में भागतः डिक्रीत किया गया । विचारण न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध अपील फाइल की गई जो विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश, त्वरित न्यायालय, कांगड़ा, धर्मशाला द्वारा खारिज कर दी गई । विचारण न्यायालय और प्रथम अपील न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर उच्च न्यायालय में द्वितीय अपील फाइल की गई, जो विधि के इस सारवान् प्रश्न पर ग्रहण की गई कि क्या मूल वादी ज्ञान चंद की मृत्यु के पश्चात् ज्ञान चंद के विधिक उत्तराधिकारियों की प्रेरणा पर विचारण न्यायालय द्वारा उनको वादपत्र में संशोधन की मंजूरी देना अवैध था या नहीं ? उच्च न्यायालय द्वारा द्वितीय अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – इस न्यायालय को इस बात पर विचार करना है कि क्या जो संशोधन विद्वान् निचले न्यायालय द्वारा मंजूर किया गया था वह प्रस्तुत मामले में विधि के अनुसार अनुज्ञेय था या नहीं ? जो अभिवाक् वादपत्र में पैरा सं. 4-क जोड़कर सम्मिलित किए जाने के लिए अनुज्ञात किया गया था, वह अन्य बातों के साथ-साथ इस आशय का था कि यदि पक्षकार यह साबित करने में असफल रहते हैं कि वे अन्यसंक्रामण के विषय में कांगड़ा रूढ़ि द्वारा शासित हैं, तब उस दशा में पक्षकार हिंदू विधि (मिताक्षर) द्वारा शासित हैं और वादांतर्गत संपत्ति मृत संत राम के हाथों में सहदायिकी संपत्ति होने के कारण उसके पुत्र ज्ञान चंद का वादांतर्गत भूमि में उसके जन्म से ही एक-तिहाई हिस्सा था और मृत संत राम को अपने पुत्र के इस हिस्से को अन्यसंक्रामण करने का कोई अधिकार नहीं था । इस न्यायालय के सुविचारित मत में, तनिक संदेह के बिना यह कहा जा सकता है कि यह अभिवाक् ज्ञान चंद को अपनी वादी की हैसियत के नाते उपलब्ध नहीं था, चाहे उसने यह अभिवाक् वाद फाइल करने के समय किया था या नहीं, यह एक अलग मुद्दा है । इस न्यायालय के सुविचारित मत में, यदि ज्ञान चंद की ऐसी इच्छा रही होती, तो वह बहुत आसानी से एक आनुकल्पिक अभिवाक् के रूप में यह अभिवाक् कर सकता था । यह स्थिर

विधि है कि जब वाद के किसी पक्षकार की मृत्यु हो जाती है, तो विधिक प्रतिनिधियों को यह सुनिश्चित करने के लिए नियुक्त किया जाता है कि वाद को अग्रसर किया जा सके और एक विनिश्चय पर पहुंचा जा सके । यह मूल पक्षकारों का अधिकार है जिस पर विचार किया जाना होता है, न कि विधिक प्रतिनिधियों का । इसलिए वह व्यक्ति, जिसे मृत पक्षकार के विधिक प्रतिनिधि के रूप में पक्षकार बनाया जाता है, केवल ऐसे आक्षेप कर सकता है जो स्वयं मृत पक्षकार द्वारा किए जा सकते थे । अतः, कसौटी यह है कि जहां ईप्सित संशोधन ऐसा है जिसकी स्वयं मृत वादी द्वारा मांग नहीं की जा सकती थी, तब उसके विधिक प्रतिनिधि उस संशोधन की मांग नहीं कर सकते हैं । इस न्यायालय के सुविचारित मत में, प्रत्यर्थियों द्वारा ईप्सित और विद्वान् निचले न्यायालयों द्वारा अनुज्ञात संशोधन ऐसा नहीं था जिसकी स्वयं मृत वादी मांग नहीं कर सकता था । इसलिए विद्वान् निचले न्यायालय द्वारा संशोधन को ठीक ही मंजूर किया गया था और इसे विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा गलत या अवैध रूप से मंजूर किया गया नहीं कहा जा सकता है । (पैरा 21, 22, 23 और 24)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1975]	आई. एल. आर. हिमाचल सिरीज 1975, पृष्ठ 375 : **श्रीमती अमर देवी** बनाम **श्रीमती शकुंतला देवी** ।	14

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2006 की राजस्व द्वितीय अपील सं. 224.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन द्वितीय अपील ।

अपीलार्थी की ओर से	सर्वश्री के. डी. सूद, ज्येष्ठ अधिवक्ता और रंजीत के. लाल
प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 की ओर से	श्री अजय शर्मा
प्रत्यर्थी सं. 3 की ओर से	श्री राजेश वर्मा (श्री राजिन्द्र डोगरा के स्थान पर)

न्यायमूर्ति अजय मोहन गोयल – यह अपील विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश, त्वरित न्यायालय, कांगड़ा, धर्मशाला द्वारा सिविल अपील सं. 157-जी/04/01 में, जिसका शीर्षक श्रीमती स्वर्णा देवी बनाम श्रीमती रुको और

अन्य था, तारीख 27 फरवरी, 2006 को पारित उस निर्णय और डिक्री के विरुद्ध फाइल की गई है, जिसके द्वारा विद्वान् अपील न्यायालय ने विद्वान् उप न्यायाधीश, प्रथम श्रेणी (1), देहरा द्वारा 1988 के सिविल वाद सं. 25, जिसका शीर्षक ज्ञान चंद बनाम स्वर्णा देवी और अन्य था, में तारीख 23 अक्तूबर, 2000 को पारित निर्णय और डिक्री की अभिपुष्टि की थी ।

2. यह अपील तारीख 27 फरवरी, 2007 को विधि के निम्नलिखित सारवान् प्रश्न पर ग्रहण की गई :–

> "क्या मूल वादी ज्ञान चंद की मृत्यु के पश्चात् ज्ञान चंद के विधिक उत्तराधिकारियों की प्रेरणा पर विचारण न्यायालय द्वारा उनको वादपत्र में इस पूर्ववर्ती अभिवाक् को कि पक्षकार अन्यसंक्रामण और उत्तराधिकार के मामले में रूढ़ि द्वारा शासित हैं, इस अभिवाक् द्वारा प्रतिस्थापित करने की अनुज्ञा देते हुए कि पक्षकार हिंदू हैं तथा वाद संपत्ति सहदायिकी संपत्ति है, संशोधन की मंजूरी देना अवैध था या नहीं ?"

3. वर्तमान प्रत्यर्थियों के हित-पूर्वाधिकारी ज्ञान चंद ने तारीख 16 जनवरी, 1988 को इस आशय की घोषणा करने के लिए एक वाद फाइल किया कि वह मुहल उचर मौजा आम्ब, तहसील देहरा, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश में स्थित 3-39-48 हेक्टेयर माप की वादांतर्गत भूमि में एक-तिहाई हिस्से का स्वामी है और उसका संयुक्त कब्जा है तथा तारीख 16 फरवरी, 1981 की विल, जो वादी के मृत पिता श्री संत राम द्वारा प्रतिवादी सं. 1 के पक्ष में बनाई गई तात्पर्यित है, मिथ्या है और गढ़ी गई है तथा दुर्व्यपदेशन और प्रपीड़न के परिणामस्वरूप बनाई गई है तथा यह उत्तराधिकार के नैसर्गिक ढंग और कांगड़ा की रूढ़ि के भी विरुद्ध है तथा इससे मृतक की एक-तिहाई हिस्से की सीमा तक संपदा का उत्तरवर्ती होने का वादी का अधिकार प्रभावित नहीं होता है । उसने प्रतिवादी सं. 1 को वादांतर्गत भूमि की प्रकृति को किसी रीति में परिवर्तित करने, वादांतर्गत भूमि से कोई वृक्ष काटने, गिराने, हटाने और विक्रय, दान या बंधक अथवा किसी अन्य रीति में वादांर्तगत भूमि के किसी भाग का अन्यसंक्रामण करने से अवरुद्ध करने के लिए स्थायी व्यादेश की डिक्री पारित करने की भी प्रार्थना की ।

4. वादी का पक्षकथन यह था कि वादांतर्गत भूमि, वादी और प्रतिवादियों के पिता स्वर्गीय संत राम, जिसकी तारीख 17 नवम्बर, 1987 को मृत्यु हो गई थी, के स्वामित्व और कब्जे में थी और वादी (पुत्र) तथा

प्रतिवादी (पुत्रियां) उत्तरजीवी हैं और सभी तीनों उत्तराधिकारी समान हिस्से में मृतक की संपत्ति के उत्तरवर्ती होने के हकदार हैं । उसने यह भी उल्लेख किया कि प्रतिवादी सं. 1 बहुत ही चतुर महिला है और उसने एक मिथ्या और गढ़ी हुई विल बनाई है, जो मृतक संत राम द्वारा अपनी संपूर्ण संपत्ति की बाबत उसके पक्ष में निष्पादित की गई तात्पर्यित है । वादी ने आगे यह प्रतिवाद किया कि यदि यह साबित किया जाता है कि उक्त विल संत राम द्वारा निष्पादित की गई थी, तो भी यह कपट, दुर्व्यपदेशन और प्रपीड़न के परिणामस्वरूप बनाई गई थी और इससे वादांतर्गत भूमि में एक-तिहाई हिस्से की सीमा तक वादी के उत्तरवर्ती होने का अधिकार प्रभावित नहीं होता है । यह भी उल्लेख किया गया कि यदि यह साबित किया जाता है कि मृतक द्वारा विल अपनी स्वतंत्र इच्छा से निष्पादित की गई थी, तो भी इस बात से वादांतर्गत भूमि के एक-तिहाई हिस्से की सीमा तक वादी के उत्तरवर्ती होने का अधिकार प्रभावित नहीं होता है क्योंकि मृत (संत राम) से संबंधित भूमि पैतृक थी और पक्षकार, जो गिरथ जाति के हैं, उत्तराधिकार और अन्यसंक्रामण के मामले में कांगड़ा रूढ़ि द्वारा शासित हैं, जिसके अनुसार कोई पुरुष सदस्य अपने पुरुष पारंपरिक वंशज का अपवर्जन करके अपनी संपत्ति का अन्यसंक्रामण नहीं कर सकता है । इसलिए, वादी के अनुसार, भले ही यह साबित किया जाता है कि विल सम्यक् रूप से निष्पादित की गई थी, तो भी इससे वादांतर्गत भूमि में एक-तिहाई हिस्से की सीमा तक वादी के उत्तरवर्ती होने का अधिकार प्रभावित नहीं होता है ।

5. दोनों प्रतिवादियों ने वाद में लिखित कथन फाइल किया । प्रतिवादी सं. 1 ने वाद का विरोध किया, जबकि प्रतिवादी सं. 2 ने वादपत्र की अंतर्वस्तुओं को स्वीकार किया । प्रतिवादी सं. 1 ने अपने लिखित कथन में इस बात से इनकार किया कि वादी और प्रतिवादी मृत संत राम के उत्तरजीवी हैं या सभी तीनों उत्तराधिकारी मृत की संपत्ति में समान हिस्से में उत्तरवर्ती होने के हकदार हैं । उक्त प्रतिवादी ने इस बात से भी इनकार किया कि उसने एक चतुर महिला होने के कारण मृत संत राम द्वारा निष्पादित एक मिथ्या और तुच्छ विल बनाई है । प्रतिवादी सं. 1 के अनुसार, मृत संत राम की पुत्री होने के कारण वह उसके साथ रहती थी और खेती करने में उसकी सहायता करती थी और उसने उसकी सेवा की थी और तद्नुसार मृत ने अपनी स्वतंत्र इच्छा से पार्श्व-साक्षियों की मौजूदगी में तारीख 16 फरवरी, 1981 को उसके पक्ष में एक रजिस्ट्रीकृत विल निष्पादित की थी । उसने इस बात से भी इनकार किया कि मृत से

संबंधित वादांतर्गत भूमि पैतृक है और वाद के पक्षकार, या वे उत्तराधिकार और अन्यसंक्रामण के विषय में कांगड़ा रूढ़ि द्वारा शासित हैं । प्रतिवादी सं. 1 के अनुसार, मृत संत राम को अपनी संपत्ति का उस रीति में अन्यसंक्रामण करने का पूरा अधिकार था, जिसमें वह चाहते थे । प्रतिवादी सं. 1 ने इस बात से भी इनकार किया कि कोई पुरुष सदस्य पारंपरिक पुरुष वंशज का अपवर्जन करके अपनी पैतृक संपत्ति का अन्यसंक्रामण नहीं कर सकता है । यह लिखित कथन तारीख 24 मई, 1998 का है ।

6. मामला लंबित रहने के दौरान मूल वादी ज्ञान चंद की तारीख 22 जून, 1999 को मृत्यु हो गई । उसकी मृत्यु के पश्चात् ज्ञान चंद की दोनों विधवाओं रुको देवी और बाम्बी को वादियों के रूप में प्रतिस्थापित किया गया ।

7. उसके पश्चात् प्रतिस्थापित वादियों ने तारीख 22 फरवरी, 1999 को वादपत्र में संशोधन के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के साथ पठित आदेश 6 नियम 17 के अधीन एक आवेदन फाइल किया । प्रस्थापित संशोधन यह था कि पैरा सं. 4-क द्वारा वादियों को यह बात जोड़ने के लिए अनुज्ञात किया जाए कि यदि वादी यह साबित करने में असफल रहते हैं कि पक्षकार अन्यसंक्रामण और उत्तराधिकार के विषय में कांगड़ा रूढ़ि द्वारा शासित हैं, तब उस दशा में पक्षकार हिंदू विधि (मिताक्षर) द्वारा शासित हैं और वादांतर्गत संपत्ति मृत संत राम के हाथ में पैतृक/सहदायिकी संपत्ति होने के कारण ज्ञान चंद पुत्र संत राम (जिसकी मृत्यु हो गई है) का वादांतर्गत भूमि में उसके जन्म से ही एक-तिहाई हिस्सा था और संत राम को ज्ञान चंद के हिस्से का विल या अन्यथा द्वारा उसका पुत्र होने के कारण अन्यसंक्रामण करने का कोई अधिकार नहीं था और यदि विल संत राम द्वारा निष्पादित की गई साबित की जाती है, तब भी ज्ञान चंद के अधिकारों पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता है और अब उसकी विधवाएं वादांतर्गत भूमि में सहदायिकी संपत्ति होने के कारण एक-तिहाई हिस्से की उत्तरवर्ती होंगी ।

8. इस आवेदन का उत्तर फाइल किया गया और प्रस्थापित संशोधन का इस आधार पर विरोध किया गया कि संशोधन अनुकल्पी अभिवाक् नहीं अपितु दावे का आधार-स्तंभ है, जिसका 11 वर्ष की अवधि के पश्चात् प्राख्यान किया जा रहा है और इसकी अनुज्ञा नहीं दी जा सकती है । तथापि, यह संशोधन तारीख 26 अक्तूबर, 1999 के आदेश द्वारा मंजूर किया गया ।

9. वर्तमान अपीलार्थी द्वारा इस संशोधन को इस न्यायालय के समक्ष 1999 की सिविल पुनरीक्षण आवेदन सं. 318 फाइल करके चुनौती दी गई । यह पुनरीक्षण आवेदन, वापिस लेने के तौर पर, निम्नलिखित आदेश द्वारा खारिज कर दी गई :–

> "सुनवाई के दौरान आवेदक की ओर से विद्वान् काउंसेल ने वर्तमान आवेदन में, अंतर्वलित विवाद्यक को अपील, यदि ऐसा अवसर आता है, में उठाने की स्वतंत्रता के साथ वापस लेने की इजाजत के लिए अनुरोध किया है । इजाजत दी जाती है । वर्तमान आवेदन, वापस लेने के तौर पर, खारिज किया जाता है ।
>
> **सिविल प्रकीर्ण याचिका सं. 334/1999**
>
> तारीख 13 दिसम्बर, 1999 का अंतरिम आदेश बातिल किया जाता है ।"

10. उसके पश्चात् प्रतिवादियों ने संशोधित वादपत्र का लिखित कथन फाइल किया । पुनः प्रतिवादी सं. 2 ने वादी का दावा स्वीकार किया, जबकि प्रतिवादी सं. 1 ने इसका गुणागुण के आधार पर विरोध किया । संशोधित लिखित कथन तारीख 31 जनवरी, 2000 का है । प्रतिवादी सं. 1 ने वादपत्र के संशोधित पैरा सं. 4-क के उत्तर में अपने लिखित कथन में यह उल्लेख किया कि वादियों को, जिन्होंने स्वर्गीय ज्ञान चंद की विधवाएं होने का दावा किया है, विल को चुनौती देने या हिंदू विधि के आधार पर उत्तराधिकार का दावा करने के लिए कोई सुने जाने का अधिकार नहीं है । यह उल्लेख किया गया कि दोनों ही विधवाओं का विवाह अवैध है । हिंदू विधि दो विवाहों को अनुज्ञा नहीं देती है । यह भी उल्लेख किया गया कि वादी ऐसा अभिवाक् और कोई नया पक्षकथन नहीं कर सकती हैं, जिसका उनके पूर्वाधिकारी अर्थात् मूल वादी ने गठन नहीं किया था । प्रतिवादी सं. 1 ने उसमें इस बात से इनकार किया कि वादांतर्गत भूमि सहदायिकी संपत्ति है । यह उल्लेख किया गया कि मृत ज्ञान चंद अपने विवाह के ठीक पश्चात् वर्ष 1959-60 में अपने पिता से अलग हो गया था और संपत्ति में अपने दावाकृत हिस्से के बजाय वादांतर्गत भूमि पर कभी काबिज नहीं रहा था । आगे यह उल्लेख किया गया कि वादांतर्गत भूमि में हिस्सा लेने के लिए वर्ष 1963 में ज्ञान चंद की विधवा रुको ने मृत संत राम के विरुद्ध अपने पति ज्ञान चंद के साथ मौनानुकूलता में भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 376 के अधीन एक आपराधिक मामला भी फाइल किया था । यह उल्लेख किया गया कि प्रतिवादी सं. 1 अपने पति की मृत्यु के पश्चात् वर्ष

1962 से मृत के मकान में रह रही है और संपत्ति की देखरेख कर रही है । आगे यह भी उल्लेख किया गया कि यदि वादांतर्गत भूमि सहदायिकी संपत्ति होना साबित किया जाता है, तो भी वादांतर्गत भूमि प्रतिवादी सं. 1 के प्रतिकूल कब्जे में है और उससे पूर्व संत राम, जिसने ज्ञान चंद के दावे से इनकार किया था, जनवरी, 1963 से खुले तौर पर प्रतिकूल आशय के साथ, ज्ञान चंद की जानकारी में, संत राम के कब्जे में थी ।

11. विद्वान् निचले न्यायालय ने अभिवचनों और अभिलेख पर के साक्ष्य के आधार पर निम्नलिखित निबंधनों में वाद भागतः वादी के पक्ष में डिक्री किया :–

> "वादी का वाद भागतः सफल होता है । वादी को वादांतर्गत भूमि में एक-तिहाई हिस्से की सीमा तक खसरा सं. 578 और 579 के सिवाय स्वामी घोषित किया जाता है । संयुक्त कब्जे के लिए भी एक डिक्री वादी के पक्ष में और प्रतिवादी सं. 1 के विरुद्ध पारित की जाती है । पारिणामिक अनुतोष के तौर पर, प्रतिवादी सं. 1 को वादांतर्गत भूमि की प्रकृति और स्वरूप में उस समय तक परिवर्तन करने से अवरुद्ध करते हुए, जब तक कि भूमि का विधि के अनुसार विभाजन नहीं हो जाता है, वादी के पक्ष में स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश के लिए भी एक डिक्री पारित की जाती है । पक्षकार अपना-अपना खर्च स्वयं वहन करेंगे ।"

12. वर्तमान अपीलार्थी ने व्यथित होकर अपील फाइल की, जो विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश, त्वरित न्यायालय, कांगड़ा, धर्मशाला द्वारा तारीख 27 फरवरी, 2006 को खारिज कर दी गई । विद्वान् अपील न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि विद्वान् निचले न्यायालय ने ठीक ही यह निष्कर्ष निकाला है कि वादपत्र में दिए गए दो खसरा संख्यांकों अर्थात् खसरा सं. 578 और 579 के अंतर्गत आने वाली भूमि के सिवाय शेष वादांतर्गत भूमि संत राम और ज्ञान चंद के मध्य सहदायिकी संपत्ति थी और वादी को संयुक्त सहदायिकी संपत्ति में अपने उस हिस्से के लिए हकदार माना जाएगा जो संत राम की मृत्यु के समय तुरंत उसके पास आ गई थी, क्योंकि संत राम की मृत्यु के पश्चात् सहदायिकी का अंत हो गया था । विद्वान् अपील न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि वादी ने केवल एक-तिहाई हिस्से का दावा यह कथन करते हुए किया है कि वह वादांतर्गत संपत्ति में एक-तिहाई हिस्से का हकदार है और विद्वान् विचारण न्यायालय ने ठीक ही यह अभिनिर्धारित किया है कि वादी ने उस हिस्से से अधिक

का दावा नहीं किया है जिसके लिए वह हकदार नहीं है और यह अभिनिर्धारित करते हुए वादी को ठीक ही अनुतोष प्रदान किया गया है कि वह वादांतर्गत भूमि में, खसरा सं. 578 और 579 में समाविष्ट भूमि के सिवाय, एक-तिहाई हिस्से का हकदार है ।

13. इन परिस्थितियों में ही इस न्यायालय के समक्ष वर्तमान अपील फाइल की गई है, जो ऊपर पहले ही वर्णित विधि के सारवान् प्रश्न पर ग्रहण की गई है ।

14. अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल, श्री के. डी. सूद ने जोरदार रूप से यह तर्क दिया कि दोनों विद्वान् निचले न्यायालयों ने वादी के पक्ष में भागतः वाद को डिक्री करके गलती की है और इस बात का मूल्यांकन नहीं किया कि प्रतिवादी सं. 1 द्वारा संशोधन के रूप में वादपत्र में पैरा 4-क पुरःस्थापित करके जो अभिवाक् किया गया था, वह गलत था और विधि के अनुसार अनुज्ञेय नहीं था । श्री सूद की दलील यह है कि मूल वाद वर्ष 1988 में फाइल किया गया था और उस समय जब वाद फाइल किया गया था, तब मूल वादी ज्ञान चंद था । उसके द्वारा फाइल किए गए मूल वाद में संपत्ति के सहदायिकी होने का उसके द्वारा कभी अभिवाक् नहीं किया गया था । उसकी तारीख 23 मई, 1999 को मृत्यु हो गई । उसकी मृत्यु के पश्चात् ही उसकी दो विधवाएं मूल वादी के स्थान पर वादियों के रूप में अभिलेख पर आईं । श्री सूद का यह कहना है कि विधि का यह स्थिर सिद्धांत है कि कोई विधिक उत्तराधिकारी कोई ऐसा अभिवाक् नहीं कर सकता जो उसके हित-पूर्वाधिकारी को उपलभ्य न हो । दूसरे शब्दों में, उनके अनुसार, जो व्यक्ति मृत के विधिक प्रतिनिधि के रूप में पक्षकार बनाया जाता है, वह केवल वैसा ही आक्षेप कर सकता है जो स्वयं मृत पक्षकार द्वारा किया जा सकता था । श्री सूद ने **श्रीमती अमर देवी** बनाम **श्रीमती शकुंतला देवी**[1] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा पारित किए गए निर्णय का जोरदार रूप से अवलंब लिया । श्री सूद ने इस निर्णय के आधार पर यह दलील दी कि एकमात्र वादी की मृत्यु हो जाने के मामले में जहां वाद लाने का अधिकार बचा रहता है और विधिक प्रतिनिधि को पक्षकार बनाया जाता है और वह वाद को अग्रसर करता है तो वह ऐसा कोई अभिवाक् नहीं कर सकता जो उसे अपनी हैसियत के अनुकूल लगता हो । उपधारणा यह है कि उसका अभिवाक् उस अभिवाक् तक ही सीमित

---

[1] आई. एल. आर. हिमाचल सिरीज 1975, पृष्ठ 375.

रहता है, जो अभिवाक् मृत वादी करने के लिए स्वतंत्र था । इसलिए इन आधारों पर विद्वान् काउंसेल ने जोरदार रूप से यह तर्क दिया कि विद्वान् निचले न्यायालयों द्वारा प्रत्यर्थियों के पक्ष में पारित निर्णय और डिक्रियां विधि के अनुसार संधार्य नहीं हैं और अपास्त किए जाने योग्य हैं । श्री सूद के अनुसार, मृत ज्ञान चंद के विधिक प्रतिनिधियों को वादपत्र संशोधित किए जाने की मंजूरी देते हुए जो अभिवाक् किए जाने के लिए अनुज्ञात किया गया था, वह अभिवाक् ज्ञान चंद को उपलब्ध नहीं था । दोनों विद्वान् निचले न्यायालयों द्वारा मामले के इस पहलू की पूर्णतः अनदेखी की गई है । दोनों निचले न्यायालयों में से किसी के द्वारा भी इस बात का मूल्यांकन नहीं किया गया कि ज्ञान चंद के विधिक उत्तराधिकारी विधि के अनुसार ऐसा कोई अभिवाक् नहीं कर सकते थे जो ज्ञान चंद को उपलब्ध नहीं था । श्री सूद ने आगे यह तर्क दिया कि यदि यह धारणा की जाती है कि अन्यसंक्रामण दूषित था, तब इसे चुनौती देने की परिसीमा तीन वर्ष थी । उन्होंने यह दलील दी कि ज्ञान चंद की मृत्यु तारीख 23 मई, 1999 को हुई थी । जब तक ज्ञान चंद जीवित था, उसने कदापि यह आधार नहीं लिया कि वादांतर्गत भूमि सहदायिकी संपत्ति थी, इसलिए यह अभिवाक् जो उसके विधिक प्रतिनिधियों द्वारा वादपत्र में संशोधन सम्मिलित करके किया गया था, वह एक नया और अतिरिक्त अभिवाक् था जो अन्यथा ज्ञान चंद को उपलब्ध नहीं था ।

15. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल, श्री अजय शर्मा ने यह तर्क दिया कि दोनों विद्वान् निचले न्यायालयों द्वारा पारित निर्णयों और डिक्रियों में कोई कमी नहीं है और वर्तमान अपील में कोई गुणागुण नहीं है । उन्होंने यह भी तर्क दिया कि जो पक्षकथन अब अपील में गठित किया जा रहा है वह न तो संशोधित वादपत्र के उत्तर में फाइल किए गए लिखित कथन और न ही प्रथम अपील न्यायालय के समक्ष फाइल की गई अपील के आधारों से प्रकट होता है । उनके अनुसार, आदेश 6, नियम 17 इतना संकीर्ण नहीं है जितना कि अपीलार्थी द्वारा प्रदर्शित करने की कोशिश की जा रही है । इसलिए उन्होंने यह दलील दी कि वास्तव में जब वादियों को वादपत्र संशोधित करने के लिए अनुज्ञात किया गया था तब कोई अवैधता कारित नहीं हुई थी और दोनों विद्वान् निचले न्यायालयों द्वारा पारित निर्णयों और डिक्रियों में भी कोई गलती नहीं है ।

16. मैंने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुना और मामले के अभिलेखों का भी परिशीलन किया ।

17. विद्वान् निचला न्यायालय अभिलेख पर के अभिवचनों के आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि अभिलेख पर यह साबित होता है कि खसरा सं. 578 और 579 में सम्मिलित भूमि के सिवाय शेष वादांतर्गत भूमि संत राम द्वारा अपने पिता से विरासत में प्राप्त की गई थी और इसलिए वह भूमि वादी के संबंध में उसके हाथों में पैतृक और सहदायिकी संपत्ति थी । विद्वान् विचारण न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि यह सुस्थिर विधि है कि सहदायिकी संयुक्त कुटुम्ब में सहदायिकी संपत्ति में अपने जन्म से ही हित अर्जित करता है । आगे यह अभिनिर्धारित किया गया कि सहदायिकी संपत्ति के अंतिम धारक संत राम की अपने पीछे एक पुत्र और दो पुत्रियों को छोड़कर तारीख 17 नवम्बर, 1987 को मृत्यु हो गई थी । इसलिए उसकी मृत्यु के समय सहदायिकी में मृत संत राम और उसका पुत्र ज्ञान चंद समाविष्ट थे । क्योंकि संत राम की अपने पीछे दो पुत्रियों को छोड़कर, जो श्रेणी-1 की उत्तराधिकारी थी, मृत्यु हो गई थी, इसलिए सहदायिकी संपत्ति में उसका हित उत्तरजीविता के द्वारा वादी पर न्यागत नहीं हुआ अपितु वह हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम में अंतर्विष्ट उपबंधों के अनुसार वसीयती या निर्वसीयत उत्तराधिकार द्वारा न्यागत होना था । यह भी अभिनिर्धारित किया कि उसकी मृत्यु के समय सहदायिकी संपत्ति में संत राम का हित कल्पित विभाजन के द्वारा सहदायिकी संपत्ति में आधा हिस्सा उसके हाथों में आया था । इसलिए हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 30 के उपबंधों को ध्यान में रखते हुए मृत संत राम सहदायिकी संपत्ति में अपने आधे हिस्से को विल के द्वारा वसीयत करने के लिए सक्षम था । तथापि, वादांतर्गत भूमि में शेष आधा हिस्सा वादी का था और संत राम विल या अन्य वसीयती व्ययन द्वारा इसकी वसीयत करने के लिए सक्षम नहीं था । आगे यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि खसरा सं. 578 और 579 में की भूमि सहदायिकी संपत्ति होना साबित नहीं होता है और इसलिए वादी उक्त भूमि के संबंध में कोई शिकायत करने का हकदार नहीं है । अतः, विद्वान् निचले न्यायालय ने उक्त निष्कर्षों के आधार पर पहले ही ऊपर वर्णित निबंधनों के अनुसार वाद को भागतः डिक्रीत किया ।

18. वर्तमान अपीलार्थी द्वारा विद्वान् निचले न्यायालय के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध फाइल की गई अपील में विभिन्न आधार लिए गए । यह

उल्लेखनीय है कि अपीलार्थी ने विद्वान् निचले न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को, अन्य बातों के साथ-साथ, इन आधारों पर चुनौती दी थी कि विद्वान् निचले न्यायालय ने गलत रूप से यह अभिनिर्धारित किया कि मृत ज्ञान चंद की विधवाएं सहदायिक हैं, चूंकि ज्ञान चंद ने वादांतर्गत भूमि में अपने दावे को कभी भी सहदायिक के रूप में आधारित नहीं किया था और विधिक प्रतिनिधि उन अधिकारों और निरर्हताओं का दावा नहीं कर सकते हैं, जिनका ज्ञान चंद द्वारा अभिवाक् नहीं किया गया था और वे केवल ऐसे आक्षेप कर सकते हैं जो स्वयं मृत द्वारा किए जा सकते थे, क्योंकि महिला, पुरुष के अन्यसंक्रामण को चुनौती नहीं दे सकती है । तथापि, हैरानी की बात है, विद्वान् निचले न्यायालय द्वारा मंजूर किए गए वादपत्र के संशोधन का मुद्दा त्रुटिपूर्वक या गलती से या अवैध रूप से अपील के आधारों में नहीं उठाया गया था ।

19. दूसरे शब्दों में, जो अभिवाक् विधि के सारवान् प्रश्न के रूप में किया गया है और जिसे इस न्यायालय द्वारा विरचित किया गया है, वह वास्तव में विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय के समक्ष किया ही नहीं गया था । ज्ञान चंद के विधिक प्रतिनिधियों को वादपत्र संशोधित किए जाने की अनुज्ञा वर्ष 1999 में दी गई थी । आदेश 6, नियम 17 के उपबंध, जो उस सुसंगत समय पर विद्यमान थे, निम्न प्रकार से हैं :–

> "17. **अभिवचन का संशोधन** – न्यायालय दोनों में से किसी भी पक्षकार को कार्यवाहियों के किसी भी प्रक्रम में अनुज्ञा दे सकेगा कि वह अपने अभिवचनों को ऐसी रीति और ऐसे निबंधनों पर, जो न्यायसंगत हों, परिवर्तित करे या संशोधित करे और सभी ऐसे संशोधन किए जाएंगे जो पक्षकारों के बीच में विवादग्रस्त वास्तविक प्रश्नों के अवधारण के प्रयोजन के लिए आवश्यक हों ।"

20. सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22, नियम 3 और आदेश 22, नियम 4 के उपबंधों पर भी ध्यान देना संगत है । सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22, नियम 3 में, अन्य बातों के साथ-साथ, यह उपबंध है कि जहां एकमात्र वादी या एकमात्र उत्तरजीवी वादी की मृत्यु हो जाती है और वाद लाने का अधिकार बचा रहता है, वहां इस निमित्त आवेदन किए जाने पर न्यायालय मृत वादी के विधिक प्रतिनिधियों को पक्षकार बनवाएगा और वाद में अग्रसर होगा । सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22, नियम 4 में यह परिकल्पित है कि जहां एकमात्र प्रतिवादी या एकमात्र उत्तरजीवी प्रतिवादी

की मृत्यु हो जाती है और वाद लाने का अधिकार बचा रहता है, वहां उस निमित्त किए गए आवेदन पर न्यायालय मृत प्रतिवादी के विधिक प्रतिनिधियों को पक्षकार बनवाएगा और वाद में अग्रसर होगा । आदेश 22, नियम 4(2) में आगे यह उपबंध है कि इस प्रकार पक्षकार बनाया गया कोई भी व्यक्ति मृत प्रतिवादी के विधिक प्रतिनिधि के नाते अपनी हैसियत के लिए समुचित प्रतिरक्षा कर सकेगा । यह उपबंध आदेश 22, नियम 3 में अनुध्यात नहीं है । किंतु वास्तविकता यह है कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 6 नियम 17 में पक्षकारों को अभिवचनों में संशोधन करने की अनुज्ञा दी गई है । अभिवचनों में वादपत्र तथा लिखित कथन दोनों सम्मिलित हैं । आदेश 22, नियम 3 में ऐसी कोई अभिव्यक्त वर्जना नहीं है कि एकमात्र मृत वादी का विधिक प्रतिनिधि वादपत्र के संशोधन के लिए आवेदन नहीं कर सकता हो । आदेश 22, नियम 3 और आदेश 22, नियम 4 के उपबंधों के सामंजस्यपूर्ण वाचन के पश्चात् केवल जो निष्कर्ष निकाला जा सकता है, वह यह है कि कोई व्यक्ति जिसे किसी मृत प्रतिवादी के विधिक उत्तराधिकारी के रूप में पक्षकार बनाया गया है, मृत प्रतिवादी के विधिक प्रतिनिधि के नाते अपनी हैसियत के लिए समुचित कोई प्रतिरक्षा कर सकेगा, जबकि यह परमाधिकार वादी को उपलब्ध नहीं है । मेरे सुविचारित मत में, ऐसा ठीक ही उपबंध किया गया है क्योंकि मृत वादी (वादियों) का विधिक प्रतिनिधि उस वाद में, जो वादी द्वारा फाइल किया गया था, को अग्रसर करने के लिए वादी के प्रथम कदम में प्रविष्ट करता है । दूसरे शब्दों में, प्रतिवादी (प्रतिवादियों) के विधिक उत्तराधिकारी को न केवल मृत के हित की प्रतिरक्षा करनी होती है अपितु उसे स्वयं अपने हित की भी प्रतिरक्षा करनी होती है ।

21. इस पृष्ठभूमि में, इस न्यायालय को इस बात पर विचार करना है कि क्या जो संशोधन विद्वान् निचले न्यायालय द्वारा मंजूर किया गया था वह प्रस्तुत मामले में विधि के अनुसार अनुज्ञेय था या नहीं ? जो अभिवाक् वादपत्र में पैरा सं. 4-क जोड़कर सम्मिलित किए जाने के लिए अनुज्ञात किया गया था, वह अन्य बातों के साथ-साथ इस आशय का था कि यदि पक्षकार यह साबित करने में असफल रहते हैं कि वे अन्यसंक्रामण के विषय में कांगड़ा रूढ़ि द्वारा शासित हैं, तब उस दशा में पक्षकार हिंदू विधि (मिताक्षर) द्वारा शासित हैं और वादांतर्गत संपत्ति मृत संत राम के हाथों में सहदायिकी संपत्ति होने के कारण उसके पुत्र ज्ञान चंद का वादांतर्गत भूमि में उसके जन्म से ही एक-तिहाई हिस्सा था और मृत संत राम को अपने

पुत्र के इस हिस्से को अन्यसंक्रामण करने का कोई अधिकार नहीं था ।

22. मेरे सुविचारित मत में, तनिक संदेह के बिना यह कहा जा सकता है कि यह अभिवाक् ज्ञान चंद को अपनी वादी की हैसियत के नाते उपलब्ध नहीं था, चाहे उसने यह अभिवाक् वाद फाइल करने के समय किया था या नहीं, यह एक अलग मुद्दा है । मेरे सुविचारित मत में, यदि ज्ञान चंद की ऐसी इच्छा रही होती, तो वह बहुत आसानी से एक आनुकल्पिक अभिवाक् के रूप में यह अभिवाक् कर सकता था ।

23. यह स्थिर विधि है कि जब वाद के किसी पक्षकार की मृत्यु हो जाती है, तो विधिक प्रतिनिधियों को यह सुनिश्चित करने के लिए नियुक्त किया जाता है कि वाद को अग्रसर किया जा सके और एक विनिश्चय पर पहुंचा जा सके । यह मूल पक्षकारों का अधिकार है जिस पर विचार किया जाना होता है, न कि विधिक प्रतिनिधियों का । इसलिए वह व्यक्ति, जिसे मृत पक्षकार के विधिक प्रतिनिधि के रूप में पक्षकार बनाया जाता है, केवल ऐसे आक्षेप कर सकता है जो स्वयं मृत पक्षकार द्वारा किए जा सकते थे । अतः, कसौटी यह है कि जहां ईप्सित संशोधन ऐसा है जिसकी स्वयं मृत वादी द्वारा मांग नहीं की जा सकती थी, तब उसके विधिक प्रतिनिधि उस संशोधन की मांग नहीं कर सकते हैं ।

24. मेरे सुविचारित मत में, प्रत्यर्थियों द्वारा ईप्सित और विद्वान् निचले न्यायालयों द्वारा अनुज्ञात संशोधन ऐसा नहीं था जिसकी स्वयं मृत वादी मांग नहीं कर सकता था । इसलिए विद्वान् निचले न्यायालय द्वारा संशोधन को ठीक ही मंजूर किया गया था और इसे विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा गलत या अवैध रूप से मंजूर किया गया नहीं कहा जा सकता है । विधि के सारवान् प्रश्न का भी तद्नुसार उत्तर दिया जाता है । मामले को इस दृष्टि से देखते हुए, वर्तमान अपील में कोई गुणागुण नहीं है ।

25. इस प्रकार, दोनों विद्वान् निचले न्यायालयों द्वारा पारित निर्णयों और डिक्रियों में कोई कमी नहीं है और यह अपील खारिज की जाती है । खर्चे के लिए कोई आदेश नहीं किया जाता है । अंतरिम आदेश, यदि कोई है, को भी बातिल किया जाता है ।

द्वितीय अपील खारिज की गई ।

जस.

गतांक से आगे.....

अनुसूची

(धारा 27 देखिए)

विश्वविद्यालय के परिनियम

कुलाधिपति :

1. (1) कुलाधिपति की नियुक्ति, साधारणतया शिक्षा और विशिष्टतया कृषि विज्ञान में ख्याति प्राप्त व्यक्तियों में से, बोर्ड द्वारा सिफारिश किए गए तीन से अन्यून व्यक्तियों के पैनल में से कुलाध्यक्ष द्वारा की जाएगी :

परंतु यदि कुलाध्यक्ष ऐसे सिफारिश किए गए व्यक्तियों में से किसी का अनुमोदन नहीं करता है तो वह बोर्ड से नई सिफारिशें मंगा सकेगा ।

(2) कुलाधिपति पांच वर्ष की अवधि तक पद धारण करेगा और पुन: नियुक्ति का पात्र नहीं होगा :

परंतु कुलाधिपति, आपवादिक परिस्थितियों में अपने पद पर तब तक बना रह सकेगा जब तक उसका उत्तराधिकारी अपना पद ग्रहण नहीं कर लेता है ।

कुलपति :

2. (1) कुलपति की नियुक्ति, खंड (2) के अधीन गठित समिति द्वारा सिफारिश किए गए तीन से अन्यून व्यक्तियों के पैनल में से कुलाध्यक्ष द्वारा की जाएगी ।

(2) खंड (1) में निर्दिष्ट समिति निम्नलिखित से मिलकर बनेगी :–

(i) सचिव, कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग, भारत सरकार – अध्यक्ष ;

(ii) सदस्य के रूप में कुलाधिपति का एक नामनिर्देशित जो संयोजक भी होगा ;

(iii) केन्द्रीय सरकार का एक नामनिर्देशिती ।

(3) कुलपति विश्वविद्यालय का पूर्णकालिक वैतनिक अधिकारी होगा ।

(4) कुलपति अपना पद ग्रहण करने की तारीख से पांच वर्ष की

अवधि तक या सत्तर वर्ष की आयु प्राप्त करने तक, इनमें से जो भी पहले हो, पद धारण करेगा और वह पांच वर्ष की और अवधि के लिए या जब तक वह सत्तर वर्ष की आयु प्राप्त नहीं कर लेता, पुन: नियुक्ति का पात्र होगा :

परंतु कुलपति आपवादिक परिस्थितियों में, एक वर्ष से अनधिक अवधि तक या जब तक कि उसका उत्तराधिकारी नियुक्त नहीं हो जाता है और वह अपना पद ग्रहण नहीं कर लेता है, अपने पद पर बना रह सकेगा ।

(5) कुलपति की उपलब्धियां और सेवा की अन्य शर्तें निम्नलिखित होंगी, अर्थात् :–

(i) कुलपति को केन्द्रीय सरकार द्वारा समय-समय पर नियत दर से मासिक वेतन और मकान किराया भत्ता से भिन्न भत्ते दिए जाएंगे और वह अपनी पदावधि के दौरान बिना किराया दिए सुसज्जित निवास-स्थान का हकदार होगा तथा ऐसे निवास-स्थान के रख-रखाव की बाबत कुलपति को कोई प्रभार नहीं देना होगा ;

(ii) कुलपति ऐसे सेवांत फायदों और भत्तों का हकदार होगा जो बोर्ड द्वारा कुलाध्यक्ष के अनुमोदन से समय-समय पर नियत किए जाएं :

परंतु जहां विश्वविद्यालय या उसके द्वारा चलाए जाने वाले किसी महाविद्यालय या संस्था का अथवा किसी अन्य विश्वविद्यालय या ऐसे अन्य विश्वविद्यालय द्वारा चलाए जाने वाले या उससे संबद्ध किसी संस्था का कर्मचारी कुलपति के रूप में नियुक्त किया जाता है, वहां उसे ऐसी भविष्य-निधि में जिसका वह सदस्य है, अभिदाय करते रहने के लिए अनुज्ञात किया जा सकेगा और विश्वविद्यालय उस भविष्य-निधि में ऐसे व्यक्ति के खाते में उसी दर से अभिदाय करेगा जिस दर से व्यक्ति कुलपति के रूप में अपनी नियुक्ति के ठीक पहले अभिदाय कर रहा था :

परंतु यह और कि जहां ऐसा कर्मचारी किसी पेंशन स्कीम का सदस्य रहा था, वहां विश्वविद्यालय ऐसी स्कीम में आवश्यक अभिदाय करेगा ;

(iii) कुलपति, भारत सरकार के सचिव की पंक्ति के समतुल्य अधिकारियों के लिए भारत सरकार द्वारा समय-समय पर नियत दर के अनुसार यात्रा और अन्य भत्ते प्राप्त करने का हकदार होगा । इसके अतिरिक्त वह पद ग्रहण करने तथा छोड़ने पर भारत सरकार के

सचिव की पंक्ति के समतुल्य अधिकारियों को यथा अनुज्ञेय स्थानांतरण यात्रा भत्ता और अन्य भत्ता प्राप्त करने का हकदार होगा ;

(iv) कुलपति किसी कलैंडर वर्ष में तीस दिन की दर से पूर्ण वेतन पर छुट्टी का हकदार होगा और छुट्टी को प्रत्येक वर्ष जनवरी तथा जुलाई के प्रथम दिन को पन्द्रह दिन की दो अर्धवार्षिक किस्तों में अग्रिम रूप से उसके खाते में जमा कर दिया जाएगा :

परंतु यदि कुलपति आधे वर्ष के चालू रहने के दौरान कुलपति का पद ग्रहण करता है या छोड़ता है तो छुट्टी को अनुपातत: सेवा के प्रत्येक संपूरित मास के लिए ढाई दिन की दर से जमा किया जाएगा ;

(v) कुलपति, उपखंड (iv) में निर्दिष्ट छुट्टी के अतिरिक्त सेवा के प्रत्येक संपूरित वर्ष के लिए बीस दिन की दर से अर्धवेतन छुट्टी का भी हकदार होगा । इस अर्धवेतन छुट्टी का उपभोग चिकित्सीय प्रमाणपत्र के आधार पर पूर्ण वेतन पर परिवर्तित छुट्टी के रूप में भी किया जा सकेगा । यदि परिवर्तित छुट्टी उपलब्ध है तो अर्धवेतन छुट्टी की दुगुनी मात्रा देय अर्धवेतन छुट्टी के प्रति विकलित की जाएगी ;

(vi) कुलपति, भारत सरकार के नियमों के अनुसार छुट्टी यात्रा रियायत और गृह यात्रा रियायत के लिए हकदार होगा ;

(vii) कुलपति, पद छोड़ने के समय भारत सरकार के नियमों के अनुसार छुट्टी नकदीकरण के फायदे का हकदार होगा ।

(6) यदि मृत्यु, पदत्याग के कारण या अन्यथा कुलपति का पद रिक्त हो जाता है अथवा यदि वह अस्वस्थता के कारण या किसी अन्य कारण से अपने कर्तव्यों का पालन करने में असमर्थ है तो, यथास्थिति, ज्येष्ठतम संकायाध्यक्ष या निदेशक, कुलपति के कर्तव्यों का तब तक पालन करेगा जब तक, यथास्थिति, नया कुलपति पद ग्रहण नहीं कर लेता या कुलपति अपने पद के कर्तव्य नहीं संभाल लेता ।

कुलपति की शक्तियां और कर्तव्य :

3. (1) कुलपति, बोर्ड, विद्या परिषद्, वित्त समिति, अनुसंधान परिषद् और विस्तारी शिक्षा परिषद् का पदेन अध्यक्ष होगा और कुलाधिपति की अनुपस्थिति में उपाधियां प्रदान करने के लिए आयोजित दीक्षांत समारोहों

की अध्यक्षता करेगा ।

(2) कुलपति, विश्वविद्यालय के किसी प्राधिकरण के किसी अधिवेशन में उपस्थित रहने और उसे संबोधित करने का हकदार होगा किन्तु वह उसमें मत देने का तब तक हकदार नहीं होगा जब तक वह ऐसे प्राधिकरण का सदस्य न हो ।

(3) कुलपति का यह देखना कर्तव्य होगा कि इस अधिनियम, परिनियमों, अध्यादेशों और विनियमों का सम्यक् रूप से पालन किया जाता है और उसे ऐसा पालन सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक सभी शक्तियां प्राप्त होंगी ।

(4) कुलपति विश्वविद्यालय के कार्यकलापों पर नियंत्रण करेगा और वह विश्वविद्यालय के सभी प्राधिकरणों के विनिश्चयों को प्रभावी करेगा ।

(5) कुलपति को विश्वविद्यालय में समुचित अनुशासन बनाए रखने के लिए आवश्यक सभी शक्तियां होंगी और वह ऐसी किसी भी शक्ति का, किसी ऐसे व्यक्ति या व्यक्तियों को, जिन्हें वह ठीक समझे, प्रत्यायोजन कर सकेगा ।

(6) कुलपति को बोर्ड, विद्या परिषद्, अनुसंधान परिषद्, विस्तारी शिक्षा परिषद् और वित्त समिति के अधिवेशन बुलाने या बुलवाने की शक्ति होगी ।

महाविद्यालयों और संकायों के संकायाध्यक्ष :

4.(1) प्रत्येक संकाय का एक संकायाध्यक्ष होगा जो संबद्ध महाविद्यालय का प्रमुख भी होगा । यदि किसी संकाय में एक से अधिक महाविद्यालय हैं तो, कुलपति संकायाध्यक्षों में से किसी एक को संकाय का संकायाध्यक्ष नामनिर्देशित कर सकेगा ।

(2) महाविद्यालय का संकायाध्यक्ष, परिनियम 18 के प्रयोजन के लिए गठित चयन समिति की सिफारिशों पर बोर्ड द्वारा नियुक्त किया जाएगा और वह विश्वविद्यालय का पूर्णकालिक वैतनिक अधिकारी होगा ।

(3) संकायाध्यक्ष, निःशुल्क किराया और असुसज्जित निवास-स्थान का हकदार होगा ।

(4) संकायाध्यक्ष पांच वर्ष की अवधि के लिए पदभार ग्रहण करेगा और पुनर्नियुक्ति के लिए पात्र होगा :

परंतु संकायाध्यक्ष पैंसठ वर्ष की आयु प्राप्त करने पर उस हैसियत से पदधारण नहीं करेगा ।

(5) जब संकायाध्यक्ष का पद रिक्त है या जब संकायाध्यक्ष रुग्णता, अनुपस्थिति या किसी अन्य कारण से अपने पद के कर्तव्यों का पालन करने में असमर्थ है तो पद के कर्तव्य ऐसे व्यक्तियों द्वारा पूरे किए जा सकेंगे जिन्हें कुलपति इस प्रयोजन के लिए नियुक्त करे ।

(6) संकायाध्यक्ष, महाविद्यालय और संकाय में अध्यापन के मानकों के संचालन और अनुरक्षण के लिए कुलपति के प्रति उत्तरदायी होगा और ऐसे अन्य कृत्यों का पालन करेगा जो अध्यादेशों द्वारा विहित किए जाएं ।

(7) संकायाध्यक्ष, संकाय के अध्ययन बोर्ड का पदेन अध्यक्ष, विश्वविद्यालय की विद्या परिषद्, अनुसंधान परिषद् और विस्तारी शिक्षा परिषद् का पदेन सदस्य होगा ।

शिक्षा निदेशक :

5. (1) शिक्षा निदेशक, इस प्रयोजन के लिए गठित चयन समिति की सिफारिशों पर बोर्ड द्वारा नियुक्त किया जाएगा और वह विश्वविद्यालय का पूर्णकालिक वैतनिक अधिकारी होगा ।

(2) शिक्षा निदेशक, नि:शुल्क किराया और असुसज्जित निवास-स्थान का हकदार होगा ।

(3) शिक्षा निदेशक पांच वर्ष की अवधि के लिए पद धारण करेगा और पुनर्नियुक्ति का पात्र होगा :

परन्तु शिक्षा निदेशक पैंसठ वर्ष की आयु प्राप्त कर लेने पर उस हैसियत से पद धारण नहीं करेगा ।

(4) शिक्षा निदेशक विश्वविद्यालय के विभिन्न संकायों में सभी शैक्षिक कार्यक्रमों की योजना, समन्वय और पर्यवेक्षण के लिए उत्तरदायी होगा ।

अनुसंधान निदेशक :

6.(1) अनुसंधान निदेशक, इस प्रयोजन के लिए गठित चयन समिति की सिफारिशों पर, बोर्ड द्वारा नियुक्त किया जाएगा और विश्वविद्यालय का पूर्णकालिक वैतनिक अधिकारी होगा ।

(2) अनुसंधान निदेशक, निःशुल्क किराया और असुसज्जित निवास स्थान का हकदार होगा ।

(3) अनुसंधान निदेशक पांच वर्ष की अवधि के लिए पद धारण करेगा और पुनः नियुक्ति का पात्र होगा :

परन्तु अनुसंधान निदेशक पैंसठ वर्ष की आयु प्राप्त कर लेने पर उस हैसियत से पद धारण नहीं करेगा ।

(4) अनुसंधान निदेशक विश्वविद्यालय के सभी अनुसंधन कार्यक्रमों के पर्यवेक्षण तथा समन्वय के लिए उत्तरदायी होगा और अपने कर्तव्यों के पालन के लिए कुलपति के प्रति उत्तरदायी होगा ।

(5) अनुसंधान निदेशक विश्वविद्यालय की अनुसंधान-परिषद् का पदेन सदस्य-सचिव होगा ।

विस्तारी शिक्षा निदेशक :

7. (1) विस्तारी शिक्षा निदेशक, इस प्रयोजन के लिए गठित चयन समिति की सिफारिशों पर बोर्ड द्वारा नियुक्त किया जाएगा और वह विश्वविद्यालय का पूर्णकालिक वैतनिक अधिकारी होगा ।

(2) विस्तारी शिक्षा निदेशक, नि:शुल्क किराया और असुसज्जित निवास-स्थान का हकदार होगा ।

(3) विस्तारी शिक्षा निदेशक, पांच वर्ष की अवधि के लिए पद धारण करेगा और वह पुनर्नियुक्ति का पात्र होगा :

परंतु विस्तारी शिक्षा निदेशक पैंसठ वर्ष की आयु प्राप्त कर लेने पर उस हैसियत से पद धारण नहीं करेगा ।

(4) विस्तारी शिक्षा निदेशक विश्वविद्यालय के सभी विस्तारी शिक्षा कार्यक्रमों के पर्यवेक्षण और समन्वय के लिए उत्तरदायी होगा तथा अपने कर्तव्यों के पालन के लिए कुलपति के प्रति उत्तरदायी होगा ।

(5) विस्तारी शिक्षा निदेशक, विश्वविद्यालय की विस्तारी शिक्षा परिषद् का पदेन सदस्य-सचिव होगा ।

कुलसचिव :

8. (1) कुलसचिव की नियुक्ति परिनियम 18 के अधीन गठित चयन समिति की सिफारिशों पर, बोर्ड द्वारा की जाएगी और वह विश्वविद्यालय का पूर्णकालिक वैतनिक अधिकारी होगा । वह अपने कर्तव्यों के पालन के लिए कुलपति के प्रति उत्तरदायी होगा ।

(2) उसकी नियुक्ति पांच वर्ष की अवधि के लिए की जाएगी और वह पुनर्नियुक्ति का पात्र होगा ।

(3) वह पांच वर्ष से अनधिक विनिर्दिष्ट अवधि के लिए प्रतिनियुक्ति पर भी नियुक्त किया जा सकेगा ।

(4) कुलसचिव की उपलब्धियां तथा सेवा के अन्य निबन्धन और शर्तें वे होंगी, जो अध्यादेशों द्वारा विहित की जाएं :

परन्तु कुलसचिव बासठ वर्ष की आयु प्राप्त कर लेने पर सेवानिवृत्त हो जाएगा ।

(5) प्रतिनियुक्ति पर नियुक्त हुए व्यक्ति की दशा में उसकी अवधि, उपलब्धियां और सेवा के अन्य निबंधन प्रतिनियुक्ति के निबंधनों के अनुसार होंगे ।

(6) जब कुलसचिव का पद रिक्त है या जब कुलसचिव रुग्णता, अनुपस्थिति के कारण या किसी अन्य कारण से अपने पद के कर्तव्यों का पालन करने में असमर्थ है तब उस पद के कर्तव्यों का पालन उस व्यक्ति द्वारा किया जाएगा जिसे कुलपति उस प्रयोजन के लिए नियुक्त करे ।

(7)(क) कुलसचिव को, ऐसे कर्मचारियों के विरुद्ध जिनके अंतर्गत शिक्षक नहीं हैं और जो बोर्ड के आदेश में विनिर्दिष्ट किए जाएं, अनुशासनिक कार्रवाई करने की शक्ति होगी तथा उसे, ऐसी जांच के लंबित रहने तक उन्हें निलंबित करने, उन्हें चेतावनी देने या उन पर परिनिंदा की या वेतन वृद्धि रोकने की शास्ति अधिरोपित करने की शक्ति होगी :

परन्तु ऐसी कोई शास्ति तब तक अधिरोपित नहीं की जएगी जब तक संबंधित व्यक्ति को, उसके संबंध में की जाने के लिए प्रस्थापित कार्रवाई के विरुद्ध कारण बताने का उचित अवसर नहीं दे दिया जाता है ।

(ख) उपखंड (क) में विनिर्दिष्ट कोई शास्ति अधिरोपित करने के कुलसचिव के आदेश के विरुद्ध अपील, कुलपति को होगी ।

(ग) ऐसे मामले में, जहां जांच से यह प्रकट होता हो कि कुलसचिव की शक्ति के बाहर का कोई दंड अपेक्षित है वहां, कुलसचिव जांच के पूरा होने पर कुलपति को अपनी सिफारिशों सहित एक रपोर्ट देगा :

परंतु कोई शास्ति अधिरोपित करने के कुलपति के आदेश के विरुद्ध

अपील बोर्ड को होगी ।

(8) कुलसचिव, बोर्ड और विद्या परिषद् का पदेन सचिव होगा, किंतु वह इन प्राधिकरणों में से किसी भी प्राधिकरण का सदस्य नहीं समझा जाएगा ।

(9) कुलसचिव का यह कर्तव्य होगा कि वह –

(क) विश्वविद्यालय के अभिलेखों, सामान्य मुद्रा और ऐसी अन्य संपत्ति को, जो बोर्ड उसके भारसाधन में सौंपे, अभिरक्षा में रखे ;

(ख) बोर्ड, विद्या-परिषद् के और उन प्राधिकरणों द्वारा नियुक्त किन्हीं समितियों के अधिवेशन बुलाने की सभी सूचनाएं जारी करे ;

(ग) बोर्ड, विद्या-परिषद् के और उन प्राधिकरणों द्वारा स्थापित किन्हीं समितियों के सभी अधिवेशनों के कार्यवृत्त रखें ;

(घ) बोर्ड और विद्या-परिषद् के शासकीय पत्र-व्यवहार का संचालन करे ;

(ङ) अध्यादेशों या अधिसूचनाओं द्वारा विहित रीति के अनुसार, विश्वविद्यालय की परीक्षाओं की, व्यवस्था करे ;

(च) कुलाध्यक्ष को विश्वविद्यालय के प्राधिकरणों के अधिवेशनों की कार्यसूची की प्रतियां, जैसे ही वे जारी की जाएं, और ऐसे अधिवेशनों के कार्यवृत्त दे ;

(छ) विश्वविद्यालय द्वारा या उसके विरुद्ध वादों या कार्यवाहियों में विश्वविद्यालय का प्रतिनिधित्व करे, मुख्तारनामों पर हस्ताक्षर करे और अभिवचनों को सत्यापित करे या इस प्रयोजन के लिए अपने प्रतिनिधि प्रतिनियुक्त करे ; और

(ज) ऐसे अन्य कर्तव्यों का पालन करे जो परिनियमों, अध्यादेशों या विनियमों में विनिर्दिष्ट किए जाएं अथवा जिनकी बोर्ड या कुलपति द्वारा समय-समय पर अपेक्षा की जाए ।

नियंत्रक :

9.(1) नियंत्रक, परिनियम 18 के अधीन गठित चयन समिति की सिफारिशों पर, बोर्ड द्वारा नियुक्त किया जाएगा और वह विश्वविद्यालय का पूर्णकालिक वैतनिक अधिकारी होगा ।

(2) उसकी नियुक्ति पांच वर्ष की अवधि के लिए की जाएगी और वह पुनर्नियुक्ति का पात्र होगा ।

(3) नियंत्रक पांच वर्ष से अनधिक विनिर्दिष्ट अवधि के लिए प्रतिनियुक्ति पर भी नियुक्त किया जा सकेगा ।

(4) नियंत्रक की उपलब्धियां तथा सेवा के अन्य निबंधन और शर्तें वे होंगी, जो अध्यादेशों द्वारा विहित की जाएं । किसी व्यक्ति के प्रतिनियुक्ति पर नियुक्त होने की दशा में, उसकी पदावधि, उपलब्धियां और सेवा के अन्य निबंधन, प्रतिनियुक्ति के मानक के अनुसार होंगे :

परंतु नियंत्रक साठ वर्ष की आयु प्राप्त कर लेने पर सेवानिवृत्त हो जाएगा ।

(5) जब नियंत्रक का पद रिक्त है या जब नियंत्रक, रुग्णता, अनुपस्थिति या किसी अन्य कारण से अपने पद के कर्तव्यों का पालन करने में असमर्थ है तब उस पद के कर्तव्यों का पालन उस व्यक्ति द्वारा किया जाएगा जो कुलपति उस प्रयोजन के लिए नियुक्त करे ।

(6) नियंत्रक, वित्त समिति का पदेन सचिव होगा, किंतु ऐसी समिति का सदस्य नहीं समझा जाएगा ।

(7) नियंत्रक–

(क) विश्वविद्यालय की निधि का साधारण पर्यवेक्षण करेगा और उसकी वित्तीय नीति के संबंध में उसे सलाह देगा ; और

(ख) ऐसे अन्य कर्तव्यों का पालन करेगा जो परिनियमों, अध्यादेशों में विनिर्दिष्ट किए जाएं या जिनकी समय-समय पर बोर्ड या कुलपति द्वारा अपेक्षा की जाए ।

(8) बोर्ड के नियंत्रण के अधीन रहते हुए, नियंत्रक–

(क) विश्वविद्यालय की संपत्ति और विनिधानों को, जिनके अंतर्गत न्यास और विन्यास की संपत्ति भी है, धारण करेगा और उसका प्रबंध करेगा ;

(ख) यह सुनिश्चित करेगा कि बोर्ड द्वारा एक वर्ष के लिए नियत आवर्ती और अनावर्ती व्यय की सीमाओं से अधिक व्यय न किया जाए और सभी धन का व्यय उसी प्रयोजन के लिए किया जाए जिसके लिए वह मंजूर या आबंटित किया गया है ;

(ग) विश्वविद्यालय के वार्षिक लेखा और बजट तैयार किए जाने के लिए और उनको बोर्ड को प्रस्तुत करने के लिए उत्तरदायी होगा ;

(घ) नकद और बैंक अतिशेषों की स्थिति तथा विनिधानों की स्थिति पर बराबर नजर रखेगा ;

(ङ) राजस्व के संग्रहण की प्रगति पर नजर रखेगा और संग्रहण करने के लिए अपनाए जाने वाले तरीकों के विषय में सलाह देगा ;

(च) यह सुनिश्चित करेगा कि भवन, भूमि, फर्नीचर और उपस्कर के रजिस्टर अद्यतन रखे जाएं तथा विश्वविद्यालय द्वारा चलाए जा रहे सभी कार्यालयों, विशेषित प्रयोगशालाओं, महाविद्यालयों और संस्थाओं के उपस्कर तथा उपयोज्य अन्य सामग्री के स्टाक की जांच की जाए ;

(छ) अप्राधिकृत व्यय और अन्य वित्तीय अनियमितताओं को कुलपति की जानकारी में लाएगा तथा व्यतिक्रमी व्यक्तियों के विरुद्ध अनुशासनिक कार्रवाई का सुझाव देगा ; और

(ज) विश्वविद्यालय द्वारा चलाए जा रहे किसी कार्यालय, प्रयोगशाला, महाविद्यालय या संस्था से कोई ऐसी जानकारी या विवरणियां मांगेगा जो वह अपने कर्तव्यों के पालन के लिए आवश्यक समझे ।

(9) नियंत्रक या बोर्ड द्वारा इस निमित्त सम्यक् रूप से प्राधिकृत व्यक्ति या व्यक्तियों द्वारा विश्वविद्यालय को संदेय किसी धन के बारे में रसीद ; उस धन के संदाय के लिए पर्याप्त उन्मोचन होगी ।

विभागाध्यक्ष :

10. (1) कुलपति द्वारा नियुक्त प्रत्येक विभाग का एक अध्यक्ष होगा जो सह-आचार्य की पंक्ति से नीचे का नहीं होगा तथा जिसके कर्तव्य तथा नियुक्ति के निबंधन और शर्तें अध्यादेशों द्वारा विहित की जाएंगी ।

(2) वह अध्यापन के लिए संकायाध्यक्ष, अनुसंधान के लिए अनुसंधान निदेशक, विस्तारी शिक्षा कार्य के लिए विस्तारी शिक्षा निदेशक के प्रति उत्तरदायी होगा । तथापि, संकायाध्यक्ष संबद्ध महाविद्यालयों में विभागाध्यक्षों का प्रशासनिक नियंत्रक अधिकारी होगा :

परंतु यदि किसी विभाग में एक से अधिक आचार्य हैं तो विभागाध्यक्ष,

कुलपति द्वारा आचार्यों में से नियुक्त किया जाएगा :

परंतु यह और कि ऐसे विभाग की दशा में, जहां केवल एक आचार्य है, कुलपति के पास यह विकल्प होगा कि या तो आचार्य को या सह-आचार्य को, विभागाध्यक्ष के रूप में नियुक्त करे :

परंतु यह और भी कि किसी ऐसे विभाग में जहां कोई आचार्य या सह-आचार्य नहीं है, वहां महाविद्यालय का संकायाध्यक्ष विभागाध्यक्ष के रूप में कार्य करेगा या कुलपति के अनुमोदन से महाविद्यालय के किसी अन्य विभागाध्यक्ष को कर्तव्य सौंपेगा ।

(3) आचार्य या सह-आचार्य को विभागाध्यक्ष के रूप में नियुक्ति के प्रस्ताव को अस्वीकार करने की स्वतंत्रता होगी ।

(4) विभागाध्यक्ष के रूप में नियुक्त किया गया आचार्य या सह-आचार्य उस रूप में तीन वर्ष की अवधि तक पद धारण करेगा । और वह पुन: नियुक्ति का पात्र होगा ।

(5) विभागाध्यक्ष, अपनी पदावधि के दौरान किसी भी समय अपना पद त्याग सकेगा ।

(6) विभागाध्यक्ष ऐसे कृत्यों का पालन करेगा जो अध्यादेशों द्वारा विहित किए जाएं ।

(7) विभागाध्यक्ष पैंसठ वर्ष की आयु पर सेवानिवृत्त होगा ।

पुस्तकालयाध्यक्ष :

11. (1) विश्वविद्यालय पुस्तकालयाध्यक्ष की नियुक्ति परिनियम 18 के अधीन इस प्रयोजन के लिए गठित चयन समिति की सिफारिशों पर, बोर्ड द्वारा की जाएगी और वह विश्वविद्यालय का पूर्णकालिक वैतनिक अधिकारी होगा ।

(2) पुस्तकालयाध्यक्ष, ऐसी शक्तियों का प्रयोग और ऐसे कर्तव्यों का पालन करेगा जो उसे कुलपति द्वारा सौंपे जाएं ।

प्रबन्ध बोर्ड का गठन, उसकी शक्तियां और कृत्य :

12. (1) बोर्ड निम्नलिखित सदस्यों से मिलकर बनेगा, अर्थात् :–

(i) कुलपति, पदेन अध्यक्ष ;

(ii) मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश राज्य के कृषि और पशुपालन,

मत्स्य उद्योग और उद्यान कृषि विभागों के भारसाधक सचिवों में से चार सचिव चक्रानुक्रम से कुलाध्यक्ष द्वारा नामनिर्देशित किए जाएंगे :

परंतु किसी विशिष्ट समय पर किसी राज्य से दो से अधिक सचिव नहीं होंगे ;

(iii) दो ख्यातिप्राप्त वैज्ञानिक जो कुलाध्यक्ष द्वारा नामनिर्देशित किए जाएंगे ;

(iv) कृषि आधारित उद्योगों का प्रतिनिधित्व करने वाला एक ख्यातिप्राप्त व्यक्ति या कृषि विकास में विशेष ज्ञान रखने वाला विनिर्माता जो कुलाध्यक्ष द्वारा नामनिर्देशित किया जाएगा ;

(v) भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् का प्रतिनिधित्व करने वाला उप महानिदेशक (शिक्षा) ;

(vi) महाविद्यालय का एक संकायाध्यक्ष और एक निदेशक जो चक्रानुक्रम के आधार पर कुलपति द्वारा नामनिर्देशित किया जाएगा ;

(vii) मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश राज्य में, कुलपति द्वारा चक्रानुक्रम से नामनिर्दिष्ट किए जाने वाले बुंदेलखंड में किसानों का प्रतिनिधित्व करने वाले तीन व्यक्ति जिनके अंतर्गत कम से कम एक महिला भी होगी ;

परंतु किसी विशिष्ट समय में बोर्ड में किसी राज्य से दो से अधिक प्रतिनिधि नहीं होंगे ;

(viii) एक सलाहकार (कृषि), योजना आयोग ;

(ix) प्राकृतिक संसाधन या पर्यावरण प्रबंध में एक विशिष्टता-प्राप्त प्राधिकारी जो कुलाध्यक्ष द्वारा नामनिर्देशित किया जाएगा ;

(x) संयुक्त सचिव से अन्यून पंक्ति के दो व्यक्ति जो क्रमश: कृषि और पशुपालन से संबंधित भारत सरकार के विभागों से हों ; जिन्हें भारत सरकार के संबद्ध सचिव द्वारा नामनिर्दिष्ट किया जाएगा ;

(xi) कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग, भारत सरकार का प्रतिनिधित्व करने वाले सचिव का नामनिर्देशिती ; और

(xii) विश्वविद्यालय का कुलसचिव – सचिव ।

(2) बोर्ड के पदेन सदस्यों से भिन्न सदस्यों की पदावधि तीन वर्ष होगी ।

(3) बोर्ड को विश्वविद्यालय के राजस्व और संपत्ति का प्रबंध और प्रशासन करने तथा विश्वविद्यालय के सभी ऐसे प्रशासनिक मामलों का, जिनके लिए अन्यथा उपबंध नहीं किया गया है, संचालन करने की शक्ति होगी ।

(4) इस अधिनियम, परिनियमों और अध्यादेशों के उपबंधों के अधीन रहते हुए, बोर्ड को, उसमें निहित अन्य सभी शक्तियों के अतिरिक्त, निम्नलिखित शक्तियां होंगी, अर्थात् :–

(i) अध्यापन और शैक्षणिक पदों का सृजन करना, ऐसे पदों की संख्या तथा उनकी उपलब्धियां अवधारित करना और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के अनुमोदन के अध्यधीन विश्वविद्यालय के कर्मचारिवृन्द के कर्तव्यों और सेवा की शर्तों को परिभाषित करना ;

(ii) ऐसे शिक्षकों और अन्य कर्मचारिवृन्द को, जो आवश्यक हों, विश्वविद्यालय द्वारा चलाए जा रहे महाविद्यालयों के संकायाध्यक्षों और अन्य संस्थाओं के निदेशक और अध्यक्षों को इस प्रयोजन के लिए गठित चयन समिति की सिफारिशों पर नियुक्त करना तथा उनमें अस्थायी रिक्तियों को भरना ;

(iii) प्रशासनिक, अनुसचिवीय और अन्य आवश्यक पदों का सृजन करना तथा अध्यादेशों द्वारा विहित रीति से उन पर नियुक्तियां करना ;

(iv) परिनियमों और अध्यादेशों के अनुसार कर्मचारियों में अनुशासन का विनियमन करना और उसका पालन कराना ;

(v) विश्वविद्यालय के वित्त, लेखाओं, विनिधानों, संपत्ति, कामकाज तथा सभी अन्य प्रशासनिक मामलों का प्रबन्ध और विनियमन करना और उस प्रयोजन के लिए ऐसे अभिकर्ता नियुक्त करना जो वह ठीक समझे ;

(vi) वित्त समिति की सिफारिशों पर वर्ष भर के कुल आवर्ती और कुल अनावर्ती व्यय की सीमाएं नियत करना ;

(vii) विश्वविद्यालय के धन को, जिसके अंतर्गत कोई अनुपयोजित आय भी है, ऐसे स्टाकों, निधियों, शेयरों या प्रतिभूतियों में जो वह ठीक समझे या भारत में स्थावर संपत्ति के क्रय में समय-समय पर विनिहित करना जिसके अंतर्गत ऐसे विनिधानों में समय-

समय पर उसी प्रकार परिवर्तन करने की शक्ति है ;

(viii) विश्वविद्यालय की ओर से किसी जंगम या स्थावर संपत्ति का अंतरण करना या अंतरण स्वीकार करना ;

(ix) विश्वविद्यालय के कार्य को चलाने के लिए आवश्यक भवनों, परिसरों, फर्नीचर और साधित्र तथा अन्य साधनों की व्यवस्था करना ;

(x) विश्वविद्यालय की ओर से संविदाएं करना, उनमें परिवर्तन करना, उन्हें कार्यान्वित करना और रद्द करना ;

(xi) विश्वविद्यालय के कर्मचारियों और छात्रों की किन्हीं शिकायतों को ग्रहण करना, उनका न्यायनिर्णयन करना और यदि ठीक समझा जाता है तो उन शिकायतों को दूर करना ;

(xii) परीक्षकों या विशेषज्ञों या परामर्शदाताओं, सलाहकारों और विशेष कर्तव्यारूढ़ अन्य अधिकारियों की फीस, मानदेय, उपलब्धियां और यात्रा भत्ते नियत करना ;

(xiii) विश्वविद्यालय के लिए सामान्य मुद्रा का चयन करना और ऐसी मुद्रा की अभिरक्षा और उपयोग की व्यवस्था करना ;

(xiv) ऐसे विशेष इंतजाम करना जो छात्राओं के निवास और उनमें अनुशासन के लिए आवश्यक हों ;

(xv) अपनी शक्तियों में से कोई शक्ति जो वह ठीक समझे, कुलपति, संकायाध्यक्ष, निदेशक, कुलसचिव या नियंत्रक को या विश्वविद्यालय के अन्य ऐसे कर्मचारी या प्राधिकारी को या अपने द्वारा नियुक्त की गई किसी समिति को, प्रत्यायोजित करना ;

(xvi) अध्येतावृत्तियां, छात्रवृत्तियां, अध्ययनवृत्तियां, पदक और पुरस्कार संस्थित करना ;

(xvii) अभ्यागत आचार्यों, प्रतिष्ठित आचार्यों, परामर्शदाताओं तथा विशेष कर्तव्यारूढ़ अधिकारियों और विद्वानों की नियुक्ति का उपबंध करना और ऐसी नियुक्तियों के निबंधनों और शर्तों का अवधारण करना ; और

(xviii) ऐसी अन्य शक्तियों का प्रयोग करना और ऐसे अन्य कर्तव्यों का पालन करना जो उस अधिनियम या परिनियमों द्वारा प्रदत्त

किए जाएं ।

बोर्ड के अधिवेशनों के लिए गणपूर्ति :

13. बोर्ड के अधिवेशन के लिए गणपूर्ति उसके छह सदस्यों से होगी ।

विद्या परिषद् का गठन और शक्तियां :

14.(1) विद्या परिषद् निम्नलिखित सदस्यों से मिलकर बनेगी, अर्थात् :–

(i) कुलपति, पदेन अध्यक्ष ;

(ii) विश्वविद्यालय के सभी महाविद्यालयों के संकायाध्यक्ष ;

(iii) विश्वविद्यालय का अनुसंधान निदेशक ;

(iv) विश्वविद्यालय का विस्तारी शिक्षा निदेशक ;

(v) शिक्षा निदेशक ;

(vi) चक्रानुक्रम आधार पर कुलपति द्वारा नामनिर्दिष्ट कोई पुस्तकालयाध्यक्ष ;

(vii) कुलपति द्वारा नामनिर्दिष्ट विश्वविद्यालय के बाहर से सहयोजित दो विख्यात वैज्ञानिक ;

(viii) कुलपति द्वारा नामनिर्दिष्ट सात विभागाध्यक्ष, जिसमें कम से कम एक प्रत्येक संकाय से हो ;

(ix) विश्वविद्यालय का कुलसचिव, पदेन सचिव ।

(2) विद्या परिषद् के पदेन सदस्यों से भिन्न सदस्यों की पदावधि तीन वर्ष होगी ।

(3) इस अधिनियम, परिनियमों और अध्यादेशों के अधीन रहते हुए, विद्या परिषद् को, उसमें निहित अन्य सभी शक्तियों के अतिरिक्त, निम्नलिखित शक्तियां होंगी, अर्थात् :–

(क) विश्वविद्यालय की शैक्षणिक नीतियों का साधारण पर्यवेक्षण करना और शिक्षण की पद्धतियों, महाविद्यालयों और संस्थाओं में सहकारी अध्यापन मूल्यांकन और शैक्षणिक स्तरों में सुधारों के बारे में निदेश देना ;

(ख) महाविद्यालयों के बीच समन्वय करना और शैक्षणिक

मामलों पर समिति की स्थापना या नियुक्ति करना ;

(ग) साधारण शैक्षणिक अभिरुचि के विषयों पर स्वप्रेरणा से या किसी महाविद्यालय या बोर्ड द्वारा निर्देश किए जाने पर विचार करना और उन पर समुचित कार्रवाई करना ; और

(घ) परिनियमों और अध्यादेशों से संगत ऐसे विनियम और नियम बनाना जो विश्वविद्यालय के शैक्षणिक कार्यकरण, अनुशासन, निवास, प्रवेश, अध्येतावृत्तियों और अध्ययनवृत्तियों के दिए जाने, फीस, रियायतों, सामुदायिक जीवन और हाजिर के संबंध में हों ।

विद्या परिषद् के अधिवेशनों के लिए गणपूर्ति :

15. विद्या परिषद् के अधिवेशनों के लिए गणपूर्ति विद्या परिषद् के एक-तिहाई सदस्यों से होगी ।

अध्ययन बोर्ड :

16. (1) प्रत्येक संकाय में एक अध्ययन बोर्ड होगा ।

(2) प्रत्येक संकाय का अध्ययन बोर्ड निम्नलिखित रूप से गठित होगा :–

(i) संकायाध्यक्ष – अध्यक्ष ;

(ii) अनुसंधान निदेशक – सदस्य ;

(iii) विस्तारी शिक्षा निदेशक – सदस्य ;

(iv) संकाय के विभागों के सभी अध्यक्ष जो सह-आचार्य की पंक्ति से नीचे के नहीं होंगे – सदस्य ;

(v) कुलपति द्वारा नामनिर्दिष्ट विद्या परिषद् का एक प्रतिनिधि जो विशिष्ट संकाय से नहीं होगा ;

(vi) कुलपति द्वारा नामनिर्दिष्ट कृषि शिक्षा प्रणाली से दो विख्यात वैज्ञानिक जो विश्वविद्यालय से नहीं होंगे ;

(vii) उच्चतम समग्र श्रेणी बिन्दु औसत (ओजीपीए) धारक एक अंतिम वर्ष का स्नातकोत्तर छात्र विद्यार्थी – सदस्य ;

(viii) संकाय का सहायक कुलसचिव (विद्या) – सदस्य ;

और

(ix) शिक्षा निदेशक – सदस्य ।

(3) अध्ययन बोर्ड के कृत्य, विद्या परिषद् को संबद्ध संकायों द्वारा प्रस्तावित विभिन्न उपाधियों के लिए विहित की जाने वाली पाठ्यचर्या की सिफारिशें करना और विहित अनुमोदित पाठ्यक्रमों के शिक्षण के लिए उपयुक्त सिफारिशें करना होगा, अर्थात् :–

(क) अध्ययन पाठ्यक्रमों और पाठ्यक्रमों के लिए, जिनमें अनुसंधान उपाधियां नहीं हैं, परीक्षकों की नियुक्ति ;

(ख) अनुसंधान पर्यवेक्षकों की नियुक्ति ; और

(ग) अध्यापन और अनुसंधान के स्तर में सुधार के लिए उपाय ।

वित्त समिति :

17. (1) वित्त समिति में निम्नलिखित सदस्य होंगे, अर्थात् :–

(i) कुलपति – अध्यक्ष ;

(ii) कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग का वित्तीय सलाहकार या उसका नामनिर्देशिती जो उप सचिव की पंक्ति से नीचे का नहीं होगा ;

(iii) बोर्ड द्वारा नामनिर्दिष्ट किए जाने वाले तीन व्यक्ति जिनमें कम से कम एक व्यक्ति बोर्ड का सदस्य होगा ;

(iv) कुलाध्यक्ष द्वारा नामनिर्दिष्ट किए जाने वाले तीन व्यक्ति ; और

(v) विश्वविद्यालय का नियंत्रक – सदस्य-सचिव ।

(2) वित्त समिति के अधिवेशन के लिए गणपूर्ति उसके तीन सदस्यों से होगी ।

(3) वित्त समिति के पदेन सदस्यों से भिन्न सभी सदस्य तीन वर्ष की अवधि तक पद धारण करेंगे ।

(4) यदि वित्त समिति का कोई सदस्य वित्त समिति के किसी विनिश्चय से सहमत नहीं है तो उसे विसम्मति का कार्यवृत्त अभिलिखित करने का अधिकार होगा ।

(5) लेखाओं की परीक्षा और व्यय की प्रस्थापनाओं की संवीक्षा करने के लिए वित्त समिति का अधिवेशन प्रत्येक वर्ष में कम से कम दो बार होगा ।

(6) पदों के सृजन से संबंधित सभी प्रस्थापनाओं की और उन मदों की जो बजट में सम्मिलित नहीं की गई हैं, बोर्ड द्वारा उन पर विचार किए जाने से पूर्व, वित्त समिति द्वारा परीक्षा की जाएगी।

(7) नियंत्रक द्वारा तैयार किए गए विश्वविद्यालय के वार्षिक लेखे और वित्तीय प्राक्कलन वित्त समिति के समक्ष विचार तथा टीका-टिप्पणी के लिए रखे जाएंगे और तत्पश्चात् बोर्ड के अनुमोदन के लिए प्रस्तुत किए जाएंगे ।

(8) वित्त समिति वर्ष के लिए कुल आवर्ती व्यय और कुल अनावर्ती व्यय के लिए सीमाओं की सिफारिश करेगी जो उस विश्वविद्यालय की आय और उसके साधनों पर आधारित होंगी (जिनके अंतर्गत, उत्पादक कार्यों की दशा में, उधारों के आगम भी हो सकेंगे) ।

चयन समिति :

18.(1) शिक्षकों, नियंत्रक, कुलसचिव, पुस्तकालयाध्यक्षों, महाविद्यालयों के संकायाध्यक्षों, निदेशकों तथा विश्वविद्यालय द्वारा चलाई जा रही अन्य संस्थाओं के अध्यक्षों के पदों पर नियुक्ति के लिए बोर्ड को सिफारिशें करने के लिए एक चयन समिति होगी ।

(2) नीचे की सारणी के स्तंभ 1 में विनिर्दिष्ट पदों पर नियुक्ति के लिए चयन समिति में उक्त सारणी के स्तंभ 2 की तत्संबंधी प्रविष्टि में विनिर्दिष्ट व्यक्ति होंगे ।

सारणी

1	2	3
क.	निदेशक/संकाय अध्यक्ष	(i) कुलपति या उसका नामनिर्देशिती – अध्यक्ष । (ii) कुलाध्यक्ष का एक नामनिर्देशिती – सदस्य । (iii) तीन विख्यात वैज्ञानिक बोर्ड द्वारा

1	2	3
		अनुमोदित छह नामों के पैनल से कुलपति द्वारा नामनिर्दिष्ट होंगे जो कुलपति या समतुल्य (सेवारत या सेवानिवृत्त) पंक्ति से नीचे के नहीं होंगे – सदस्य ।
ख.	आचार्य/समतुल्य	(i) कुलपति या उसका नामनिर्देशिती – अध्यक्ष । (ii) कुलाध्यक्ष का एक नामनिर्देशिती – सदस्य । (iii) संबद्ध संकाय का संकायाध्यक्ष – सदस्य । (iv) कुलपति द्वारा नामनिर्देशित अनुसंधान निदेशक या विस्तारी शिक्षा निदेशक या शिक्षा निदेशक – सदस्य । (v) तीन विख्यात विषय विशेषज्ञ जो विभागाध्यक्ष या समतुल्य (सेवारत या सेवानिवृत्त) से भिन्न पंक्ति के न हों और जिन्हें बोर्ड द्वारा अनुमोदित छह नामों के पैनल में से कुलपति द्वारा नामनिर्दिष्ट किया जाएगा – सदस्य
ग.	सह-आचार्य/सहायक आचार्य/समतुल्य	(i) कुलपति या उसका नामनिर्देशिती – अध्यक्ष । (ii) कुलाध्यक्ष का एक नामनिर्देशिती – सदस्य । (iii) संबद्ध संकाय का संकायाध्यक्ष – सदस्य । (iv) कुलपति द्वारा नामनिर्देशित शिक्षा निदेशक या अनुसंधान निदेशक या विस्तारी शिक्षा निदेशक – सदस्य । (v) संबद्ध विभाग का प्रमुख जो आचार्य की पंक्ति से नीचे का नहीं होगा – सदस्य । (vi) दो विख्यात शिक्षक या वैज्ञानिक जो

1	2	3
		आचार्य या समतुल्य (सेवारत या सेवानिवृत्त) की पंक्ति से नीचे के नहीं होंगे, जो बोर्ड द्वारा अनुमोदित छह नामों के पैनल में से कुलपति द्वारा नामनिर्दिष्ट किए जाएंगे – सदस्य ।
घ.	कुलसचिव/नियंत्रक/ पुस्तकालयाध्यक्ष	(i) कुलपति या उसका नामनिर्देशिती – अध्यक्ष । (ii) कुलाध्यक्ष का नामनिर्देशिती – सदस्य । (iii) कुलपति द्वारा नामनिर्देशित एक निदेशक/संकायाध्यक्ष – सदस्य । (iv) संबद्ध विषय के दो विशेषज्ञ जो बोर्ड द्वारा अनुमोदित छह नामों के पैनल में से कुलपति द्वारा नामनिर्दिष्ट किए जाएंगे – सदस्य ।

(3) कुलपति या उसकी अनुपस्थिति में, उसका नामनिर्देशिती, चयन समिति के अधिवेशनों की अध्यक्षता करेगा :

परंतु चयन समिति के अधिवेशन कुलाध्यक्ष के नामनिर्देशितियों के पूर्व परामर्श के पश्चात् नियत किए जाएंगे :

परंतु यह और कि चयन समिति की कार्यवाहियां तब तक विधिमान्य नहीं होंगी, जब तक कि कम से कम दो सदस्य, जो विश्वविद्यालय की सेवा में नहीं हैं, अधिवेशन में उपस्थिति न हों ।

(4) चयन समिति का अधिवेशन कुलपति या उसकी अनुपस्थिति में उसके नामनिर्देशिती द्वारा बुलाया जाएगा ।

(5) चयन समिति द्वारा सिफारिश करने में अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया साक्षात्कार से पूर्व समिति द्वारा विनिश्चित की जाएगी ।

(6) यदि बोर्ड चयन समिति द्वारा की गई सिफारिशें स्वीकार करने में असमर्थ हो तो वह अपने कारण अभिलिखित करेगी और मामले को अंतिम आदेशों के लिए कुलाध्यक्ष को भेजेगी ।

(7) अस्थायी पदों पर नियुक्तियां नीचे उपदर्शित रीति से की जाएंगी –

(i) कुलपति को किसी व्यक्ति की अस्थायी आधार पर छह मास की अवधि के लिए नियुक्ति का प्राधिकार होगा जिसे बोर्ड के अनुमोदन से छह मास की और अवधि के लिए बढ़ाया जा सकेगा :

परंतु यदि कुलपति का यह समाधान हो जाता है कि कार्य के हित में रिक्ति का भरा जाना आवश्यक है तो नियुक्ति उपखंड (ii) में निर्दिष्ट स्थानीय चयन समिति द्वारा केवल अस्थायी आधार पर छह मास से अनधिक अवधि के लिए की जा सकेगी ;

(ii) यदि अस्थायी रिक्ति एक वर्ष से कम की अवधि के लिए है तो ऐसी रिक्ति पर नियुक्ति स्थानीय चयन समिति की सिफारिश पर की जाएगी जिसमें संबद्ध महाविद्यालय का संकायाध्यक्ष, विभागाध्यक्ष और कुलपति का एक नामनिर्देशिती होगा :

परंतु यदि एक ही व्यक्ति संकायाध्यक्ष और विभागाध्यक्ष का पद धारण करता है तो चयन समिति में कुलपति के दो नामनिर्देशिती हो सकेंगे :

परंतु यह और कि मृत्यु के कारण या अन्य किसी कारण से अध्यापन पदों में हुई अचानक आकस्मिक रिक्ति की दशा में संकायाध्यक्ष संबंधित विभागाध्यक्ष के परामर्श से एक मास के लिए अस्थायी नियुक्ति कर सकेगा और ऐसी नियुक्ति की रिपोर्ट कुलपति और कुलसचिव को देगा ;

(iii) यदि परिनियमों के अधीन अस्थायी तौर पर नियुक्त किए गए किसी शिक्षक की सिफारिश नियमित चयन समिति द्वारा नहीं की जाती है तो वह ऐसे अस्थायी नियोजन पर सेवा में नहीं बना रहेगा जब तक कि, यथास्थिति, अस्थायी या स्थायी नियुक्ति के लिए स्थानीय चयन समिति या नियमित चयन समिति द्वारा बाद में उसका चयन नहीं कर लिया जाता ।

(8) अशैक्षणिक कर्मचारिवृंद के लिए चयन समिति के गठन का ढंग, परिनियमों में विहित न होकर, अध्यादेशों द्वारा विहित होगा ।

नियुक्ति का विशेष ढंग :

19.(1) परिनियम 18 में किसी बात के होते हुए भी, बोर्ड, विद्या संबंधी उच्च विशेष उपाधि और वृत्तिक योग्यता वाले व्यक्ति को ऐसे निबंधनों और शर्तों पर, जो वह ठीक समझे, विश्वविद्यालय में, यथास्थिति, आचार्य या सह-आचार्य

का पद अथवा कोई अन्य शैक्षणिक पद स्वीकार करने के लिए आमंत्रित कर सकेगा और उस व्यक्ति के ऐसा करने के लिए सहमत होने पर उसे उस पद पर नियुक्त कर सकेगा ।

(2) बोर्ड, अध्यादेशों में अधिकथित रीति के अनुसार किसी संयुक्त परियोजना का दायित्व लेने के लिए किसी अन्य विश्वविद्यालय या संगठन में कार्य करने वाले किसी शिक्षक या अन्य शैक्षणिक कर्मचारी को नियुक्त कर सकेगा ।

नियत अवधि के लिए नियुक्ति :

20. बोर्ड, परिनियम 18 में अधिकथित प्रक्रिया के अनुसार चयन किए गए किसी व्यक्ति को ऐसे निबंधनों और शर्तों पर, जो वह ठीक समझे, एक नियत अवधि के लिए नियुक्त कर सकेगा ।

निदेशक, संकायाध्यक्ष, आचार्य आदि की अर्हताएं :

21.(1) विभिन्न संकायों के निदेशक, संकायाध्यक्ष, आचार्य, सह-आचार्य और सहायक आचार्य और अनुसंधान तथा विस्तारी शिक्षा में उसके समतुल्यों की अर्हताएं अध्यादेशों द्वारा विहित होंगी ।

(2) अशैक्षणिक कर्मचारिवृंद की अर्हताएं अध्यादेशों द्वारा विहित होंगी ।

समितियां :

22.(1) विश्वविद्यालय का प्राधिकरण, धारा 16 में विनिर्दिष्ट उतनी स्थायी या विशेष समितियां स्थापित कर सकेगा जितनी वह ठीक समझे और ऐसी समितियों में उन व्यक्तियों को नियुक्त कर सकेगा जो ऐसे प्राधिकरण के सदस्य नहीं हैं ।

(2) उपखंड (1) के अधीन नियुक्त कोई समिति उसे नियुक्त करने वाले प्राधिकरण द्वारा पुष्टि के अध्यधीन किसी ऐसे विषय में कार्यवाही कर सकेगी जो उसे प्रत्यायोजित किया जाए ।

शिक्षकों आदि की सेवा के निबंधन और शर्तें तथा आचार संहिता :

23.(1) विश्वविद्यालय के सभी शिक्षक और अन्य शैक्षणिक कर्मचारिवृंद तत्प्रतिकूल किसी करार के अभाव में, परिनियमों, अध्यादेशों और विनियमों में विनिर्दिष्ट सेवा के निबंधनों और शर्तों तथा आचार संहिता द्वारा शासित होंगे ।

(2) विश्वविद्यालय का प्रत्येक शिक्षक और अन्य कर्मचारिवृंद लिखित संविदा के आधार पर नियुक्त किया जाएगा, जिसकी शर्तें अध्यादेशों द्वारा विहित

होंगी ।

(3) खंड (2) में निर्दिष्ट प्रत्येक संविदा की एक प्रति कुलसचिव के पास रखी जाएगी ।

अन्य कर्मचारियों की सेवा के निबंधन और शर्तें तथा आचार संहिता :

24. विश्वविद्यालय के सभी अशैक्षणिक कर्मचारी, तत्प्रतिकूल किसी संविदा के अभाव में समय-समय पर बनाए गए परिनियमों, अध्यादेशों और विनियमों में यथाविनिर्दिष्ट सेवा के निबंधनों और शर्तों तथा आचार संहिता द्वारा शासित होंगे ।

ज्येष्ठता सूची :

25.(1) जब कभी परिनियमों के अनुसार, किसी व्यक्ति को ज्येष्ठता के अनुसार चक्रानुक्रम से विश्वविद्यालय का कोई पद धारण करना है या उसके किसी प्राधिकरण का सदस्य होना है, तो उस ज्येष्ठता का अवधारण उस व्यक्ति के, उसकी श्रेणी में लगातार सेवाकाल और ऐसे अन्य सिद्धांतों के अनुसार होगा, जो बोर्ड समय-समय पर, विहित करे ।

(2) कुलसचिव का यह कर्तव्य होगा कि जिन व्यक्तियों को इन परिनियमों के उपबंध लागू होते हैं उनके प्रत्येक वर्ग की बाबत एक पूरी और अद्यतन ज्येष्ठता सूची खंड (1) के उपबंधों के अनुसार तैयार करे और बनाए रखे ।

(3) यदि दो या अधिक व्यक्तियों का किसी विशिष्ट श्रेणी में लगातार सेवाकाल बराबर हो अथवा किन्हीं व्यक्तियों की सापेक्ष ज्येष्ठता के विषय में अन्यथा संदेह हो तो कुलसचिव स्वप्रेरणा से वह मामला बोर्ड को प्रस्तुत कर सकेगा और यदि वह व्यक्ति ऐसा अनुरोध करता है तो वह मामला बोर्ड को प्रस्तुत करेगा जिसका उस पर विनिश्चय अंतिम होगा ।

विश्वविद्यालय के कर्मचारियों को हटाया जाना :

26.(1) जहां विश्वविद्यालय के किसी शिक्षक, शैक्षणिक कर्मचारिवृंद के किसी सदस्य या किसी अन्य कर्मचारी के विरुद्ध किसी अवचार का अभिकथन हो वहां शिक्षक या शैक्षणिक कर्मचारिवृंद के सदस्य के मामले में कुलपति और अन्य कर्मचारी के मामले में नियुक्त करने के लिए सक्षम प्राधिकारी (जिसे इसमें इसके पश्चात् नियुक्ति प्राधिकारी कहा गया है) लिखित आदेश द्वारा, यथास्थिति, ऐसे शिक्षक, शैक्षणिक कर्मचारिवृंद के सदस्य या अन्य कर्मचारी को निलंबित कर सकेगा और बोर्ड को उन परिस्थितियों की तुरंत रिपोर्ट देगा जिनमें

वह आदेश किया गया था :

परंतु यदि बोर्ड की यह राय है कि मामले की परिस्थितियां ऐसी नहीं हैं कि शिक्षक या शैक्षणिक कर्मचारिवृंद के सदस्य का निलंबन होना चाहिए तो वह उस आदेश को प्रतिसंहृत कर सकेगा ।

(2) कर्मचारियों की नियुक्ति की संविदा के निबंधनों में या सेवा के अन्य निबंधनों और शर्तों में किसी बात के होते हुए भी, शिक्षकों और अन्य शैक्षणिक कर्मचारिवृंद के संबंध में बोर्ड और अन्य कर्मचारियों के संबंध में नियुक्ति प्राधिकारी को, यथास्थिति, शिक्षक या शैक्षणिक कर्मचारिवृंद के सदस्य अथवा अन्य कर्मचारी को अवचार के आधार पर हटाने की शक्ति होगी ।

(3) यथापूर्वोक्त के सिवाय, यथास्थिति, बोर्ड या नियुक्ति प्राधिकारी किसी शिक्षक, शैक्षणिक कर्मचारिवृंद के सदस्य या अन्य कर्मचारी को हटाने के लिए तभी हकदार होगा जब उसके लिए उचित कारण हो और उसे तीन मास की सूचना दे दी गई हो या सूचना के बदले में तीन मास के वेतन का संदाय कर दिया गया हो, अन्यथा नहीं ।

(4) किसी शिक्षक, शैक्षणिक कर्मचारिवृंद के सदस्य या अन्य कर्मचारी को खंड (2) या खंड (3) के अधीन तब तक नहीं हटाया जाएगा जब तक उसे उसके बारे में की जाने के लिए प्रस्तावित कार्रवाई के विरुद्ध हेतुक दर्शित करने का युक्तियुक्त अवसर न दे दिया गया हो ।

(5) किसी शिक्षक, शैक्षणिक कर्मचारिवृंद के सदस्य या अन्य कर्मचारी का हटाया जाना उस तारीख से प्रभावी होगा जिसको हटाए जाने का आदेश किया जाता है :

परंतु जहां कोई शिक्षक, शैक्षणिक कर्मचारिवृंद का सदस्य या अन्य कर्मचारी हटाए जाने के समय निलंबित है, वहां उसका हटाया जाना उस तारीख से प्रभावी होगा जिसको वह निलंबित किया गया था ।

(6) इस परिनियम के पूर्वगामी उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी, कोई शिक्षक, शैक्षणिक कर्मचारिवृंद का सदस्य या अन्य कर्मचारी, –

(क) यदि वह स्थायी कर्मचारी है तो, यथास्थिति, बोर्ड या नियुक्ति प्राधिकारी को तीन मास की लिखित सूचना देने या उसके बदले में तीन मास के वेतन का संदाय करने के पश्चात् ही पद त्याग सकेगा ;

(ख) यदि वह स्थायी कर्मचारी नहीं है तो, यथास्थिति, बोर्ड या नियुक्ति प्राधिकारी को एक मास की लिखित सूचना देने या उसके बदले

में एक मास के वेतन का संदाय करने के पश्चात् ही पद त्याग सकेगा :

परंतु ऐसा त्यागपत्र केवल उस तारीख से ही प्रभावी होगा, जिसको, यथास्थिति, बोर्ड या नियुक्ति प्राधिकारी द्वारा वह त्यागपत्र स्वीकार किया जाता है ।

मानद उपाधि :

27.(1) बोर्ड, विद्या परिषद् की सिफारिश पर और उपस्थित तथा मतदान करने वाले सदस्यों के कम से कम दो तिहाई बहुमत से पारित संकल्प द्वारा कुलाध्यक्ष से सम्मानिक उपाधियां प्रदान करने की प्रस्थापना कर सकेगा :

परंतु आपातस्थिति की दशा में, बोर्ड स्वप्रेरणा से ऐसी प्रस्थापना कर सकेगा ।

(2) बोर्ड, उपस्थित तथा मतदान करने वाले सदस्यों के दो तिहाई से अन्यून बहुमत से पारित संकल्प द्वारा, कुलाध्यक्ष की पूर्व मंजूरी से, विश्वविद्यालय द्वारा प्रदत्त किसी सम्मानिक उपाधि को वापस ले सकेगा ।

उपाधियों आदि का वापस लिया जाना :

28. बोर्ड, उपस्थित और मतदान करने वाले सदस्यों के दो तिहाई से अन्यून बहुमत से पारित विशेष संकल्प द्वारा, किसी व्यक्ति को विश्वविद्यालय द्वारा प्रदत्त कोई उपाधि या विद्या संबंधी विशेष उपाधि या दिए गए किसी प्रमाणपत्र या डिप्लोमा को उचित और पर्याप्त कारण से वापस ले सकेगा :

परंतु ऐसा कोई संकल्प तभी पारित किया जाएगा जब उस व्यक्ति को ऐसे समय के भीतर जो उस सूचना में विनिर्दिष्ट किया जाए, यह हेतुक दर्शित करने की लिखित सूचना न दे दी जाए कि ऐसा संकल्प क्यों न पारित कर दिया जाए और जब तक बोर्ड द्वारा उसके आक्षेपों पर, यदि कोई हों, और किसी ऐसे साक्ष्य पर, जो वह उनके समर्थन में प्रस्तुत करे, विचार नहीं कर लिया जाता है ।

विश्वविद्यालय के छात्रों में अनुशासन बनाए रखना :

29.(1) विश्वविद्यालय के छात्रों के संबंध में अनुशासन और अनुशासनिक कार्रवाई संबंधी सभी शक्तियां कुलपति में निहित होंगी ।

(2) कुलपति सभी शक्तियां या उनमें से कोई, जो वह ठीक समझे, ऐसे अन्य अधिकारियों को, जिन्हें वह इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे, प्रत्यायोजित कर सकेगा ।

(3) कुलपति, अनुशासन बनाए रखने की तथा ऐसी कार्रवाई करने की, जो उसे अनुशासन बनाए रखने के लिए समुचित प्रतीत हो, अपनी शक्तियों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसी शक्तियों के प्रयोग में आदेश द्वारा निदेश दे सकेगा कि किसी छात्र या किन्हीं छात्रों को किसी विनिर्दिष्ट अवधि के लिए निकाला या निष्कासित किया जाए अथवा विश्वविद्यालय के किसी महाविद्यालय, संस्था या विभाग में किसी पाठ्यक्रम या पाठ्यक्रमों में कथित अवधि के लिए प्रवेश न दिया जाए अथवा उसे ऐसी रकम के जुर्माने से दण्डित किया जाए, जो आदेश में विनिर्दिष्ट है अथवा उसे विश्वविद्यालय, महाविद्यालय, संस्था या विभाग द्वारा संचालित परीक्षा या परीक्षाओं में सम्मिलित होने से एक या अधिक वर्षों के लिए विवर्जित किया जाए अथवा संबंधित छात्र या छात्रों का, किसी परीक्षा या किन्हीं परीक्षाओं का, जिसमें वह या वे सम्मिलित हुआ है या हुए हैं, परीक्षाफल रद्द कर दिया जाए ।

(4) महाविद्यालयों, संस्थाओं के संकायाध्यक्षों तथा विश्वविद्यालय के अध्यापन विभागों के अध्यक्षों को यह प्राधिकार होगा कि वे अपने-अपने महाविद्यालयों, संस्थाओं और विश्वविद्यालय के अध्यापन विभागों में छात्रों पर ऐसी सभी अनुशासनिक शक्तियों का प्रयोग करें जो उन महाविद्यालयों, संस्थाओं और विभागों में अध्यापन के उचित संचालन के लिए आवश्यक हों ।

(5) कुलपति, खंड (4) में विनिर्दिष्ट संकायाध्यक्षों और अन्य व्यक्तियों की शक्तियों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, अनुशासन और उचित आचरण संबंधी विस्तृत नियम विश्वविद्यालय द्वारा बनाए जाएंगे । महाविद्यालयों, संस्थाओं के संकायाध्यक्ष और विश्वविद्यालय के अध्यापन विभागों के अध्यक्ष ऐसे अनुपूरक नियम बना सकेंगे जो वे उसमें पूर्वोक्त प्रयोजनों के लिए आवश्यक समझें ।

(6) प्रवेश के समय, प्रत्येक छात्र से यह अपेक्षा की जाएगी कि वह इस आशय की घोषणा पर हस्ताक्षर करे कि वह अपने को कुलपति की तथा विश्वविद्यालय के अन्य प्राधिकारियों की अनुशासनिक अधिकारिता के अधीन अर्पित करता है ।

महाविद्यालयों आदि के छात्रों में अनुशासन बनाए रखना :

30. ऐसे महाविद्यालय या संस्था के बारे में, जो विश्वविद्यालय द्वारा चलाई जाती है, छात्रों से संबंधित अनुशासन तथा अनुशासनिक कार्रवाई संबंधी सभी शक्तियां, अध्यादेशों द्वारा विहित प्रक्रिया के अनुसार, यथास्थिति, महाविद्यालय या संस्था के संकायाध्यक्ष में निहित होंगी ।

दीक्षांत समारोह :

31. उपाधियां प्रदान करने या अन्य प्रयोजनों के लिए विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह ऐसी रीति से आयोजित किए जाएंगे जो अध्यादेशों द्वारा विहित की जाएं ।

कार्यकारी अध्यक्ष :

32. जहां किसी समिति के अधिवेशन की अध्यक्षता करने के लिए किसी अध्यक्ष का उपबंध नहीं किया गया है अथवा जिसके लिए इस प्रकार अध्यक्ष का उपबंध किया गया है वह अनुपस्थित है, या कुलपति ने लिखित में कोई व्यवस्था नहीं की है, वहां उपस्थित सदस्य ऐसे अधिवेशन की अध्यक्षता करने के लिए अपने में से एक सदस्य को निर्वाचित कर लेंगे ।

त्यागपत्र :

33. बोर्ड, विद्या परिषद् या विश्वविद्यालय के किसी अन्य प्राधिकरण या ऐसे प्राधिकरण की किसी समिति के पदेन सदस्य से भिन्न कोई सदस्य कुलसचिव को संबोधित पत्र द्वारा पद त्याग कर सकेगा और ऐसा पत्र कुलसचिव को प्राप्त होते ही त्यागपत्र प्रभावी हो जाएगा ।

निरर्हताएं :

34.(1) कोई भी व्यक्ति विश्वविद्यालय के प्राधिकरण में से किसी का सदस्य चुने जाने और होने के लिए निरर्हित होगा यदि –

(i) वह विकृतचित्त है ;

(ii) वह अनुन्मोचित दिवालिया है ;

(iii) वह किसी ऐसे अपराध के लिए, जिसमें नैतिक अधमता अंतर्वलित है, किसी न्यायालय द्वारा दोषसिद्ध किया गया है और उसकी बाबत छह मास से अन्यून कारावास से दंडादिष्ट किया गया है ।

(2) यदि यह प्रश्न उठता है कि क्या कोई व्यक्ति खंड (1) में वर्णित निरर्हताओं में से किसी एक के अधीन है या रहा है तो वह प्रश्न कुलाध्यक्ष को निर्देशित किया जाएगा और उसका विनिश्चय अंतिम होगा और ऐसे विनिश्चय के विरुद्ध किसी सिविल न्यायालय में कोई वाद या अन्य कार्यवाहियां नहीं होंगी ।

सदस्यता और पद के लिए निवास की शर्त :

35. परिनियमों में किसी बात के होते हुए भी, ऐसा कोई व्यक्ति जो

भारत में मामूली तौर पर निवासी नहीं है, विश्वविद्यालय का कोई अधिकारी या विश्वविद्यालय के किसी प्राधिकरण का सदस्य बनने के लिए पात्र नहीं होगा ।

अन्य निकायों की सदस्यता के आधार पर प्राधिकारियों की सदस्यता :

36. परिनियमों में किसी बात के होते हुए भी, कोई व्यक्ति जो विश्वविद्यालय में कोई पद धारण करता है या विश्वविद्यालय के किसी प्राधिकरण या निकाय का किसी विशिष्ट प्राधिकरण या निकाय के सदस्य की अपनी हैसियत में सदस्य है या कोई विशिष्ट नियुक्ति धारित करता है, केवल तब तक ऐसा पद या सदस्यता धारण करेगा जब तक वह, यथास्थिति, उस विशिष्ट प्राधिकरण या निकाय का सदस्य बना रहता है या उस विशिष्ट नियुक्ति को धारित करता रहता है ।

पूर्व छात्र संगम :

37. (1) विश्वविद्यालय का एक पूर्व छात्र संगम होगा ।

(2) पूर्व छात्र संगम का सदस्यता अभिदाय अध्यादेशों द्वारा विहित किया जाएगा ।

(3) पूर्व छात्र संगम का कोई भी सदस्य मतदान करने या निर्वाचन के लिए खड़े होने का तभी हकदार होगा जब वह निर्वाचन की तारीख से पहले कम से कम एक वर्ष तक उक्त संगम का सदस्य रहा है और विश्वविद्यालय का कम से कम पांच वर्ष की कालावधि का डिग्रीधारक है :

परंतु एक वर्ष की सदस्यता पूरी करने संबंधी शर्त प्रथम निर्वाचन की दशा में लागू नहीं होगी ।

छात्र परिषद् :

38.(1) विश्वविद्यालय के प्रत्येक महाविद्यालय में छात्र कल्याण से संबंधित विभिन्न क्रियाकलापों की बाबत, जिनके अंतर्गत क्रीड़ा, खेलकूद, नाट्यकला, वाद-विवाद, सांस्कृतिक क्रियाकलाप, आदि भी हैं, विश्वविद्यालय के प्राधिकरणों को सिफारिशें करने के प्रयोजन के लिए प्रत्येक शैक्षणिक वर्ष के लिए एक छात्र परिषद् होगी, और ऐसी परिषद् निम्नलिखित से मिलकर बनेगी :–

(i) महाविद्यालय का संकायाध्यक्ष – अध्यक्ष ;

(ii) सभी छात्रावासों के वार्डन ;

(iii) परिसर सम्पदा अधिकारी ;

(iv) संकायाध्यक्ष द्वारा नामनिर्दिष्ट पांच विभागाध्यक्ष ;

(v) छात्रावास प्रीफेक्ट ;

(vi) प्रत्येक कक्षा या वर्ष से एक छात्र जिसने पूर्ववर्ती शैक्षणिक सत्र में उच्चतम समग्र श्रेणी बिन्दु औसत (ओजीपीए) प्राप्त किया हो ;

(vii) छात्र कल्याण अधिकारी – सदस्य-सचिव ।

(2) छात्र परिषद् प्रत्येक सेमेस्टर में कम से कम एक बार अपना अधिवेशन करेगी ।

अध्यादेश कैसे बनाए जाएंगे :

39.(1) धारा 27 की उपधारा (2) के अधीन बनाए गए प्रथम अध्यादेश, बोर्ड द्वारा निम्नलिखित विनिर्दिष्ट रीति से किसी भी समय, संशोधित या निरसित किए जा सकेंगे ।

(2) धारा (27) में प्रगणित मामलों के बारे में बोर्ड द्वारा उसकी उपधारा (1) के खण्ड (ढ) में प्रगणित अध्यादेशों से भिन्न कोई अध्यादेश तब तक नहीं बनाए जाएंगे जब तक ऐसे अध्यादेश का प्रारूप विद्या परिषद् द्वारा प्रस्थापित नहीं किया गया हो ।

(3) बोर्ड को इस बात की शक्ति नहीं होगी कि वह विद्या परिषद् द्वारा खंड (2) के अधीन प्रस्थापित किसी अध्यादेश के प्रारूप का संशोधन करे किंतु वह प्रस्तावना को नामंजूर कर सकेगा या विद्या परिषद् के पुनर्विचार के लिए संपूर्ण प्रारूप को या उसके किसी भाग को ऐसे किन्हीं संशोधनों सहित जिनका सुझाव बोर्ड दे, वापस भेज सकेगा ।

(4) जहां बोर्ड ने विद्या परिषद् द्वारा प्रस्थापित किसी अध्यादेश के प्रारूप को नामंजूर कर दिया है या उसे वापस कर दिया है वहां विद्या परिषद् उस प्रश्न पर नए सिरे से विचार कर सकेगी और उस दशा में जब मूल प्रारूप विद्या परिषद् के उपस्थित तथा मतदान करने वाले सदस्यों के कम से कम दो-तिहाई और सदस्यों की कुल संख्या के आधे से अधिक बहुमत से पुन: अभिपुष्ट कर दिया जाता है तब प्रारूप बोर्ड को वापस भेजा जा सकेगा या जो तो उसे अंगीकृत कर लेगा या उसे कुलाध्यक्ष को निर्देशित कर देगा, जिसका विनिश्चय अंतिम होगा ।

(5) बोर्ड द्वारा बनाया गया प्रत्येक अध्यादेश तुरंत प्रभावी होगा ।

(6) बोर्ड द्वारा बनाया गया प्रत्येक अध्यादेश उसके अंगीकार किए जाने की तारीख से दो सप्ताह के भीतर कुलाध्यक्ष को प्रस्तुत किया जाएगा । कुलाध्यक्ष को, अध्यादेश की प्राप्ति के चार सप्ताह के भीतर विश्वविद्यालय को यह निदेश देने की शक्ति होगी कि वह ऐसे किसी अध्यादेश के प्रवर्तन को निलंबित कर दे और वह यथासंभव शीघ्र प्रस्तावित अध्यादेश पर अपने आक्षेपों के बारे में बोर्ड को सूचित करेगा । कुलाध्यक्ष, विश्वविद्यालय से टिप्पणी प्राप्त कर लेने के पश्चात् या तो अध्यादेश का निलंबन करने वाले आदेश को वापस ले लेगा या अध्यादेश को नामंजूर कर देगा और उसका विनिश्चय अंतिम होगा ।

विनियम :

40.(1) विश्वविद्यालय के प्राधिकरण निम्नलिखित विषयों के बारे में इस अधिनियम, परिनियमों और अध्यादेशों से संगत विनियम बना सकेंगे, अर्थात् :–

(i) उनके अधिवेशनों में अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया और गणपूर्ति के लिए अपेक्षित सदस्यों की संख्या अधिकथित करना ।

(ii) उन सभी विषयों के लिए उपबंध करना जिनका विनियमों द्वारा विनिर्दिष्ट किया जाना इस अधिनियम, परिनियमों या अध्यादेशों द्वारा अपेक्षित है ।

(iii) ऐसे सभी अन्य विषयों के लिए उपबंध करना, जो ऐसे प्राधिकरणों या उनके द्वारा नियुक्त समितियों से संबंधित हों और जिनके लिए इस अधिनियम, परिनियमों या अध्यादेशों द्वारा उपबंध न किया गया हो ।

(2) विश्वविद्यालय का प्रत्येक प्राधिकरण उस प्राधिकरण के सदस्यों को अधिवेशनों की तारीखों की और उन अधिवेशनों में विचारार्थ कार्य की सूचना देने और अधिवेशनों की कार्यवाहियों का अभिलेख रखने के लिए विनियम बनाएगा ।

(3) बोर्ड इन परिनियमों के अधीन बनाए गए किसी विनियम का ऐसी रीति से जो वह विनिर्दिष्ट करे, संशोधन करने या किसी ऐसे विनियम के निष्प्रभाव किए जाने का निदेश दे सकेगा ।

शक्तियों का प्रत्यायोजन :

41. अधिनियम और परिनियमों के उपबंधों के अधीन रहते हुए, विश्वविद्यालय का कोई अधिकारी या प्राधिकारी अपनी शक्ति, अपने या इसके

नियंत्रण में के किसी अन्य अधिकारी या प्राधिकरण या व्यक्ति को ऐसी शर्त के अधीन रहते हुए प्रत्यायोजित कर सकेगा कि इस प्रकार प्रत्यायोजित शक्तियों के प्रयोग का संपूर्ण उत्तरदायित्व ऐसी शक्तियों का प्रत्यायोजन करने वाले अधिकारी या प्राधिकरण में निहित बना रहेगा ।

अन्य संस्था और संगठनों के साथ सहयोग :

42. विश्वविद्यालय को, विश्वविद्यालय की अधिस्नातक और पी-एच. डी. उपाधियां प्रदान करने के लिए आंशिक अपेक्षाओं को पूरा करने हेतु सहयोगात्मक स्नातकोत्तर अनुसंधान कार्यक्रम संचालित करने के लिए किसी अनुसंधान और/या उच्चतर विद्या की शैक्षणिक संस्था के साथ परस्पर समझ ज्ञापन के माध्यम से कोई करार करने का प्राधिकार होगा ।

अनुसंधान परिषद् का गठन और कृत्य :

43.(1) कृषि और सहबद्ध विद्या शाखाओं के क्षेत्र में विश्वविद्यालय की अनुसंधान नीतियों तथा कार्यक्रमों पर साधारण पर्यवेक्षण करने के लिए विश्वविद्यालय की एक अनुसंधान परिषद् होगी । अनुसंधान परिषद् निम्नलिखित सदस्यों से मिलकर बनेगी, अर्थात् :–

(i) कुलपति – अध्यक्ष ;

(ii) विस्तारी शिक्षा निदेशक – सदस्य ;

(iii) शिक्षा निदेशक – सदस्य ;

(iv) विश्वविद्यालय के महाविद्यालयों के सभी संकायाध्यक्ष – सदस्य ;

(v) राज्य सरकार का नामनिर्देशिती जो निदेशक की पंक्ति से नीचे का न होगा – सदस्य ;

(vi) विश्वविद्यालय की अनुसंधान टीमों के सभी समन्वयक – सदस्य ;

(vii) कुलपति द्वारा तीन वर्ष के लिए नामनिर्दिष्ट दो विख्यात कृषि वैज्ञानिक – सदस्य ;

(viii) अनुसंधान निदेशक-सदस्य – सचिव ।

(2) अनुसंधान परिषद् का अधिवेशन वर्ष में कम से कम एक बार आवश्यक होगा ।

(3) अनुसंधान परिषद् के अधिवेशन की गणपूर्ति अनुसंधान परिषद् के एक

तिहाई सदस्यों से होगी ।

(4) यदि त्यागपत्र के कारण या अन्यथा कोई रिक्ति होती है तो उसे शेष अवधि के लिए भरा जाएगा ।

विस्तारी शिक्षा परिषद् का गठन और कृत्य :

44.(1) कृषि और सहबद्ध विद्या शाखाओं के क्षेत्र में विश्वविद्यालय की विस्तारी शिक्षा नीति और कार्यक्रमों का साधारण पर्यवेक्षण करने के लिए विश्वविद्यालय की एक विस्तारी शिक्षा परिषद् होगी । विस्तारी शिक्षा परिषद् निम्नलिखित सदस्यों से मिलकर बनेगी :–

(i) कुलपति – अध्यक्ष ;

(ii) अनुसंधान निदेशक – सदस्य ;

(iii) शिक्षा निदेशक – सदस्य ;

(iv) विश्वविद्यालय के महाविद्यालयों के सभी संकायाध्यक्ष – सदस्य ;

(v) राज्य सरकार का नामनिर्देशिती जो निदेशक की पंक्ति से नीचे का न होगा – सदस्य ;

(vi) कुलपति द्वारा तीन वर्षों की अवधि के लिए नामनिर्दिष्ट बुन्देलखण्ड से किसानों के प्रतिनिधि और एक महिला सामाजिक कार्यकर्ता – सदस्य ;

(vii) कुलपति द्वारा दो वर्षों के लिए नामनिर्दिष्ट विश्वविद्यालय से बाहर के दो विख्यात वैज्ञानिक – सदस्य ; और

(viii) विस्तारी शिक्षा निदेशक – सदस्य-सचिव ।

(2) विस्तारी शिक्षा परिषद् का अधिवेशन वर्ष में कम से कम एक बार आवश्यक होगा ।

(3) विस्तारी शिक्षा परिषद् के अधिवेशन की गणपूर्ति विस्तारी शिक्षा परिषद् के एक तिहाई सदस्यों से होगी ।

केन्द्रीय सिविल सेवा (पेंशन) नियम, 1972 का लागू होना :

45.(1) विश्वविद्यालय के सभी नियमित कर्मचारी पेंशन और उपदान तथा साधारण भविष्य-निधि प्रदान करने के संबंध में, केन्द्रीय सिविल सेवा (पेंशन) नियम, 1972 और साधारण भविष्य-निधि (केन्द्रीय सेवा) नियम, 1960 के

उपबंधों से शासित होंगे ।

(2) भारत सरकार द्वारा केन्द्रीय सिविल सेवा (पेंशन) नियम, 1972 और साधारण भविष्य-निधि (केन्द्रीय सेवा) नियम, 1960 में किया गया कोई संशोधन विश्वविद्यालय के कर्मचारियों को भी लागू होगा ।

(3) पेंशन से संराशीकरण के संबंध में केन्द्रीय सिविल सेवा (पेंशन का संराशीकरण) नियम, 1981 के उपबंध लागू होंगे ।

(4) कुलपति पेंशन मंजूरी प्राधिकारी और पेंशन प्राधिकार के प्राधिकारी होंगे ।

(5) पेंशन का संदाय नियंत्रक के कार्यालय द्वारा केन्द्रीयकृत और नियंत्रित होगा ।